पाश्चात्य मध्ययुगीन राजनीतिक सिद्धान्तों का इतिहास

लेखक

आर० डब्ल्यू० कार्लाइल

तथा

ए० जे० कार्लाइल

खण्ड 4

दशम शताब्दी से लेकर बारहवीं शताब्दी के बीच साम्राज्य एवं पोप पद के सम्बन्ध विषयक सिद्धान्त

लेखक

ए० जे० कार्लाइल

अनुवादक

एम० पी० राय

अध्यक्ष राजनीतिशास्त्र विभाग राजकीय महाविद्यालय [illegible]

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी

जयपुर

प्रस्तावना

भारत की स्वतन्त्रता के बाद इसकी राष्ट्रभाषा को विश्वविद्यालय शिक्षा के माध्यम के रूप मे प्रतिष्ठित करने का प्रश्न राष्ट्र के सम्मुख था। किन्तु हिन्दी म इस प्रयोजन के लिए अपेक्षित उपयुक्त पाठ्य पुस्तकें उपल घ नही होने से यह माध्यम-परिवतन नही किया जा सकता था। परिणामत भारत सरकार ने इस न्यूनता के निवारण के लिए वज्ञानिक तथा पारिभाषिक श दावली आयोग की स्थापना की थी। इसी योजना के अन्तगत १९६९ म पाच हि न्दी भाषी प्रदेशो म ग्र थ अकादमियो की स्थापना की गई।

मध्य युग म पाश्चात्य देशा मे राजनीतिशास्त्र के सिद्धाता के विकास का जो इतिहास डा ए जी कार्लाइल द्वारा लिखा गया ह वह इस विषय का प्रामाणिक एव विद्व जन समादृत ग्रन्थ ह। यह उसका चतुथ खण्ड ह। आशा ह इसमे राजस्थान के अध्येता लाभान्वित होंगे।

प्रस्तुत पुस्तक इसी क्रम मे तयार करवाई गई है। इस पुस्तक की परिवीक्षा के लिए अकादमी प्रो अम्बादत्त पत अध्यक्ष राजनीतिशास्त्र विभाग प्रयाग विश्वविद्यालय प्रयाग के प्रति आभारी है।

खेतसिंह राठौड
शिक्षा मन्त्री राजस्थान सरकार एव
अध्यक्ष राजस्थान हिन्दी ग्र थ अकादमी जयपुर

गोपीकृष्ण व्यास
निदेशक

प्राक्कथन

इस ग्रन्थ मे दसवी शताब्दी से लेकर बारहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध के बीच पोप पद एव साम्राज्य के सम्बन्ध विषयक सिद्धान्तो का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। मैंने धार्मिक एव लौकिक व्यवस्थाओ के सम्बन्धो एव विरोधो के अधिक सामान्य विषय के विवेचन का प्रयत्न नही किया है। इनके कुछ पक्षो का विवेचन इस ग्रन्थ की प्रथम एव द्वितीय पुस्तको में किया जा चुका है तथा सम्भवत इन पर हम अगली पुस्तक मे पुन विचार करेगे किन्तु मैं अपने पाठको को स्मरण दिलाना चाहता हू कि इस ग्रन्थ का विषय मध्ययुग का धार्मिक अथवा नागरिक इतिहास नही है किन्तु राजनीतिक सिद्धान्त हैं तथा हम लौकिक एव धार्मिक सत्ताओ के सम्बन्धो पर उतना ही विचार करेंगे जहाँ तक वे इन सिद्धान्तो के विकास को प्रभावित करने को प्रवृत्त होते है।

मैं वास्तव मे नही समझता कि सामान्य रूप से इन सम्बन्धो का उतना ही प्रभाव राजनीतिक सिद्धान्तो पर पडा है जितना प्राय सुझाया जाता है। मध्ययुग की महान् राजनीतिक अवधारणाए जैसे विधि की सर्वोच्चता समाज की सत्ता शासक एव शासित के बीच सांविधिक सम्बन्ध दोनो सत्ताओ के सम्बन्धो के प्रश्नो से मात्र प्रासगिक रूप से ही प्रभावित थे। तथापि मेरे विचार मे हमारे द्वारा ग्यारहवी तथा बारहवी शताब्दी मे साम्राज्य एव पोप पद के सम्बन्धो का एक सम्पूर्ण पुस्तक मे विवेचन करने का हमारा कार्य दो कारणो से उचित है। प्रथम इस कारण से कि दो सत्ताओ द्वारा जिनमे एक लौकिक एव दूसरी धार्मिक है मानव समाज के नियन्त्रण का सिद्धान्त उस विकास का प्रतिनिधित्व करता है जो प्राचीन एव आधुनिक जगत् का विशिष्ट विभेद है। दूसरे इस कारण से कि कभी कभी यह सोचा जाता है कि मध्ययुग मे धार्मिक जीवन की स्वतन्त्रता का अर्थ धार्मिक सत्ता की सर्वोच्चता समझा जाता था। मैं इस पुस्तक मे इस सम्पूर्ण विषय के विवेचन का दावा नही करता। अगली पुस्तक मे हम तेरहवी शताब्दी मे इसके विकास को प्रदर्शित करने की आशा करते है। मैने इस पुस्तक मे यह विचार करने का प्रयत्न किया कि ग्यारहवी तथा बारहवी शताब्दी के महान् सघर्ष से कौन कौन से प्रश्न उठे तथा इस समय मे सर्वोच्चता के सिद्धान्तो के स्वरूप तथा विस्तार के बारे मे हम किन निष्कर्षों पर पहुँचे।

मैं कायस कॉलेज केम्ब्रिज के श्री जेडब्रुक के प्रति आभार व्यक्त करना चाहता हू जिनने इसके प्रूफो को पढा तथा जिनके सशोधनो एव सुझावो के लिए मैं अत्यन्त आभारी हू यद्यपि इस विषय के विवेचन के अंतिम स्वरूप अथवा इसमे व्यक्त निर्णयो के लिए उनका कोई दायित्व नही है। मुझे यहाँ यह आशा व्यक्त करने की अनुमति दी जाय कि शीघ्र ही उनके द्वारा किया गया ग्रेगोरी सप्तम का अध्ययन हम सबको सुलभ हो सकेगा।

मैं प्रोफेसर आटो फान गीक के श्रेष्ठ ग्रन्थ विशेषत स्वर्गीय प्राफेसर मैटेनेण्ड द्वारा अनूदित अश के प्रति निरन्तर आभार व्यक्त करता हू। मध्ययुग के विशाल साहित्य पर काय करने का प्रयास करने वाले ही इसके चिरस्मरणीय विवेचन का महत्त्व तथा उसमे अत्यन्त प्रासगिक रूप से भी दिये गए उल्लेखो की यथाथता का अनुभव कर सकते हैं। मैं ग्यारहवी तथा बारहवी शताब्दी के विवादास्पद साहित्य के प्रोफेसर मिर्ट द्वारा किये गए श्रेष्ठ एव विस्तृत अध्ययन Die Puslizistic im Zeitalter Gregors VII के प्रति अपनी प्रशसा व्यक्त करना चाहूगा। तथा मैं कृतज्ञतापूवक मध्ययुग के धार्मिक इतिहास के एक सवश्रेष्ठ विद्वान् लाइपजिग के प्रोफेसर हाक के ग्रन्थ के प्रति आभार व्यक्त करना स्मरण रखूगा। दुर्भाग्य से जिनका इन वीरता भरे कठिन वर्षों मे देहावसान हो गया है।

ऑक्सफोर्ड दिसम्बर 1921

विषय-सूची

भाग एक

900 ई० से 1076 ई० तक धार्मिक एव राजनतिक सत्ता के सम्बन्ध मे

भाग दो

अधिष्ठापन विवाद

प्रथम अध्याय

द्वितीय अध्याय

तृतीय अध्याय

चतुर्थ अध्याय

द्वितीय अध्याय

तृतीय अध्याय

चतुथ अध्याय

भाग चार

चच एव साम्राज्य 1122 ई० से 1177 ई० तक

प्रथम अध्याय

द्वितीय अध्याय

—x—

प्रथम भाग

900 ई० से 1076 ई० तक धार्मिक एव राजनतिक सत्ता के सम्बन्ध मे

प्रथम अध्याय

धार्मिक एव राजनैतिक सत्ता की अन्योन्यातिव्याप्ति

इस ग्रन्थ के प्रथम खण्ड म हमने नवी शताब्दी क धार्मिक एव राजनतिक सत्ताधारियो के सम्बन्धो के मुख्य सिद्धाता एव विशेषताग्रो पर विचार करने का प्रयत्न किया तथा इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि यद्यपि यह स्पष्टतया सोचा गया कि इन सम्बन्धो का नियामक सिद्धान्त यह था कि प्रत्येक सत्ता अपने अपने क्षेत्र म दूसरी स पूर्णतया स्वतन्त्र एव सर्वोच्च है वास्तविकता म यह सम्बन्ध अत्यन्त जटिल थे एव यदाकदा इस सिद्धान्त से असगत दिखलाई देते थे। वास्तव म राजनतिक सत्ता धार्मिक क्षेत्र म निरन्तर अत्यधिक प्रभावशाली थी और धार्मिक सत्ता राजनतिक क्षेत्र म निरन्तर अत्यधिक नियन्त्रण करती थी। यद्यपि सिद्धान्त पर्याप्त रूप से सुस्पष्ट था किन्तु पूर्णत सिद्धान्त पर आधारित व्यवहार करना निश्चय ही अत्यन्त कठिन था। सम्राट या राजा प्राय अपने आप को ऐसी स्थिति म पाता था कि उसका कर्तव्य इस बात को देखना होता था कि चच के धार्मिक अधिकारी अपना कतव्य निर्वाह ठीक स कर रहे हैं अथवा नहीं और इसलिए यथार्थ रूप म धार्मिक विषयो म उसको अनिर्धारित होते हुए भी व्यापक अधिकार प्राप्त थे। दूसरी ओर धार्मिक अधिकारी भी अनक बार लौकिक विषयो म आदेश एव निर्देश देने म प्रवृत्त होते थे।

जनता द्वारा गृहीत सिद्धान्त सुनिश्चित एव देखने म सरल थ किन्तु दोना महान् सत्ताधारियो के वास्तविक सम्बन्ध अत्यन्त जटिल थे। तथापि समग्र रूप स यह कहना कठिन नही है कि इस जटिलता के होने पर भी दोनो सत्ताओ म गम्भीर सघष अथवा विरोध नहीं था।

इस खण्ड में हम इस बात का विचार करेंगे कि ये अपेक्षाकृत शान्त परिस्थितियाँ किस प्रकार अन्त गई तथा पोप ग्रेगोरी सप्तम (Gregory VII) के अभिषेक के वर्ष 1073 ई० से लेकर 1303 ई० में पोप बोनीफेस अष्टम (Boniface VIII) की मृत्यु तक लगभग दो सौ पचास वर्षों में पश्चिमी यूरोप साम्राज्य एवं पोप पद के महान् संघर्ष की गूंज से त्रस्त हो गया जबकि दूसरे पश्चिमी देशों में भी राजनैतिक एवं धार्मिक सत्ताओं का संघर्ष स्वरूप की दृष्टि से समानताभरा न होने पर भी स्वभावतः किसी प्रकार में कम गम्भीर नहीं कहा जा सकता। इस खण्ड में इन्नासेण्ट तृतीय (Innocent III) के अभिषेक की तिथि (1198 ई०) से आगे इस विषय पर विचार नहीं करेंगे क्योंकि उनके अधिकारी होने के पश्चात् सम्बन्ध में एक नया परिवर्तन आया जिसे तेरहवीं शताब्दी के सिद्धान्तों एवं परिस्थितियों के सन्दर्भ में ही अध्ययन करना चाहिए।

हम यह देखना है कि (1) यह महान् संघर्ष किस प्रकार प्रारम्भ हुआ (2) इस प्रश्न का यथार्थ स्वरूप एवं संघर्ष के आधारभूत सिद्धान्त क्या-क्या थे एवं (3) बारहवीं शताब्दी में शान्ति या स्थायी रूप से इसके समाधान के लिए क्या-क्या उपाय किए गए? सर्वप्रथम हम यही विचार करना होगा कि यह महान् संघर्ष कैसे प्रारम्भ हुआ क्योंकि इतिहास के अन्य स्थलों से अधिक यहाँ पर निश्चित रूप में यह कहा जा सकता है कि किसी स्थिति की अग्रगत घटनाओं अथवा कारणों का विवेचन करके ही हम किसी परिस्थिति की यथार्थ व्याख्या कर सकते हैं। इसलिए ऐसा करने के लिए हम पोप ग्रेगोरी के पदारोहण के पूर्व दसवीं एवं ग्यारहवीं शताब्दी में धार्मिक एवं राजनैतिक इन दो महान् सत्ताओं के सम्बन्धों के यथार्थ स्वरूप के विचार से प्रारम्भ करेंगे।

जब हम इस बात के इतिहास का निष्पक्षतया परीक्षण करना प्रारम्भ करते हैं तो सर्वप्रथम हमें यह तथ्य प्रभावित करता है कि यद्यपि इस विचार का कोई कारण नहीं कि किसी को इसमें सन्देह था कि धार्मिक एवं राजनैतिक सत्ताएँ विभिन्न एवं दूसरे से पूर्णतया स्वतन्त्र क्षेत्र वाली हैं[1] तथापि वास्तविक व्यवहार में राजनैतिक शासक एवं जनसाधारण निरन्तर धार्मिक विषयों की व्यवस्था में वृहद् भाग लेते थे तथा पोप एवं विशप राजनैतिक विषयों में अनेक अधिकारों का प्रयोग करते थे।

दसवीं शताब्दी में हमें राजनैतिक सत्ताधारियों एवं जनसाधारण द्वारा चर्च की परिषदों में उपस्थित होकर विचार विनिमय में योगदान तथा इनके निर्णयों को अपनी सत्ता का समर्थन प्रदान करने का निरन्तर उल्लेख मिलता है। इसका श्रेष्ठ उदाहरण आग्सबर्ग (Augsburg) में 952 ई० में हुई एक परिषद् की कार्यवाही का विवरण है। यह सभा बिशपों की सम्मति से ओटो प्रथम (Otto I) द्वारा धार्मिक विषयों एवं ईसाई साम्राज्य की दशाओं पर विचार करने के लिए बुलाई गई थी। इसमें धार्मिक विषयों में विचार के अवसर पर बिशपों ने उसको उपस्थित होने का निमन्त्रण दिया। ओटो ने वास्तव में चर्च के नियमों की उद्घोषणा में भाग नहीं लिया किन्तु वह उन पर विचार के समय उपस्थित था तथा उनके व्यवस्थापन के लिए भी पादरी उसकी सहायता की अपेक्षा करते थे।[2]

दसवीं एवं ग्यारहवीं शताब्दियों में न केवल जर्मनी में वरन् इटली में भी इसके अनेक

उदाहरण मिल सकते हैं। जान तेरहवें (John XIII) की पदावधि मे हुई विभिन्न परिषदो की रिपोर्टों मे सम्राट आटो प्रथम की उपस्थिति तथा सहमति का उल्लेख है।[3] 998 ई म पोप ग्रेगोरी पचम द्वारा बुलाई गई रोम की एक अन्य परिषद् म सम्राट आटो तृतीय को आक्सोने (Auxonne) के बिशप पद क विवादास्पद निर्वाचन पर हुई बहस मे सक्रिय रूप से भाग लेता हुआ प्रदर्शित किया गया है।[4] पुन आटो तृतीय ने पोप ग्रेगोरी पचम के साथ रोम मे हुई परिषद् की अध्यक्षता की जिसम मसबग (Merseburg) के पादरी पद एव उसके मूल गौरव की पुन स्थापना की गई।[5] सम्राट कोनाड द्वितीय (Conrad II) ने पोप जान उन्नीसवें के साथ 1027 ई मे रोम म सम्पन्न एक परिषद् की अध्यक्षता की जो एक्वीनिया के पाधिवर्माध्यक्ष (Patriarch of Aquileia) के साथ गडो के सम्बन्धो के निर्धारण के लिए बुलाई गई थी तथा उसका निणय भी पोप एव सम्राट द्वारा ही लिया गया बनाया जाता है। सम्राट कोनाड ने फ्रैंकफट म बिशपो की एक परिषद् की अध्यक्षता की थी जिसमें छोटे पादरी एव एक विशाल सख्या मे जन साधारण भी उपस्थित थे।[6]

पाविया (Pavia) म 1046 ई म हुई एक धम सभा मे हेनरी तृतीय की उपस्थिति का उल्लेख मिलता है तथा उस धम सभा म वेरोना के बिशप (Bishop of Verona) की प्राथमिकता का निणय उसके निर्देशानुसार (Praceptum) होना बतलाया गया है। 1049 ई म पोप लियो नवम द्वारा मज (Maintz) मे बुलाई गइ परिषद् की विज्ञप्ति मे पोप द्वारा हेनरी तृतीय के अपने साथ सभा मे बठने एव परिषद् द्वारा बेसन्सन (Besancon) के आच बिशप पद के सम्बन्ध मे एक विवादास्पद दावे के निणय को स्वीकृति देने का उल्लेख किया गया है। छोटे पादरी एव जनसाधारण भी उसम उपस्थित तथा अपनी स्वीकृति देते हुए बताए गए हैं।

ये उल्लेख इस बात के उदाहरण हैं कि दसवी शताब्दी के राजाओ एव सम्राटो का धार्मिक सभाओ की गतिविधियो म प्राय महत्वपूण योगदान था। यह भी कम महत्वपूण नही है कि फ्रैंकफट एव मज की पूर्वोल्लिखित परिषदो के विवरणो म जनसाधारण की उपस्थिति का भी उल्लेख है। इसके कुछ अन्य दृष्टात भी ध्यान देने योग्य हैं। पोप लियो नवम ने अपने एक पत्र म 1049 ई म उसके द्वारा राइम्स (Rheims) मे बुलाई गई परिषद् के निणयो का उल्लेख किया है जिनको उसने स्वय बिशपो की सम्मति तथा छोटे पादरियो एव जनसाधारण की स्वीकृति स लिया था।[7] कुछ वर्षों के बाद पोप निकोलस द्वितीय द्वारा गाल (Gaul) एक्वीटेन (Aquitaine) तथा गेस्कोनी (Gascony) के बिशपो को सम्बोधित एक पत्र म 1059 ई म बुलाई गई रोम की परिषद् का वणन है जिसम उसने पोप के चुनाव सम्बन्धी प्रसिद्ध नवीन आदेश दिया था तथा उस परिषद् म बिशप एबट छोटे पादरी एव जनसाधारण उपस्थित थे।[8] पुन कतिपय वर्षों क बाद 1067 ई म पोप एलेक्जेण्डर द्वितीय द्वारा क्रमोना के चच (Church of Cremona) के पादरियो एव जनसाधारण को सम्बोधित एक अन्य पत्र म ईस्टर के बाद प्रस्तावित एक परिषद् के लिए प्रतिनिधि भेजने का निमन्त्रण दिया गया है।[9] इसलिए हम यह आश्चय जनक प्रतीत नही होता है कि लेनफ्रेंक (Lanfranc) के जीवन चरित्र म इसका उल्लेख

मिलता है कि धार्मिक नियमों सम्बन्धी व्यवस्था एवं इंगलैण्ड के चर्च के आदेशों की पुनः स्थापना के लिए उसके द्वारा बुलाई गई परिषद् को पोप एलेक्जेण्डर एवं सम्राट विलियम के अधिकार से बनाया गया था तथा उसमें विशप, राजकुमार, छोटे पादरी एवं जनता के सम्मिलित होने का उल्लेख है।[10] 1076 ई. में ग्रेगोरी सप्तम द्वारा आहूत धर्म सभा अथवा रोम की परिषद् में जिसमें सम्राट हेनरी चतुर्थ को धर्म बहिष्कृत एवं पदच्युत घोषित किया गया न केवल विशप, एबट एवं छोटे पादरी ही वरन् जनसाधारण भी उपस्थित बताए जाते हैं।[11] ग्यारहवीं शताब्दी की समाप्ति के आसपास पोप अरबन द्वितीय (Pope Urban II) के दो पत्रों में हम इसी तथ्य का दूसरा उदाहरण पाते हैं जिनमें क्लिर्मोन्ट में ट्रूस के आर्च विशप के धार्मिक अधिकारों का प्रश्न उठाया गया था। इनमें वह घोषणा करता है कि उसके निर्णय जिस परिषद् में लिए गए उसमें केवल विशप एवं अन्य छोटे पादरी ही नहीं वरन् रोमन न्यायाधीश और नागरिक भी उपस्थित थे तथा निर्णय भी उनकी राय से लिए गए थे।[12]

ऐसा प्रतीत हो सकता है कि अपने आप में ऐसे वाक्य का अधिक महत्वपूर्ण नहीं है निस्सन्देह कई स्थलों पर ये केवल औपचारिक मात्र हैं किन्तु उसमें इनका महत्व कम नहीं होता वास्तव में वे इस बात को सूचित करते हैं कि दोनों सत्ताओं तथा पादरियों एवं जनसाधारण के दो वर्गों की पृथकता के सिद्धान्त को जनता द्वारा चाहे जितनी मान्यता दी जाए व्यवहार में जनसाधारण को भी सगठित चर्च सम्बन्धी सत्ता से पूर्णतया बहिष्कृत नहीं माना जाता था।

यदि इस तथ्य को ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है कि दसवीं एवं ग्यारहवीं शताब्दी में राजनैतिक शासक एवं जनसाधारण को चर्च सम्बन्धी विषयों की व्यवस्था में कुछ स्थान प्राप्त था तो उस युग के लेखों में पाए जाने वाले वे कुछ उल्लेख भी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं जिनमें पोप व दूसरे चर्च सम्बन्धी अधिकारियों द्वारा राजनैतिक विषयों में हस्तक्षेप का उल्लेख है। हम बाद में इस पर गम्भीरता से विचार करना होगा कि इसके सम्बन्ध में किए गए दावों का जब महान् संघर्ष छिड़ा यथार्थ स्वरूप क्या था? इस बीच उस समय से पूर्व इस विषय की ओर हम केवल प्रासंगिक सकेत करना चाहते हैं।

इस ग्रन्थ के प्रथम खण्ड में हम कह चुके हैं कि नवीं शताब्दी में यह प्रायः स्वीकार किया जाता था कि पोप एवं चर्च के विशप का राजाओं एवं सम्राटों की नियुक्ति में महत्वपूर्ण स्थान था।[13] जैसा कि हम कह चुके हैं कि उन निश्चित सिद्धांतों का निर्धारण अत्यन्त कठिन है जिन पर यह मान्यता आधारित थी। पोप द्वारा सम्राट की नियुक्ति के सम्बन्ध के मूल में फ्रैंक शासकों की रोमन सम्राटों के रूप में मान्यता से सम्बद्ध विशिष्ट परिस्थितियाँ थीं। सामान्यतः विशपों के बारे में यह कहना कठिन है कि उनके अधिकार किस सीमा तक उनके धार्मिक पद एवं सत्ता के प्रति आदर पर आधारित थे एवं किस सीमा तक इस तथ्य पर कि विशप लोग समाज के वे बड़े व्यक्ति थे जिनको शासक को चयन एवं प्रस्तावित करने का दायित्व प्रायः सौंपा गया था। वास्तव में यह अत्यन्त सन्दिग्ध है कि नवीं शताब्दी में वे सब तथ्य जिन पर चर्च के अधिकारियों का राजनैतिक विषयों में हस्तक्षेप आधारित था सुस्पष्ट एवं सुनिश्चित थे और यह प्रतीत होता है कि

इस विषय म वही अनिश्चितता उसके बाद के युग म भी बनी रही।

नवी शता-ी क अन्तिम वष म हम पोप जान नवम को लिखे गए मज के आच बिशप हट्टो (Hatto the Archbishop of Maintz) के नाम स प्रसिद्ध पत्र म कुछ महत्त्व पूर्ण वाक्याश प्राप्त होते हैं जिनम जमनी म लुई दी चाइल्ड (Louis the Child) के सम्राट रूप म निर्वाचन का उल्लेख है। हेट्टो चुनाव क सम्बन्ध म पोप की सम्मति की उपेक्षा का कारण बताते हुए कहता है कि उस समय जमनी और रोम के बीच की सडक मूर्तिपूजकों (Pagans) द्वारा अवरुद्ध थी। अस्तु पोप से प्राथना की गई है कि अब पुन उसमे सम्पक सम्भव हो सकने के बाद इस काय की पुष्टि की जाय।[14] यह पत्र स्पष्टतया इस ओर सकेत करता है कि पोप का इस विषय मे अधिकार इस प्रकार स मान्य था कि उसे राजी करना तथा उसकी सहमति एव समथन पाना महत्त्वपूर्ण माना जाता था। दसवी शताब्दी म जब पोप पद का गम्भीरतम अध पतन हो चुका था तब भी पोप जान द्वादश आटो प्रथम के रोम आने का वणन करता है ताकि वह उसके हाथो से मत पीटर द्वारा राजकीय मुकुट ग्रहण कर सके और यह भी घोषणा करता है कि उसने चच की रक्षा के लिए सत पीटर के आशीर्वाद स उसका सम्राट पद पर अभिषेक किया है।[15] रोडोल्फस ग्लेबर (Rodolphus Glaber) ग्यारहवी शताब्दी के पूर्वार्द्ध म स्पष्टतया इस सिद्धान्त का वणन करता है कि पोप जिसे उस पद के लिए उपयुक्त समझ एव जिसे सम्राट पद प्रदान कर उसके अतिरिक्त कोई न तो सम्राट बन सकता है न कहला सकता है।[16] एनाल्स आफ हिल्डेशीम (Annals of Hildesheim) के परिशिष्ट कत्ता न हेनरी तृतीय द्वारा अपने अबाव पुत्र के पोप एव अन्य विशपो तथा राजकुमारो द्वारा चुने जाने पर राजा बनाने का वणन किया है।[17]

इस समय दसवी एव ग्यारहवी शताब्दियो म धार्मिक एव राजनतिक दो महान् सत्ताओ की अन्योन्याश्रिति की सामग्री के उदाहरण के रूप म पर्याप्त कहा जा चुका है और यह भी बताया जा चुका है कि किस प्रकार प्राय राजनतिक सत्ता धार्मिक विषयो म हस्तक्षेप करती थी एव धार्मिक सत्ता राजनतिक विषयो म। अब हम अधिक विस्तार से उन कतिपय प्रश्नो पर विचार करेंगे जिनके सम्बन्ध म अन्तत ग्यारहवी एव बारहवी शताब्दी म महान् सघष प्रारम्भ हुआ।

सन्दभ

1 Act Conc li I T la A D 909 Mn C n l v l x Ch p l Th y q te
2 M G H Leg m Sect IV C n t 9 Con e t s A g ta 95 A D
3 M s Co c la l A P 509
4 Mans C c li vol xu p 228
5 M G H Legum Sect IV Con t 24 Con l n Roma m (998 999) 1
6 Id d 51
7 Pop Leo IX Ep stles 17
8 Pope N h l II Ep tl 71
9 P pe Al xa d II Ep stl 36
10 M g e P L ol 150 Lanfra Vita x

द्वितीय अध्याय

दसवी एव ग्यारहवी शताब्दी मे पोप का चुनाव

यदि हम गम्भीरतापूर्वक उत्तरवर्ती संघर्ष के स्वरूप को समझने का प्रयत्न करें तो हम सर्वप्रथम ओटो प्रथम से लेकर हेनरी तृतीय तक के जर्मन सम्राटो द्वारा पोपो की नियुक्ति एव पुष्टि के लिए किए गए योगदान का विचार करना पडेगा। हम यहाँ इस काल के पोपो के चुनाव की सम्पूर्ण परिस्थितियो के विस्तृत एव परिपूर्ण अध्ययन का मिथ्या दावा नही करते उसकी इतनी आवश्यकता भी नही है क्योकि उस पर अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थ पहले से विद्यमान है। फिर भी हमारे विचार मे उस युग मे सामान्यत स्वीकृत कुछ महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तो को स्वीकार करना सम्भव है तथा हम पर्याप्त निश्चिन्ततापूर्वक विवाद एव सदेह से परे महत्त्वपूर्ण स्थलो को पृथक कर सकते हैं। एक ओर तो यह निश्चित है कि दसवी शताब्दी के प्रारम्भ से लेकर ग्रेगोरी सप्तम के राज्यारोहण तक की इस सम्पूर्ण अवधि मे पोप के चुनाव मे सम्राट का स्थान ना स्वीकार किया जाता था दूसरी ओर यह भी हम देख सकते हैं कि चुनाव मे राजकीय योगदान की सीमा के बारे मे तथा किसी भी व्यक्ति द्वारा चाहे वह जनसाधारण से या पादरी पोप के ऊपर अपने अधिकार के दावे को सिद्ध करने के प्रयत्न के विषय मे गभीर सदेह भी थे।

पोप जान द्वारा 898 ई मे रोम मे बुलाई गई परिषद् की कार्यवाही का दसवा खण्ड इन परिस्थितियो का वर्णन करता हुआ माना जा सकता है जिन पर वास्तव मे दसवी शताब्दी के पोप के चुनावो मे राजकीय सत्ता का योगदान आधारित था। इस विवरण मे किसी पोप की मृत्यु होने पर उसके उत्तराधिकारी के अभिषेक के अवसर पर रोमन चर्च के विरुद्ध समावित हिंसा का भी उल्लेख है यदि सम्राट को इसकी सूचना न हो और उसके दूत उस समय घटित होने वाली हिंसा तथा लोकापवादो के निवारण के लिए वहा पर उपस्थित न हो। इसमे यह निर्दिष्ट है कि भविष्य मे बिशपो एव पादरियो द्वारा चुनाव सीनेट एव जनता के प्रस्ताव पर हो किए जाय

पोप का राजकीय प्रतिनिधियों की उपस्थिति में अभिषेक किया जाय किसी भी व्यक्ति द्वारा निर्वाचित पोप को प्राचीन मान्यताओं से भिन्न कोई प्रतिज्ञा अथवा शपथ बल पूर्वक नहीं दिलाई जाय ताकि चर्च नाजायज वाद से मुक्त रहे तथा सम्राट के लिए देय सम्मान भी कम न हो सके।[1]

मन्नेरा इस बात को स्वीकार करता है कि यद्यपि रोमन जनसाधारण के प्रस्ताव पर पोप का निर्वाचन विशपों एवं पादरियों का ही कार्य है तथापि यह चुनाव बिना राजा को सूचित किए और अभिषेक के समय उसके प्रतिनिधियों की उपस्थिति के बिना पूर्ण नहीं माना जा सकता। इसके लिए विशिष्ट कारण यह बताया गया है कि सम्राट के संरक्षण के प्रभाव में यह नियुक्ति शांति एवं स्वतन्त्रतापूर्वक हो सकती।

यहाँ हमारा उद्देश्य दसवी एवं प्रारम्भिक ग्यारहवीं शताब्दी में पोप पद के इतिहास के सम्पूर्ण ऐतिहासिक महत्त्व की समीक्षा का प्रयत्न नहीं है। यहाँ यह स्वीकार करना ही पर्याप्त है कि जब ओटो प्रथम दूसरी बार इटली आया तथा 962 ई में पोप जॉन द्वादश द्वारा सम्राट के रूप में अभिषिक्त किया गया उसने रोम के पोप पद को अत्यन्त हीन दशा में तथा रोमन सामन्तो के गुटों से नियन्त्रित पाया। जॉन द्वादश ने ओटो को सम्राट पद पर अभिषेक किया तथा जैसा बताया जाता है ज्योंही ओटो ने रोम को छोड़ा उसके विरुद्ध षडयन्त्र करना प्रारम्भ कर दिया। ओटो रोम को लौट आया। क्रेमोना के विशप ल्युटप्रांड (Luitprand) के विवरण के अनुसार उसने एक परिषद् बुलाई जिसमें इटली सक्सोनी तथा फ्रेंकोनिया के विशप गण रोम के पादरी तथा प्रमुख नागरिक उपस्थित थे। पोप पर विभिन्न प्रकार के नैतिक एवं धार्मिक अपराधों के आरोप लगाए गए तथा परिषद् ने उसे उपस्थित होने एवं उन आरोपों के विरुद्ध सफाई देने को कहा। जॉन ने इसके उत्तर में धमकी दी कि यदि उन्होंने दूसरे पोप की नियुक्ति का प्रयास किया तो वह उन्हें धर्म बहिष्कृत कर देगा। अतिरिक्त विचार विनिमय के बाद सम्राट ने परिषद् के सामने भाषण दिया कि पोप ने उसके साथ की गई शपथ को भंग किया है तथा उसके विरुद्ध शत्रुओं के साथ मिलकर षडयन्त्र किया है। पादरियों एवं जनता ने कहा कि इस अभूतपूर्व अपराध का निर्णय भी अभूतपूर्व साधनों से किया जाय पोप ने अपने लम्पट आचरण द्वारा न केवल स्वयं को ही वरन् दूसरों को भी हानि पहुँचाई है तथा माँग की कि उसे पदच्युत करके नवीन पोप का निर्वाचन किया जाय। सम्राट ने उनकी माँग स्वीकार कर ली तथा उन लोगों ने लियो को जो रोमन चर्च का प्रोटोस्क्रीनेरियस (Protoscrinarius) था एकमत से पोप चुन लिया[2] (964 ई)। यद्यपि प्रतीत होता है कि रोमन जनता एवं पादरियों की यह एकमतता केवल नाममात्र की थी क्योंकि जैसे ही सम्राट ने रोम छोड़ा जनता लियो अष्टम के विरुद्ध हो गई तथा वह भागकर सम्राट के पास चला गया। पोप जॉन द्वादश का देहावसान हो गया तथा रोमवासियों ने बेनेडिक्ट पंचम को चुन लिया। सम्राट लौटा तथा बेनेडिक्ट को वेटिकन की परिषद् में प्रस्तुत किया गया और उसे जर्मनी को निर्वासित कर दिया गया।[3]

दूसरे वर्ष (965 ई) में लियो अष्टम की मृत्यु हो गई तथा रेजिनो के अनिकन

के परिशेषकर्ता द्वारा दिया गया उसके उत्तराधिकारी के चुनाव का विवरण महत्वपूर्ण है। वह कहता है कि लियो की मृत्यु पर रोमवासियो ने एजो (Azo) जो प्रोटोस्क्रीनरियस था तथा सुत्री के बिशप मेक्सिमस को सम्राट के पास जो उस समय सेक्सोनी मे था यह कहला कर भेजा कि वह चाहे जिसे पोप नियुक्त करे। किन्तु सम्राट ने वैसा नही किया तथा स्पायस के बिशप आटगार तथा क्रेमोना के बिशप लियूजो को रोम भेजा तथा अनुमान किया जाता है कि उनकी उपस्थिति मे रोमवासियो ने नार्नी के बिशप जान को पोप चुन लिया।[1]

यह निष्कर्ष निकालना अनुचित होगा कि यह विवरण सम्पूर्ण परिस्थिति का समग्र वृत्तान्त प्रस्तुत करता है। हम इस सभावना को स्वीकार करना चाहिए कि ये घटनाए उनके वर्णनकर्त्ताओ की पद स्थिति मे अतिरजित हो सकती हैं।

आटो प्रथम एव परिषद् द्वारा पोप जान द्वादश की पदच्युति का कार्य 1049 ई० मे हनरी तृतीय एव सुत्री की परिषद् के कार्य के समान ही थे। नियो तृतीय तथा लियो चतुर्थ के स्पष्टीकरण ऐसे पूर्वोदाहरण हैं जो यह दिखलाते हैं कि चर्च के अध्यक्ष के चरित्र के विषय मे चर्च तथा सम्राट दोनो के ही हस्तक्षेप करने के दावे थे।[5] यहा यह ध्यान रखना अधिक महत्त्वपूर्ण है कि जान द्वादश के निष्कासन मे चाहे जो असगति रही हो यह *स्पष्टतया* प्रतीत होता है कि लियो अष्टम एव जान तरहवें के *निर्वाचन* के समय परम्परागत विधि का विशेषतया ध्यान रखा गया था। ल्यूटप्रान्ड के विवरण के अनुसार रोम के नागरिको एव पादरियो ने ही लियो अष्टम को चुना था तथा सम्राट ने तो केवल उनके चुनाव की सहमति दी थी। रजाना के परिशेषकर्त्ता के विवरण से स्पष्ट है कि लियो अष्टम की मृत्यु के बाद आटो प्रथम ने किसी को भी पोप पद पर स्वय नियुक्त नही किया किन्तु चुनाव का कार्य रोमवासियो को ही सौंप दिया जो सम्भवत उसके दूतो की उपस्थिति एव सहमति से किया गया हो।

इस वर्णन की पुष्टि आटो प्रथम के पोप के चुनाव सम्बन्धी *विशेषाधिकार पत्र* (Privilegium) की व्यवस्थाओ से होती है जिसका समय 962 ई० माना गया है तथा जिसकी प्रामाणिकता को सही माना गया है। इसकी व्यवस्था के अनुसार रोम के पादरी एव सामत इस बात का ध्यान रखेंगे कि चुनाव धर्म वैधानिक तथा न्यायपूर्वक हो तथा जो इस पद के लिए चुना जाय उसका अभिषेक तब तक न हो जब तक वह साम्राज्यिक प्रतिनिधियो की उपस्थिति मे वे ही घोषणाए न कर जो पोप लियो ने स्वेच्छा से की थी। यह भी कहा गया है कि रोम के निवासियो की स्वतन्त्रता मे कोई हस्तक्षेप न करे जिनको प्राचीन परम्परा एव पूज्य धर्माचार्यों के विधान के अनुसार निर्वाचन का अधिकार प्राप्त है और यह नियम सम्राट के दूतो पर भी लागू होता है।[7] ये व्यवस्थायें पायस लुई के समझौते तथा लोथयर प्रथम के रोमन सविधान (Constitutio Romana) मे उपलब्ध व्यवस्थाओ से मिलती जुलती हैं[8] और यह स्पष्टतया स्वीकार करती हैं कि निर्वाचन का अधिकार रोमवासियो का है परन्तु इस प्रक्रिया मे सम्राट को भी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

इसी शताब्दी मे कुछ समय बाद हम यह देखते हैं कि इन सवैधानिक परम्पराओ

का इतने ध्यान से पालन नही किया जाता था। सेंट ग्रन्वट के जीवन चरित्र में 996 ई में पोप ग्रगोरी पचम की नियुक्ति का विवरण उपलब्ध होना है। इसमें यह प्रतीत होता है कि जब पोप जान पन्द्रहवें की मृत्यु हुई तब ग्राटो तृतीय रवेना में था। रोम के प्रधान नागरिकों (Proceres etsenatorius or do) ने पत्र एवं दूतों को भेजकर पोप की मृत्यु की घोषणा की एवं उसके स्थान पर किसको चुना जाए इस सम्बन्ध में राजकीय निर्णय पाने की इच्छा व्यक्त की। ग्राटो तृतीय ने राजकीय गिरजाघर के एक युवक एवं विद्वान् उपस्टा ब्रूना को छाँटा जो उसका रिश्तेदार था उसे स्पष्टतया रवेना में एक मयोरीबस (maioribus) के रूप में निर्वाचित किया गया तथा उस मेंज के ग्राच विशप व ग्रन्य विशपों के साथ रोम भेजा गया जहाँ उसका सम्मान पूर्वक स्वागत हुग्रा।[9] यह प्रथा ग्रधिकाशत उससे मिलती जुलती है जिसका उदाहरण हम तब पायेंगे जब ग्रगले ग्रध्याय में विशपों की नियुक्ति का वर्णन करेंगे।

कुछ वर्षों के बाद के एक लेख में जिसकी प्रामाणिकता पर सभवत अकारण ही सन्देह किया गया है हम पाते हैं कि ग्राटो तृतीय बहुत स्पष्टतया यह दावा करता है कि उसने स्वय ही 999 ई में गेरबट (सिलवेस्टर द्वितीय) को पोप बनाया था।[1] इसका वास्तविक ग्रभिप्राय क्या है यह ग्रासानी से नही कहा जा सकता किन्तु कम से कम इसका ग्रभिप्राय यह स्पष्ट है कि ग्राटो तृतीय को उसकी नियुक्ति में ग्रपना स्वय का भाग ग्रत्यधिक प्रतीत होता था।

हमारे द्वारा उल्लिखित घटनाग्रों के सबध में समकालीन निरीक्षण एवं ग्रालोचना के रूप में हमारे पास बहुत कम सन्दर्भ हैं किन्तु यह कहना महत्वपूर्ण है कि मसवर्ग के थाटमार ने जो ग्यारहवीं शताब्दी के प्रथम चरण के बाद नही लिख रहा था वेनेडिक्ट पचम को जिसने valentiorem sibi (i e the Emperor) in Christo कहता है पदच्युति से ग्रसहमति प्रकट की है तथा यह माना है कि ईश्वर के ग्रतिरिक्त ग्रन्य किसी को भी उसकी जाँच करने का ग्रधिकार नही है।[11]

ग्राटो तृतीय की मृत्यु के बाद पोप पद सम्राट के दबाव से ग्रपेक्षाकृत मुक्त रहा परन्तु साथ ही उसका समर्थन भी जो उठ गया तथा एक बार फिर उसके बुरे दिन ग्राए क्योंकि जर्मनी के हस्तक्षेप से मुक्त होकर वह ग्रधिक ग्रसहाय रूप से स्थानीय गुटों के ग्राधिपत्य में ग्रा पड़ा तथा ग्यारहवीं शताब्दी के मध्य तक स्थिति पुन विषम हो गई। हम हेनरी तृतीय द्वारा किए गए हस्तक्षेपों का विस्तार से ग्रध्ययन नही करेंगे। यहाँ यही स्मरण रखना पर्याप्त है कि ग्रगोरी षष्ठ को हेनरी तृतीय की उपस्थिति में सम्पन्न परिषद् में पदच्युत किया गया था जो दिसम्बर 1046 ई में सुत्री में हुई थी तथा वेम्बर्ग के विशप स्वीडगर को क्लेमेन्ट द्वितीय के रूप में पोप चुना गया।[12]

इसमें सन्देह करने का कोई कारण नही कि हेनरी तृतीय का कार्य शुद्ध उद्देश्य से प्रेरित था। वास्तव में उसे पोप पद की दशाग्रों एवं स्वरूप में सुधार लाने में सफलता मिली जिनका स्थायी प्रभाव पड़ा। इसके लिए प्रयुक्त साधनों के ग्रौचित्य का प्रश्न इससे सर्वथा भिन्न है।

1047 ई में क्लेमेंट द्वितीय का देहावसान हुग्रा जबकि ग्रेगरी षष्ठ जीवित ही

था। साम्राज्य के सबसे सम्मानित विशपो म लीज का विशप वाज़ो (Wazo) था जिसका वर्णन आगे और आएगा। हेनरी तृतीय ने क्लमेंट के उत्तराधिकारी की नियुक्ति के बारे म उससे राय मागी किन्तु उसके जीवन चरित्र के रचयिता के वर्णन के अनुसार वाज़ो ने अत्यन्त नम्रता एव दृढता से उत्तर देते हुए धार्मिक पद के न्यायसगत अधिकारी के जीवित रहते हुए अन्य किसी की नियुक्ति के विरुद्ध हेनरी तृतीय को चेतावनी दी तथा धर्माचार्यों का यह मान्य सिद्धान्त बताया कि उस सर्वोच्च धार्मिक अधिकारी का निर्णय भगवान् के अतिरिक्त कोई अन्य नहीं कर सकता।[13] ऐसा प्रतीत होता है कि वाज़ो का उत्तर हेनरी तृतीय के पास तब तक नहीं पहुँचा जब तक कि ब्रिक्सेन के पोपो की दमसुस द्वितीय (Damasus II) के नाम से पोप पद पर नियुक्ति नहीं हो चुकी थी किन्तु उसका यह निर्णय बहुत महत्त्वपूर्ण है।

वाज़ो ने जो मत दृढतापूर्वक किन्तु विनम्र एव चुने हुए शब्दों द्वारा अभिव्यक्त किया था वही अधिक कठोर रूप म एक तत्कालीन फ्रेंच चर्च के पादरी की रचना म व्यक्त किया गया है। उसने सम्राट को अत्यन्त दुरात्मा बताकर उसकी निन्दा की है तथा उसे चुनौती देते हुए कहा है कि वह विचार करे कि पूर्ववर्ती सम्राटो एव राजाओं के दृष्टान्तो को ध्यान म रखते हुए उसके द्वारा एक धर्माधिकारी के सम्बन्ध म निर्णय करने के लिए बैठना कहा तक उचित है। वह यहा तक कहता है कि हेनरी तृतीय अपनी सबधी पोइतू की एग्नस (Agnes of Poitou) से निषिद्ध समागम विवाह के कारण एक साधारण आदमी का न्याय करने का भी अधिकारी नहीं है। वह कहता है कि जिस प्रकार एक साधारण आदमी पादरी के सामने अपराध-स्वीकृति करता है पादरी बिशप के सामने तथा बिशप पोप के सामने उसी प्रकार पोप केवल ईश्वर के सामने अपराध स्वीकृति करता है क्योंकि ईश्वर ने उसे अपने निर्णय के लिए सुरक्षित रखा है। वह घृणापूर्वक कहता है कि सम्राट ईसा मसीह के स्थान पर न होकर जब वह तलवार का प्रयोग एव रक्तपात करता है शैतान के स्थान पर है।[14] यह भी महत्त्वपूर्ण है कि वह फ्रेंच बिशपो की राय एव सहमति के बिना पोप के निर्वाचन का विरोध करता है तथा यह प्रतिपादन करता है कि चूकि उनका चुनाव म कोई योगदान नहीं था वे आज्ञापालन के लिए बाध्य नहीं हैं।

वाज़ो तथा इस फ्रेन्च लेखक का दृष्टिकोण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है तथा उसी सिद्धान्त का निरूपण करता है जो पहले इसी शताब्दी म जैसा कि हम देख चुके हैं मसबर्ग के थीटमार द्वारा अभिव्यक्त किया गया था। यद्यपि हम यहा पर ध्यान रखना चाहिए कि हेनरी के कार्यों की इस निन्दा से चर्च के सुधारवादी दल के प्रमुख सदस्य सहमत नहीं थे। सुधारो का सबसे प्रधान इटालियन प्रतिनिधि पीटर डेमीयन था तथा वह हेनरी तृतीय तथा उसके द्वारा धन विक्रय (Simony) जैसी तत्कालीन प्रथाओं के विरोध द्वारा की गई चर्च की सेवाओं का सर्वोच्च प्रशसक था। लियो नवम के पदावधि काल म लिखे गये एक ग्रन्थ म वह यहा तक कहता है कि इस सबध म की गई उसकी सेवाओं के कारण दैवी विधान द्वारा यह आदेशित हुआ कि रोमन चर्च उसके सकल्पानुसार व्यवस्थित हो तथा उसकी अनुमति के बिना किसी का भी

राम क धमासन क लिए निर्वाचन नहीं किया जाना चाहिए।[15]

इस काल का दूसरा सजम प्रसिद्ध सुधारक सिल्वाकेन्डिडा का पादरी कार्डिनल हम्बर्ट अपने ग्रन्थ सिमानियेकोस (Adversus Simoniacos) नामक ग्रन्थ म धर्म विक्रय क खिलाफ हनरी तृतीय द्वारा की गई चच की सेवाओं की प्रशंसा अत्यंत उत्साहपूर्ण शब्दों म करता है।[16] और यह भी ध्यान देने योग्य है कि ग्रेगोरी सप्तम भी हनरी तृतीय की प्रशंसा म सर्वोत्कृष्ट शब्दावली का प्रयोग करता है तथा उसकी और उसकी पत्नी की भूरि भूरि प्रशंसा करता है।[17]

इन विरोधी सम्मतियों क विवेचन से यह तो स्पष्ट है कि चच के सुधार के लिए सर्वाधिक उत्साही व्यक्ति भी मुख्य म हनरी तृतीय क कार्यों के सम्बन्ध म अपने निर्णय म पूर्णतया एकमत न थे।

पोप की नियुक्ति म सम्राट क योगदान क अधिकार का प्रश्न कुछ भिन्न था। यह कहना भी प्रतीत नहीं होता कि अभी तक किसी ने गम्भीरतापूर्वक राजा के उसम भाग लेने के औचित्य पर आपत्ति उठाई हो किन्तु उसके योगदान का स्वरूप अनिश्चित था। अब हम सुत्री की परिषद् के काल से लेकर पोप निकोलस द्वितीय तक इस प्रश्न क इतिहास का तथा पोप क चुनाव के सम्बन्ध म उसकी शासकीय आज्ञप्ति का संक्षेप म विवेचन करेंगे।

हनरी तृतीय ने रोम म पट्रीशियस की उपाधि धारण की थी तथा कुछ लेखक तो यहाँ तक कहते हैं कि इसके साथ पोप के चुनाव म कुछ विशेषाधिकार भी जुड़ा हुआ था।[18] जैसा हम देख चुके हैं कि क्लेमेंट द्वितीय अपने अभिषेक क दूसरे ही वर्ष 1047 ई म दिवंगत हो गया तथा बिशप का पोपो डेमसस द्वितीय के रूप म जर्मनी के सम्राट एवं उसकी सभा द्वारा सम्भवतः रोमवासियों द्वारा लिखे गए बेनेडिक्ट पष्ठ के जीवित रहते हुए किसी अन्य के चुनाव की निन्दा करने वाले पत्र के सम्राट को पहुँचने के पूर्व ही पोप पद पर नियुक्त कर दिया गया। इसलिए जब डेमसस द्वितीय की भी उसी वर्ष मृत्यु हो गई तो यह स्पष्ट हो गया कि पोप के निर्वाचन के सही ढंग का प्रश्न गम्भीरतापूर्वक लोकमानस को प्रभावित कर रहा है। टूल के ब्रूनो (Bruno of Toul) क लियो नवम के रूप म चुनाव के एक से अधिक विवरण उपलब्ध हैं। इनमें से पहला जो एनसल्म (Anselm) द्वारा लिखे गए राइम्स क चच के इतिहास म विद्यमान है वर्णन करता है कि पोप डेमसस द्वितीय की मृत्यु पर रोम वासियों ने हेनरी तृतीय को किस प्रकार से सूचित करके कहा कि उसके स्थान पर नयी नियुक्ति की जाए। सम्राट ने बिशपों और साम्राज्य के सामंतों (Optimates) की राय लेकर टूल के ब्रूनो को जो अपने चरित्र एवं विद्वत्ता के लिए विख्यात था तथा उसका अपना सम्बन्धी था इसके लिए चुना। धर्मगुरु क गौरव का अधिकार चिह्न उसे समर्पित किया गया तथा उसे रोम भेजा गया (ad haec s cumdum eccle siastione sanctiones sus i iendas)। वहाँ पहुँचने पर रोमनिवासियों ने उसका सम्मानपूर्ण स्वागत किया तथा संत पीटर के सिंहासन पर लियो नवम के रूप म उसका अभिषेक कर दिया गया।[19]

विबट (Wibert) द्वारा लिखे गए लियो नवम के जीवन चरित्र म जो कि उसके अधीन हुन का आकडीकन था अतिरिक्त तथा महत्त्वपूर्ण विवरण मिलता है। लेखक ने लियो के सम्राट हेनरी तृतीय की उपस्थिति म वाम्स नामक स्थान पर बिशपो एव पादरियो (proceres) की परिषद् द्वारा चुने जाने का वर्णन किया है। उसके अनुसार लियो ने विचार के लिए तीन दिन की अवधि मागी तथा उस अवधि म उपवास एव प्रार्थनाए करने के बाद पद को स्वीकार करने के लिए इस शर्त पर अपनी स्वीकृति दी कि सारे रोमन पादरी एव रोम निवासियो की सहमति का उसे विश्वास दिलाया जाय। वह नगे पैरो चलकर रोम आया तथा नगर म पहुँचकर उसने राजकीय चुनाव की घोषणा की परन्तु यह माग की कि रोम निवासी भी अपना इच्छा हा व्यक्त करें उसने यह कहा कि परम्परानुसार सभी सत्ताओ से पूर्व पादरियो एव जनता द्वारा चुनाव है अतएव यह विश्वास दिलाया कि यदि व उसके निर्वाचन मे सुश न हा तो वह प्रसन्नतापूर्वक अपने घर लौट जाएगा। जब उसने देखा कि व उस सर्वसम्मति से स्वीकार कर रहे हैं तभी उसने अभिषिक्त होने के लिए अपनी स्वीकृति दी।[0] इसमे हम इस सम्भावना को स्वीकार करना चाहिए कि यह वर्णन किसी सीमा तक लेखक के सिद्धान्तो से भी प्रभावित है किन्तु इस सम्भावना को स्वीकार करने पर भी यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह इस अस्वीकार करता प्रतीत नहीं होता कि पोप की नियुक्ति म सम्राट का भी योगदान है किन्तु वह रोम के पादरियो एव जनता के अधिकारो का उल्लघन अथवा अवहेलना नहीं कर सकता जो कि प्रायमिक निर्वाचक संस्था है।

लियो नवम के उत्तराधिकारी के रूप म 1054 ई० म आइक्स्टाट के बिशप गेभार्ड (विक्टर द्वितीय) की नियुक्ति का विवरण विभिन्न विवरणो न कुछ पृथक शब्दो म दिया है किन्तु यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह चुनाव स्वयं सम्राट न बिशपो एव राजसभा की राय से तथा रोमन चर्च के प्रतिनिधियो की स्वीकृति से किया था।[21]

स्टीफेन नवम (1057 ई०) के चुनाव के विषय म सम्राट की राजसभा से सलाह लेने का कोई सूत्र उपलब्ध नहीं होता किन्तु अगले वर्ष उसके देहान्त के बाद रोम के सम्भ्रान्तवर्गों ने अपना अधिकार बनाए रखने का फिर प्रयास किया तथा वल्लेत्री के बिशप को बेनेडिक्ट दशम (Benedict X) के रूप म पोप बनाया किन्तु कार्डीनलो ने उसे मान्यता देना अस्वीकार कर दिया तथा राजसभा की सहमति से निकोलस द्वितीय को सियन नामक स्थान पर चुना गया। रोमन वर्गों के इस प्रयत्न ने ही निस्सन्देह निकोलस द्वितीय को अप्रैल 1959 ई० म पोपो के चुनावो की विधि को नियन्त्रित करने वाली प्रसिद्ध आज्ञप्ति को जारी करने के लिए बाध्य किया। इसकी सबसे महत्त्वपूर्ण धाराए ये थीं—चुनावो म कार्डीनल बिशपो एव अन्य कार्डीनलों को प्राथमिक स्थान प्रदान करना आवश्यकता पडने पर रोम से बाहर पोप के चुनाव करने की स्वीकृति देना जो तुरन्त रोम म अभिषिक्त न किया जाने पर भी सम्पूर्ण पोप के अधिकार क्षेत्र की सत्ता का उपयोग कर सकता और अन्तत हेनरी एव उसके उत्तराधिकारियो के चुनाव से सम्बन्ध की स्वीकृति देना। शब्दावली अस्पष्ट होने पर भी निश्चित रूप से यह

तृतीय अध्याय

1075 ई० तक बिशपों की नियुक्ति

इस ग्रंथ के प्रथम खण्ड में हमने संक्षेप में उन सिद्धान्तों का विवरण देने का प्रयत्न किया जो नवीं शताब्दी के कैरोलिंजियन साम्राज्य में बिशपों की नियुक्ति के लिए निर्देशक सिद्धान्तों के रूप में स्वीकृत थे। जैसा की निष्कर्ष रूप में हमने बताया इन नियुक्तियों की वैधता के लिए निम्न पूर्वापेक्षाएं अनिवार्य मानी जाती थीं—उसे प्रदेश के पादरियों तथा जनता द्वारा चुनाव उसी प्रान्त के बिशपों तथा प्रमुख गिरजाघर के बिशपों की स्वीकृति और राजा की सम्मति सामान्यतः यह भी माना जाता था कि इनमें से किसी भी तत्त्व की उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए।[1] इसमें सन्देह नहीं कि उस समय व्यवहार तो प्राय कुछ अनिश्चित था किन्तु स्वीकृत सिद्धान्त स्पष्ट थे तथा उनके बारे में कोई गम्भीर विवाद नहीं था। हम अब संक्षेप में उस समय तक अर्थात् 1075 ई तक इस प्रश्न के इतिहास पर विचार करते हैं जबकि धर्माध्यक्ष की नियुक्तियों के सम्बन्ध में पोप एवं सामन्तों के बीच महान् विवाद छिड़ गया। वास्तव में इसका अध्ययन कुछ ध्यान से करना आवश्यक है यदि हम इस महान् संघर्ष का वास्तविक स्वरूप समझना चाहें तथा उसमें प्रतिनिधित्व किए गए विभिन्न दृष्टिकोणों के साथ न्याय करना चाहें और इस महान् संघर्ष के विषय में उस दोषपूर्ण एवं अनैतिहासिक विचार से बचना चाहें जो इसे केवल धार्मिक आक्रमण अथवा राजकीय अत्याचार के रूप में प्रस्तुत करता है।

यह हमें स्पष्ट प्रतीत होता है कि इस महान् संघर्ष के प्रारम्भ तक नवीं शताब्दी के साहित्य में वर्णित सिद्धान्त स्वीकार किए जाते रहे तथा कम से कम सिद्धान्त रूप में तो यह स्वीकार किया जाता रहा कि पादरियों तथा जनता द्वारा चुनाव उसी प्रान्त के बिशपों तथा प्रमुख धर्माध्यक्ष की स्वीकृति और राजा की सहमति ये सभी किसी बिशप की वैध नियुक्ति के सामान्य तत्त्व थे। इसके प्रमाणों का हम कुछ अधिक विस्तार से अध्ययन करेंगे।

हम देखते हैं कि ऐटो के एक ग्रंथ में जो कि 945 ई में वर्सली का बिशप (Vercelli) बना तथा जिसका देहावसान 961 ई में हुआ धर्माध्यक्षीय नियुक्तियों की

दशाओं को अत्यन्त स्पष्टतया वर्णन किया गया है। सिद्धान्तों के अनुसार पादरियों एवं जनता को जिसे वे सर्वोत्कृष्ट समझें चुनने का स्वतन्त्र एवं निर्बाध अधिकार होना चाहिए। इस प्रकार निर्वाचित व्यक्ति की प्रधान गिरजाघर व एवं उस प्रान्त के अन्य विशपों द्वारा सावधानी से परीक्षा की जानी चाहिए यदि वह उस किसी गम्भीर दोष से ग्रस्त पाये तो उसके अभिषेक को अस्वीकार कर दें। यदि वे उसे पद के योग्य पायें तो जिस प्रदेश में वह पद स्थित है वहाँ के राजा को उचित सूचना देकर तथा उसकी स्वीकृति से अभिषेक किया जाना चाहिए।[2]

यही सिद्धान्त ओडोरमनस की जो सेन्स (Sens) नामक स्थान पर विद्यमान सत पीटर के गिरजाघर का साधु था ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध की रचना में एक स्थल पर वर्णित है जो निर्वाचन का नियम प्रतीत होता है। सेन्स का गिरजाघर फ्रैंक्स के राजा सम्प्रान्तीय विशपों महापुरुषों छोटे व बड़े पादरियों तथा दोनों लिंगों के निष्ठावानों की स्वीकृति एवं इच्छा से विशप की नियुक्ति की घोषणा करता है।[3]

इन उद्धरणों में विशप की नियुक्ति की उचित दशाओं के विषय में उस युग के सामान्य आदर्शों का विवरण प्रतीत होता है। यथा यह सत्य है कि नियुक्ति के निर्धारक तत्वों में से किसी एक के महत्व को न्यूनाधिक विवादास्पद स्थापना की दशा में ही प्रायः इन प्रश्नों का विवेचन होता था यह इस विषय के विवेचन में किसी सीमा तक अव्यवस्था का कारण रहा है क्योंकि एक असावधान या अन्दाज विद्यार्थी के लिए इस प्रकार के उद्धरण प्रायः अन्य तत्वों की उपेक्षा करके एक तत्व के महत्व पर अधिक बल देते हैं। अतः हम इस विषय का विवेचन सावधानी से प्रारम्भ करना चाहिए।

सर्वप्रथम हम उन कतिपय व्याख्याओं पर विचार कर सकते हैं जो पादरियों एवं जनता द्वारा चुनाव के सिद्धान्त को सामान्य अथवा अनिवार्य मानने पर बल देते हैं। फ्यूरी के एबट (Fleury) ऐबो की दसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की रचना में जिसका तीसरी पुस्तक में बहुधा उल्लेख किया गया है हम चर्च तथा राज्य में चुनावों के सिद्धान्त की अत्यन्त प्रबल परिपुष्टि मिलती है। वह कहता है कि उसे तीन सामान्य (Generals) सिद्धान्तों का ज्ञान है राजा अथवा सम्राट का सम्पूर्ण साम्राज्य की स्वीकृति से विशप का नागरिकों एवं पादरियों की निर्विरोध सहमति से तथा मठाध्यक्ष का मठवासी साधु मण्डली के प्रबुद्धतर निर्णय द्वारा।[4]

इसी के साथ ही हम इस प्रश्न का और अधिक निश्चित उल्लेख फुलबर्ट द्वारा किया गया पाते हैं जो 1006 ई से 1028 ई के बीच चार्ट्रस का विशप (Chartres) था। अपने एक पत्र में उसने दृढ़तापूर्वक थियोडोसियस नामक व्यक्ति के विशप के रूप में अभिषेक में इस कारण से भाग लेना अस्वीकार किया है कि राजा को कोई अधिकार नहीं कि वह किसी व्यक्ति को किसी धर्म प्रदेश पर विशप के रूप में क्षेत्र पर इस प्रकार थोप दे कि पादरी जनता अथवा अन्य विशप स्वतन्त्र रूप से निर्णय न ले सकें। परन्तु उसके एक अन्य पत्र से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि फुलबर्ट का उद्देश्य यह निषेध करना नहीं कि विशप पद पर नियुक्ति के निर्धारण में राजा का भी समुचित स्थान है। यह पत्र किसी एविसगउडस (Avisgaudus) को लिखा गया जिसने विशप पद से त्यागपत्र दे दिया

या या अपने उत्तराधिकारी की नियुक्ति के बाद पुन अपने पद पर लौटना चाहता था। फुल्टर्ट कहता है कि उसे बसा करने का कोई अधिकार नही है क्याकि उसके उत्तराधिकारी की नियुक्ति पादरिया एव जनता के चुनाव राजा की सहमति तथा रोमन प्रधान पादरी की स्वीकृति से सेन्स के आर्च बिशप द्वारा हुई है जो उस क्षेत्र का प्रमुख धर्माध्यक्ष है।[6]

बाद मे ग्यारहवा शताब्दी मे हम पाते हैं कि चच तथा राज्य के सुधारवादियो द्वारा अत्यन्त दृढ़तापूवक पादरियो एव जनता द्वारा चुनाव के सिद्धात का समथन एव क्रियान्वयन किया गया। लियो नवम द्वारा राइम्स म 1049 ई म बुलाई गइ परिषद् मे यह व्यवस्था प्रकाशित की गई कि पादरियो एव जनता द्वारा चुनाव के बिना कोई चच पर शासन करने के लिए नियुक्त नहा किया जाए। उसी वष उसके द्वारा मेन्ज म हुई परिषद् म दो दावेदार बेसासो के आर्च बिशप पद (Besancon) के लिए उपस्थित हुए एक बर्थोल्ड जो यह दावा करता था कि उसको बरगण्डी के राजा रुडोल्फ द्वारा इस पद पर स्थापित एव प्रात के बिशपो द्वारा अभिषिक्त किया गया है तथा दूसरा ह्यू (Hugh) जो उसके विरोध म यह कहता था कि बर्थोल्ड का निर्वाचन अथवा स्वागत पादरियो अथवा जनता द्वारा नही हुआ अपितु उसने अपनी नियुक्ति रुपए के बल पर राजा से खरीदी है परन्तु वह स्वय जनता एव पादरिया द्वारा चुना गया है। परिषद् ने व्यवस्था के नियमो को ध्यान म रखकर यह निर्णय दिया कि क्याकि बर्थोल्ड चच के पुत्रो द्वारा न तो चुना गया न धम गुरु के रूप में उसका स्वागत किया गया अपितु सदा ही उसे अस्वीकृत किया गया है अत उसे अनिच्छुक जनता पर न तो थोपा जा सकता है न थोपा जाना चाहिए जबकि ह्यू जो कि जनता एव पादरिया द्वारा आर्चबिशप के रूप म निर्वाचित एव वाछित है तथा जिसने अनिन्दनीय रूप से इतने लम्बे समय तक अधिकार पद को धारण किया है शातिपूवक उसे बनाए रखे क्याकि वही सच्चा गडरिया (नेता) है जो द्वार से प्रविष्ट हुआ है तथा जो दूसरे ढग से आया है वह चोर एव लुटेरा है।[7] यह उल्लेखनीय है, कि परिषद् का निर्णय ह्यू द्वारा बर्थोल्ड पर लगाए गए धम विक्रय के आरोप के आधार पर जो कि सिद्ध नही किया जा सकता था न होकर इस आधार पर किया गया कि चुनाव म पादरिया तथा जनता के अधिकार की उपेक्षा की गई है। इसके अतिरिक्त यह और भी उल्लेखनीय है कि सम्राट हेनरी तृतीय भी जसा पिछले अध्याय म हम उल्लेख कर चुके हैं इस परिषद् म उपस्थित था तथा यह विशेषतया वर्णित है कि उसने इस निर्णय पर स्वीकृति दी।[8]

यदि इन वाक्याशा म हम इस सिद्धात पर स्पष्ट बल दिया जाता हुआ पाते हैं कि बिशप का चुनाव उस धम क्षेत्र के पादरियो एव जनता द्वारा किया जाना चाहिए तो हम दसवा एव ग्यारहवी शताब्दिया के साहित्य म ऐसे अनेक वाक्याश भी पा सकते हैं जिनकी व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है कि उनके अनुसार लौकिक शासक चाह वह राजा हो अथवा सम्राट वास्तव म धम पद पर नियुक्ति के असीमित अधिकारो से सम्पन्न था। सत उदालरिक (St Udalric) के जीवन चरित्र म जो सम्भवत दसवी शताब्दी के आखिरी वर्षों म लिखा गया था एक स्थान पर कहा गया है कि उसने सम्राट से कहा कि

उसकी अपनी मृत्यु के बाद बिशप पद जिस पर वह आसीन था उसके भतीजे अल्लबेरो (Adalbero) को प्रदान किया जाए तथा सम्राट ने वैसा करने की प्रतिज्ञा की।[9] अब हम उन वाक्यांशों पर विचार करेंगे जिनमें उसके जीवनी लेखक ने संत उदालरिक के उत्तराधिकारी की नियुक्ति की वास्तविक परिस्थितियों का वर्णन किया है इसके ही साथ यह जानना भी महत्वपूर्ण है कि लगभग स्वेच्छाचारी तरीके में सम्राट को यह अनियमित अनुरोध स्वीकार करता हुआ बताया गया है।

पुनः यह भी उल्लेखनीय है कि वेरोना का राथरियस (Ratherius of Verona) जो कि राजा की तुलना में बिशपों के उच्चतर गौरव का सबल समर्थक है तथा इस बात पर बल देता है कि राजा लोग जो बिशपों द्वारा पद पर स्थापित किये जाते हैं बिशपों को अभिषिक्त नहीं कर सकते तो भी वह राजाओं द्वारा बिशपों के निर्वाचन अथवा पद स्थापना के अधिकार का वर्णन करता है।[10]

साथ ही रोड्स्स गैवर अथवा इच्छापूर्वक धर्म विक्रय की व्यक्तिगत रूप में तथा एक भाषण द्वारा जो उसके कथनानुसार हेनरी तृतीय ने गाल तथा जर्मनी के बिशपों को दिया था निंदा करते हुए यह स्वीकार करता हुआ प्रतीत होता है कि राजा को पवित्र पदों पर नियुक्ति का अधिकार प्राप्त है।[11]

यह स्वाभाविक ही होगा यदि कोई अधिकारी इन्हें तथा इन वाक्यांशों से यह निष्कर्ष निकाले कि इस युग में धर्म पदों की अधिकांश नियुक्तियाँ लौकिक शासकों द्वारा पादरियों जनता अथवा दूसरे धार्मिक अधिकारियों की इच्छाओं का ध्यान रख बिना की जाती रही हैं तो भी वास्तव में इस प्रकार का निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए परिस्थिति के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान हमें तभी होगा जब हम यह देखेंगे कि इस प्रकार के स्पष्टतः असंगत वाक्य उस युग के कतिपय प्रसिद्धतम चर्च के अधिकारियों के लेखों में भी मिलना असम्भव नहीं।

गेबर्ट के पत्र व्यवहार में जो बाद में पोप सिल्वेस्टर द्वितीय हुआ हम ऐसे वाक्य पा सकते हैं जो चर्च के पदों पर नियुक्ति के सभी तरीके के किसी भी मत का समर्थन करने के लिए उपयोग किए जा सकते हैं। राइम्स के आर्च बिशप अडेलबेरो के नाम से आटो द्वितीय की विधवा रानी थियोफेनी को लिखे जाने वाले एक पत्र का प्रारूप प्रतीत होने वाले एक लेख में उसमें कहा गया है कि यदि कोई बिशप पद रिक्त हो तो किसी ऐसे व्यक्ति की उस पर नियुक्ति न करें जिसकी सिफारिश आर्च बिशप न करता हो तथा विशेषतया गेबर्ट को एक ऐसा पद प्रदान कर। दूसरे पत्र में जो उसी आर्च बिशप के नाम से लिखा गया है अडेलबेरो राजा द्वारा प्रदत्त बिशप पद को स्वीकार करने की अनुमति भतीजे को प्रदान करता हुआ दिखाई देता है।[13] पुनः एक अन्य पत्र में जो सम्भवतः ट्रीयर के आर्च बिशप के नाम से लिखा गया है वह वरदुन की जनता की इस बात के लिए निंदा करता है कि उसने एक अन्य अडेलबेरो को बिशप मानना अस्वीकार कर दिया है जो सम्राट द्वारा प्रांत के बिशपों की स्वीकृति एवं सहमति से नियुक्त किया गया था।[14] आटो तृतीय के नाम से लिखे गए एक दूसरे पत्र में फिर राजा को यह कहता हुआ बतलाया गया है कि उसने कापुआ में विद्यमान संत विसेंट के मठ को किसी साधु को प्रदान कर

दिया है ।[15]

यदि हम केवल इन वाक्याशा से ही निष्कर्ष निकालें तो स्वाभाविक रूप से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचेगे कि गेबट धार्मिक पदो पर नियुक्ति को लौकिक सत्ताधारियो का अधिकार मानता था तथा अधिक स अधिक उसमे सम्प्रान्तीय बिशपा क अधिकारा को केवल थोडा-सा महत्त्व दता था । किन्तु जब हम उसके पत्रो की गम्भीरतर परीक्षा करत हैं तो हम पात हैं कि अन्य अवसरो पर वे पूर्णतया एक भिन्न मत का प्रतिनिधित्व करत हैं । राइम्स के मठ के भिक्षुओं के नाम से फ्लूरी के साधुओ को लिखे गए एक अन्य पत्र म वह ऐस एक व्यक्ति के प्रति क्रोध एव घृणा व्यक्त करता है जो केवल राजकीय नियुक्ति के आधार पर एक मठ के लिए दावा प्रस्तुत करता है ।[16] पुन 989 ई मे आनल्फ के राइम्स क आर्च बिशप चुने जाने की घोषणा के अभिलेख मे प्रान्त के बिशप यह कहत हुए बताए गए हैं कि वे सभी पादरियो व जनता की राय से तथा सभी राजाओ की सहमति से उसे अपना अध्यक्ष चुनत हैं ।[17] उन्ही बिशपों के एक पत्र म जो स्वय गेबट के आनल्फ के पदच्युत किए जाने के बाद वर्जी की परिषद् द्वारा 991 ई मे राइम्स के आर्च बिशप चुन जाने की घोषणा करता है जनता द्वारा निर्वाचन की आवश्यकता के यथार्थ स्वरूप के बारे म एक मनोरजक वाद विवाद है । वे कहत हैं कि आनल्फ को उनके द्वारा जनता की माँग के प्रभाव म चुना गया था क्योकि जसा धर्म-ग्रन्थ कहत हैं जनता की आवाज ईश्वर की आवाज है तथा शास्त्रानुसार बिशप के चयन मे पादरियो एव जनता की इच्छा एव अभिलाषा से चुनाव किया जाना आवश्यक है । वे कहत हैं कि व नही समझत थे यह बात सदा सच नही होती कि जनता की आवाज ईश्वर की आवाज है और इसीलिए सभी पादरियो एव जनता की आवाज को बिशप के चुनाव के लिए आवश्यक मानन के बजाय केवल उन्ही की राय आवश्यक है जो कि सरल चित्त एव अदूषित हो । वे धर्मपिताओ को यह कहत हुए उद्धृत करत हैं कि बिशप का चुनाव अनियन्त्रित भीड द्वारा न किया जाए किन्तु वह बिशपो के ही द्वारा हो ताकि जिसका अभिषेक किया जा रहा है उसकी वे परीक्षा कर सकें । अत वे राइम्स प्रात के बिशप राजाओ ह्यू तथा राबट की सम्मति और स्वीकृति से तथा जनता एव पादरिया की सहमति से जो कि देवताओ के अपने हैं घोषणा करत हैं कि साधु गेबट को उनके द्वारा अपना आर्च बिशप चुन लिया गया है ।[18]

जब हम इन सभी वाक्याशो को सम्मुख रखत हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि गेबट इससे सुपरिचित था कि बिशपो एव मठाध्यक्षा का नियुक्त लौकिक सत्ता क स्वच्छाचारा निर्णय का विषय नही है । किन्तु इस नियुक्ति म उस धर्म-क्षेत्र की जनता के चाहे वे पादरी हो या सामान्य जनता तथा बिशपा की नियुक्ति म प्रान्त क बिशपो तथा मठाध्यक्षो की नियुक्ति के विषय म मठ के साधुओ के न्यायोचित एव वधानिक अधिकार है ।

गेबट का पत्र व्यवहार इस प्रकार दसवी तथा ग्यारहवी शताब्दियो के लेखको के अवसरिक वाक्याशा की व्याख्या करत समय अत्यन्त सावधानी की आवश्यकता बताने वाला एक उदाहरण हो सकता है तथा पीटर डेमियन की रचनाए इसे बहुत स्पष्ट कर देती हैं कि ग्यारहवी शताब्दी के तीसरे चतुर्थांश म सुधारवादी दल का सबसे प्रसिद्ध

प्रतिनिधि भी उन तत्वों की जटिलता को स्वीकार करता था जो एक न्यायसंगत तथा सुव्यवस्थित धार्मिक नियुक्ति के लिए आवश्यक है। इस समय चर्च धर्म विक्रय के अपराधों को दृढ़ता से दंड देने के लिए सजग था इस प्रश्न पर हम कुछ समय बाद विस्तार से विचार करेंगे और चर्च के सुधारक सदस्य जैसे पीटर डेमियन इस दोष की निरन्तर निंदा करते रहते थे तथा इसके दमन के लिए कठोरतम उपायों के प्रयोग करने का प्रतिपादन करते थे किन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि वे लौकिक सत्ताधारियों द्वारा धार्मिक पदों पर नियुक्ति में योगदान के औचित्य को अस्वीकार अथवा उस पर सन्देह करते हों।

उदाहरणार्थ पीटर डेमियन के एक लघुतर प्रबन्ध में अत्यन्त दृढ़तापूर्वक मनुष्यों को राजकीय पदों के प्रशासन में की गई सेवाओं के लिए बिशप के कार्यालय के अन्तर्गत शाही या राजकीय गिरजों के छोटे पादरी के रूप में नियुक्ति करने की प्रथा पर आक्रमण किया गया है तथा राजकुमारों एवं अन्य सभी से जिनको धार्मिक पदों पर नियुक्ति का अधिकार है अनुरोध किया गया है कि उनका यह कर्तव्य है कि वे यह याद रखें कि उनको अपने अधिकारों का प्रयोग स्वेच्छाचारी अथवा अस्थिर ढंग से नहीं करना चाहिए।[19] वह उनको अधिकारों के दुरुपयोग के विरुद्ध चेतावनी देता है किन्तु वह यह नहीं कहता कि उनका अधिकार न्यायोचित नहीं। दूसरे स्थानों पर फाएन्जा के (Faenza) पादरियों एवं जनता को लिखे एक पत्र में वह बहुत स्पष्टतया उनके बिशप को चुनने के अधिकार की तथा उसकी नियुक्ति में पोप के भी भाग को स्वीकार करता है किन्तु वह उनकी इसके लिए प्रशंसा करता है कि उनके द्वारा राजा के आने तक चुनाव नहीं करने का निश्चय किया गया था।[20] परमा के कडेलुअस (Cadelous of Perma) को लिखे गए एक पत्र में जो कि एलक्जेण्डर द्वितीय के विरुद्ध 1061 ई० में जर्मन और लेम्बार्ड बिशपों की एक धर्मसभा द्वारा होनोरियस द्वितीय (Honorius II) के रूप में पोप पद के लिए चुना गया था पीटर कुछ सीमा तक अनियन्त्रित शब्दों में रोमन चर्च की इच्छा के बिना रोमन धर्माधिकार को पाने के प्रयत्नों के लिए उसकी धृष्टता की निन्दा करता है। यदि सेनेट छोटे पादरियों तथा जनता को वह छोड़ दे तो भी उस कम से कम कार्डीनल बिशपों का स्थान तो स्वीकार करना ही चाहिए जो कि पोप के निर्वाचन में प्रमुख स्थान रखते थे। धर्मवैधानिक सत्ता का यह आदेश था कि छोटे से गिरजाघर का पादरी भी इसका निर्णय स्वतन्त्र रूप से कर सके कि उसस ऊपर के पद पर किसे नियुक्त किया जाए। वह पोप पद के उचित निर्वाचन के प्रमुख तत्त्वों का सम्मिश्र विवेचन भी करता है। वह कहता है कि कार्डीनल बिशपों का प्रथम स्थान है उसके बाद सामान्य रूप से पादरियों और तीसरे स्थान पर जनता की स्वीकृति आती है। अन्त में इस पर तबतक प्रतीक्षा की जाएगी जबतक कि राजकीय सत्ता की राय न ली जाय यदि जैसा कि एलक्जेण्डर द्वितीय के चुनाव में हुआ था परिस्थितियाँ ऐसी न हों कि प्रतीक्षा करना खतरनाक हो।[21] इस पत्र के शब्द पोप के चुनाव के सम्बन्ध में पोप निकोलस द्वितीय के नए विधानों की ओर उल्लेख करते प्रतीत होते हैं तथा उससे हम इस तथ्य के उदाहरण के रूप में उद्धृत करते हैं कि पीटर डेमियन बिशप पद के निर्वाचनों में पादरियों

एव जनता दोना के अधिकारो तथा राजा और सम्राट के सम्मति देने के अधिकारो को भी स्वीकार करता था।

सम्भवत इस युग के धार्मिक पदो पर नियुक्तियो के सिद्धान्ता का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण चुनावो क उन कतिपय विवरणो मे उपलब्ध होगा जो कि सुरक्षित रखे गए हैं। सबसे पहला जिस पर हम ध्यान देंगे वह सत उल्लारिक के जीवन चरित्र म सुरक्षित है जिसका हम पहले ही उल्लेख कर आये है। उससे हम पता चलता है कि उसकी मृत्यु के बाद उस बिशप धम प्रदेश म सम्राट को प्रतिनिधि भेज गए जो बिशप के धम दण्ड को अपने साथ लेकर गए। कोई काउन्ट बर्खार्ट (Burchardt) उनको रोकने म सफल हो गया तथा उसन उनको यह कहकर समझाया कि सम्राट न निश्चय किया है कि उसका पुत्र बिशप बने। प्रतिनिधि इस बात से परिचित बताए गए है कि उसे चुनना अथवा न चुनना उनके अधिकार म है अत मे उन्होने वैसा ही किया तथा अपने चुनाव निर्णय पर सम्राट की पुष्टि कराने के लिए राजसभा को रवाना हो गये।[2]

सत पीटर के मठ के उत्तराधिकार की परिस्थितियो क वर्णन से जो चार्ल्स के फुलबट क द्वारा दिया गया है इसकी तुलना की जा सकती है। जब यह मठाधीश मरणासन्न था मेगनाड नामक व्यक्ति चाटम क सामन्त थियाबाल्ड के पास मठाधीश पद पर नियुक्ति के लिए गया। काउन्ट ने उस पुन साधुओ क पास भेज दिया और यह इच्छा व्यक्त की कि वे उसका मठाधीश के रूप म स्वागत करें। किन्तु उनके द्वारा प्रत्युत्तर दिया गया कि तब तक कोई मठाधीश नही हो सकता जबतक पहला मठाधीश जीवित है या वह मठ के सदस्यो द्वारा निर्वाचित नही ह। कुछ समय बाद जब मठाधीश की मृत्यु हो गई तो साधुओ न निर्णय किया कि वे मेगेनाड को मठाधीश बनाना नही चाहते और सामन्त के पास अपने प्रतिनिधियो को मठाधीश की मृत्यु का समाचार देने तथा नया चुनाव कराने के लिए उसकी अनुमति लेने को भेजा। साधुओ म से दो व्यक्तिगत रूप स उस सामन्त के पास चले गए तथा उसे बताया कि उनके साथियो न मगनाड को चुन लिया है तथा उसने उनकी अनुरक्ति से सन्तुष्ट होकर अधिकार दण्ड उनको तुरत सौप दिया। दूसरे साधु इस पर बहुत क्रुद्ध हुए तथा उन्होंने सामन्त का लिखा कि उनके द्वारा मेगेनाड निर्वाचित नही हुआ है किन्तु उसन उनको विवश किया कि वे उसको उस पद पर स्वीकार करें।[23]

केम्बराई (Cambrai) क बिशप सत लाटबट के जीवन चरित्र म हम एक अन्य चुनाव का रोचक एव विस्तृत विवरण पाते है। पद के रिक्त होने पर उसे पादरियो एव जनता द्वारा बिशप पद के लिए चुना गया तथा वह एव कम्बराई चच के प्रतिनिधि हेनरी तृतीय की राजसभा मे पिछले बिशप की मृत्यु की और लीटबट के निर्वाचन की सूचना देने के लिये भेजे गये। हेनरी न घोषणा की कि वह लीटबट को केम्बराई का बिशप चुनने म उनसे सहमत है। प्रान्त क बिशपो की सहमति से फिर यह प्रस्ताव राइम्स के आर्च बिशप के पास भेजा गया जो वध अधिकारत अधिधर्माध्यक्ष था तथा उसने अपनी स्वीकृति दे दी।

इन वर्णनो स अधिक महत्वपूर्ण लीज क बिशप वाज़ो की नियुक्ति स सम्बद्ध घटनाओ का अत्यन्त विस्तृत वर्णन है। 1041 ई म बिशप निथार्ड (Nithard) की मृत्यु के बाद

अपनी अनिच्छा के बावजूद उसे निर्विरोध रूप से चुना गया था। उसने कहा कि उसका चुनाव राजा को अप्रिय होगा तथा अनुरोध किया कि वे उसकी इच्छा जानने तक प्रतीक्षा करें किन्तु उसके विरोध को अस्वीकार करते हुए उसे चुन लिया गया तथा रेटिस्बन (Ratisbon) को भेज दिया गया जहाँ उस समय हेनरी तृतीय था। वाजो के वहाँ पहुँचने पर लीज के गिरजाघर के पत्र के साथ-साथ पादरी का दण्ड भी राजा को सौंप दिया गया। दूसरे दिन राजा ने उस विषय पर राजभवन के राजकुमारों एवं बिशपों से विचार विमर्श किया। उनमें से कुछ ने यह विचार प्रकट किया कि यह चुनाव राजा की सहमति बिना हुआ है अतः अस्वीकार कर दिया जाय तथा यह भी अनुरोध किया कि बिशप का शासी गिरजे के पादरियों में से ही चुना जाय जहाँ वाजो ने कभी सेवा नहीं की थी। इन व्यक्तियों का मत स्वीकृत हो जाता यदि कोलोन का आर्चबिशप हर्मान तथा बामबर्ग का बिशप बरनो हस्तक्षेप नहीं करते जिनके द्वारा अन्ततः हेनरी को वाजो के चुनाव को स्वीकार करने के लिये मना लिया गया।[1]

इन विवरणों में सम्भवतः हम इस युग के नियुक्ति के सामान्य सिद्धान्तों एवं तरीकों को पा सकते हैं। धर्म क्षेत्र अथवा मठ के पादरी एवं जनता चुनाव के अधिकार का दावा करते थे किन्तु राजा को भी अपनी स्वीकृति देनी होती थी। हम देख सकते हैं कि जिन इन अधिकारी व्यक्तियों ने चुना उस अधिकार दण्ड के साथ राजा के पास भेजा गया तथा यदि उसने उसे स्वीकार कर लिया तो उस पद पर उसे नियुक्त कर दिया गया। यदि राजा उनके चुनाव से सन्तुष्ट नहीं होता तो वह न केवल अपनी सहमति देना ही अस्वीकार करता अपितु स्वयं दूसरी नियुक्ति कर सकता था। इस प्रकार नियुक्त व्यक्ति को फिर उस प्रदेश के अधिधर्माध्यक्ष के पास भेजा जाता था क्योंकि यह अधिकार प्रतिष्ठापित था कि उससे तथा बिशपों से नवीन अधिकारी के अभिषेक के पूर्व परामर्श किया जायगा।

अतः में यह देखना भी उचित होगा कि दसवीं एवं ग्यारहवीं शताब्दियों में अनेक अवसरों पर बिशपों के चुनाव में पोप ने भी महत्वपूर्ण भाग लिया है। पोप जान अष्टदश द्वारा बवेरियन जनता एवं पादरियों से निर्वाचित होने पर साल्जबर्ग (Salzburg) के आर्चबिशप की नियुक्ति का वर्णन उपलब्ध होता है।[25] पोप ग्रेगोरी पंचम को आलफ नामक व्यक्ति को आवसोने के बिशप पद पर नियुक्ति के हेतु सम्राट की आज्ञा बिशपों के निर्णय तथा उस धर्म-क्षेत्र के पादरियों एवं सम्मानीय व्यक्तियों की स्वीकृति एवं मान्यता की पुष्टि एवं उससे सहमति रखते हुए वर्णन किया गया है। बेनेडिक्ट द्वितीय पादरियों जनता और राजकुमारों द्वारा सालर्नो के आर्चबिशप के निर्वाचन को सपुष्ट करता है।[26] एलेक्जेण्डर द्वितीय कितना विशिष्ट द्वारा ल्यून के आर्चबिशप की नियुक्ति को औपचारिक सहमति देता है[27] तथा जैसा हम बाद में विचार करने का अवसर प्राप्त होगा हिल्डेब्राण्ड की मन्त्रणा से पोप ने यह भी माँग की कि मिलन के आर्चबिशप पद के लिये कोई भी चुनाव तबतक वैध नहीं है जबतक पोप उसकी स्वीकृति न दे।[28] धार्मिक चुनावों में पोप की स्थिति का तर्काधार वास्तव में क्या था इस पर हम यहाँ विचार नहीं कर सकते किन्तु उसके इन उदाहरणों की समीक्षा महत्वपूर्ण है।

चतुर्थ अध्याय

लौकिक एव धार्मिक सत्ताओ की सापेक्ष गरिमा

यह स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त कहा जा चुका है कि सम्भवत दसवी एव ग्यारहवी शताब्दियो म दो महान् सत्ताओ की सापेक्ष स्थिति को निर्धारित करने वाले कतिपय सामान्य सिद्धान्तो को प्रत्येक व्यक्ति स्वीकार करता था तथापि प्रत्येक सत्ता के यथार्थ क्षेत्र का वास्तविक परिसीमन कुछ अनिश्चित तथा अस्थिर था। लौकिक सत्ता के अपने धार्मिक दायित्व थे *तथा धार्मिक सत्ता के राजनैतिक दायित्व थे जबकि अनेक धार्मिक विषयो के* निर्देश एव नियत्रण म ईसाई जनता अर्थात् जनसामान्य का अनिर्धारित किन्तु वास्तविक स्थान था। इस युग की कुछ अवधारणाओ पर जो उन विवादो के अविकसित स्वरूप के उदाहरण हैं, जिन पर बाद म सघर्ष केन्द्रित हुआ तथा उन पर हुए चर्च के कुछ महान् सदस्यो के निर्णयो पर अधिक ध्यान देना उपयोगी होगा।

हम इस प्रकार के वाक्याश पा सकते हैं जो बहुत स्पष्ट रूप म लौकिक सत्ता की तुलना म आध्यात्मिक सत्ता के उच्चतर गौरव पर बल देते हैं। हम पिछले पुस्तक खण्ड म कई बार दसवीं शताब्दी के रोचक किन्तु विचित्र बिशप वेरोना के राथरियस का उल्लेख कर चुके हैं। उसके लेखो म हम राजा के पद की तुलना म अपने पद एव स्थिति के उच्चतर होने के विश्वास की निश्चित अभिव्यक्ति पाते हैं। वह इटली के राजा ह्यू के प्रभाव से वेरोना का बिशप बना था परन्तु उसके भगदन के कारण कुछ समय के लिये पाविया म बन्दी बना लिया गया था। प्रलाक्विओरियम (Praeloquiorium) नाम से प्रसिद्ध उसके ग्रन्थ म उसने निस्सकोच रूप से राजा का वर्णन करते हुए उसे *बिशपों का सम्मान* करने की चेतावनी दी है और उसे यह स्मरण दिलाया है कि वे उसके ऊपर नियुक्त किये गये हैं न कि वह उनके ऊपर। वह कान्सटेन्टाइन के बारे म रुफनस की कथा तथा नाइस की परिषद् म बिशपों की उपस्थिति म उसकी विनम्रता का उद्धरण देता है।[1] वह दावा करता है कि ईश्वर के अतिरिक्त अन्य किसी के द्वारा बिशप के बारे म विचार नहीं किया

जा सकता[2] तथा बिशप राजा से उच्चतर स्तर पर है क्योंकि राजाग्रो को बिशपो ने बनाया है जबकि बिशप राजा द्वारा नियुक्त नही होता ।[3]

पुन पोप सिल्वेस्टर द्वितीय (गेवट) के नाम से प्रसिद्ध एक सन्दर्भ ग्रन्थ म बिशपो को यह स्मरण रखने का अनुरोध किया गया है कि उनकी गरिमा की तुलना किसी से भी नही हो सकती तथा बिशप के किरीटो की तुलना म राजाग्रो के मुकुट वसे ही हैं जसे सोने की तुलना म सीसा और राजा तथा राजकुमार पुरोहितो को सिर झुकाते हैं तथा उनकी ग्राज्ञाग्रा का ग्रादर करते है ।[4]

इस सिद्धान्त का सबसे महत्त्वपूर्ण एव प्रबल प्रतिपादन सम्भवत लीज के बिशप वाजो पर जिसका हम ग्रनक बार उल्लेख कर चुके हैं ग्रारोपित शब्दो म पाएँगे । उसका जीवनी लेखक वर्णन करता है कि किस प्रकार एक ग्रवसर पर सम्राट हेनरी तृतीय की राजसभा म उपस्थित होने पर उसने ग्रपने लिए एक ग्रासन की माग की क्योंकि यह उचित प्रतीत नही होता कि पवित्र विलेपन से ग्रभिषिक्त व्यक्ति का समुचित सम्मान न हो । सम्राट ने कहा कि उसे भी पवित्र तेल से सिंचित होने के कारण सत्ता प्राप्त हुई है किन्तु वाजो ने उत्तर दिया कि जो यह ग्रभिषेक उसन प्राप्त किया है वह पुरोहित क ग्रभिषेक स बहुत भिन्न तथा हीनतर है क्योंकि वह मृत्यु की शक्ति का चिह्न है जबकि पुरोहित का ग्रभिषेक जीवन की शक्ति का ।[5]

उन दिनो म भी जबकि लौकिक सत्ता की तुलना म ग्राध्यात्मिक सत्ता की उत्कृष्टता के दावे जसा हम देख चुके हैं कितने प्रबल थ हम सावधानी से यह ध्यान रखना चाहिए कि *इसका ग्रभिप्राय यह कदापि नही कि लौकिक विषयो म भी धार्मिक व्यक्ति लौकिक* सत्ता क ग्रधीन नहा थ । बडे पादरी जसे, बिशप एव बडे बडे मठो के मठाधीश दसवी शताब्दी के ग्रत तक प्राय सभी के सभी सम्राट या राजा क या किसी बडे सामन्त के जागीरदार थे तथा इस रूप म य उनक प्रति निष्ठा रखते थ तथा उनके सामन्ती पद के प्रति सम्मान के साथ-साथ सामन्ती व्यायालयो क ग्रधिकार क्षेत्र म ग्राते थे ।

हम ऊपर व शब्द उद्धत कर चुके हैं जिनम पोप सिल्वेस्टर द्वितीय के रूप म गेवट ने राजा की तुलना म बिशपो की उच्चतर गरिमा का वर्णन किया है किन्तु साथ ही यह भी ध्यान देना महत्त्वपूर्ण ह कि उसी गवट न जब वह बोबियो का मठाधीश था कहा है कि वह किसी समय वास्तव म स्वतन्त्र था परन्तु ग्रब वह सम्राट का सवक है ।[6] पुन सम्राट कोनाड प्रथम क जीवन चरित्र म विपो न लोम्बार्डी के बडे सामन्तो क विरुद्ध वेलवेसॉरेस्स (Valvassores) क विद्रोह का वर्णन करते हुए उल्लेख किया है कि उसने लोम्बार्डी क तीन बिशपो को पकड लिया तथा निवासित कर दिया । वह कहता है कि इससे ग्रनक व्यक्ति क्रुद्ध हो गय कि उसन बिना विचार किये इसा क पुरोहितो को दण्डित किया तथा वह विशेषतया कोनाड क पुत्र हेनरी का (जो बाद म हेनरी तृतीय हुग्रा) उल्लेख करता है जो ग्रपन पिता क काय स बहुत नाराज था । यदि न्यायिक निर्णय द्वारा ग्रपराधी ठहराया जाने क बाद उनको सजा दी जाती तो उनके प्रति ग्रादर का कोई ग्रौचित्य नही था किन्तु ऐसे निर्णय सुनाये जाने स पूर्व वे पुरोहितो क योग्य सम्मान क पात्र थ ।[7] उचित न्यायिक तरीके को ग्रपनाय बिना बिशपो के खिलाफ कोनाड की कार्यवाही की

कठोर अस्वीकृति केवल इस तथ्य को ही अत्यन्त स्पष्टतया सिद्ध करती है कि बिशप सम्राट के विरुद्ध अपराधों के लिये उचित न्यायालयों द्वारा ही दण्ड के पात्र होने थे।

इसको और अधिक बल पूर्वक नीज व वाजो के जीवन चरित्र म स्पष्ट किया गया है जिसका हम पहले अभी अभी उल्लेख कर चुके हैं। रेवन्ना के आर्चबिशप वीगर पर अनेक धार्मिक अनियमितताओं के आरोप लगाये गये थे तथा उस सम्राट के न्यायालय म बुलाया गया था और यह मामला बिशपों को सौंप दिया गया। उनमे वट्टा हिचकिचाहट था किन्तु वाजो ने घोषणा की कि एक अधिकारी बिशप का निर्णय एक उत्तरी बिशप नहीं कर सकता। अन्त मे अपनी आज्ञा के नाम पर जब सम्राट ने सार मामलों म उसम अपनी राय देने को कहा तो उसने उत्तर दिया कि बिशपों के लिए पोप की आज्ञा एव सम्राट के प्रति निष्ठा मान्य है उनको लौकिक विषयों म सम्राट को जवाब देना होता है किन्तु धार्मिक विषयों म व पोप के प्रति उत्तरदायी हैं इसलिये यदि रेवन्ना के आर्चबिशप ने धार्मिक व्यवस्था के विरुद्ध कोई अपराध किया है तो इसका निर्णय केवल पोप ही कर सकता है किन्तु उसने यदि सम्राट द्वारा सौंपे गये नागरिक विषयों म कोई असावधानी या निष्ठाहीनता पूर्ण व्यवहार किया है तो निस्सन्देह सम्राट उसका निर्णय कर सकता है।[8]

अपने देश न धार्मिक सत्ता का स्वायत्तता बनाये रखने के लिए वाजो की दृढता स्पष्ट है किन्तु लौकिक विषयों म बिशपों के लौकिक सत्ता के अधीन होने के विषय म भी उसका निर्णय उतना ही स्पष्ट है।

यदि हम संक्षेप म पुन पीटर डेमियन के दृष्टिकोण पर विचार करे जिसके बारे म हम अनेक बार उल्लेख कर आये हैं तो सम्भवत यह लौकिक और धार्मिक सत्ताओं के सम्बन्धा और स्वरूप के बारे म उस समय मनुष्यों की धारणा की जटिलता पर अधिक स्पष्टतापूर्वक प्रकाश डाल सकता है। जैसा कि हम कह चुके हैं वह ग्यारहवीं शताब्दी के तृतीय चतुर्थांश म चर्च की व्यवस्था और अनुशासन म सुधार लाने का सबसे अधिक उत्साही एव निश्चयी प्रतिपादक था किन्तु साम्राज्य तथा पोप पद म सघर्ष के खुले रूप म छिड़ने से पहले ही उसका देहावसान हो गया।

उसके लेखों से ऐसे पत्राश उद्धृत करना बहुत सरल है जो यदि सन्दर्भहीन रूप से ग्रहण किये जाए तो यह इंगित करते प्रतीत होते हैं कि उन दो महान् दलों म से जिनम यूरोप शीघ्र ही विभाजित होने वाला था किसी म भी उसको रखा जा सकता है। जैसा हम देख चुके हैं धार्मिक नियुक्तियों के तरीकों म सुधार लाने के उत्साह के बावजूद उसने स्पष्टतया उनके सम्बन्ध म लौकिक सत्ता की वैध स्थिति को मान्यता दी। फ्लोरेन्जा की जनता को लिखे गये पत्र म उसने राजा हेनरी तृतीय के आने स पूर्व अपने बिशप का चुनाव न करने के उनके निश्चय की प्रशंसा की।[9] लौकिक राज सत्ताधारियों को अपने को नियुक्ति के असीमित अधिकारों से सम्पन्न मानने की गलती के विरुद्ध चेतावनी देते हुए भी वह स्पष्टतापूर्वक उनके अधिकार स्वीकार करता प्रतीत होता है।[10] यहा तक कि पोपीय धर्म पीठ की नियुक्तियों के विषय मे भी वह पोप निकोलस द्वितीय के आदेश की व्याख्या स्पष्ट रूप से इस प्रकार करता प्रतीत होता है कि चुनाव को तबतक पूर्ण नहीं माना जा सकता जबतक की वह राजकीय सत्ता को प्रस्तुत नहीं किया जाय।[11] उसके द्वारा किये गये हेनरी

तृतीय के उल्लेखो म जसा हम देख चुके है वह सवमे अधिक सुनिश्चित शब्दो मे धम पद का वेचने से मुक्त करने के लिय हेनरी द्वारा की गई चच की सेवाओ को मान्यता देता है तथा उसकी राजा जोसिया (King Josiah) से तुलना करता है जिसने जब अपनी कानून की पुस्तक (Book of the Law) प्रवर्तित की तो पुराने राजाओ के अन्धविश्वासो जुगुप्सित मूर्तियो एव वदिया को उठाकर फेंक दिया था और कहता है कि क्योंकि उसने अपने पूर्वाधिकारियो के भ्रष्ट उदाहरण का अनुकरण नही किया इसलिए दवी व्यवस्था के अनुसार रोमन चच सम्प्रति उसकी इच्छाओ के अधीन रखा गया है तथा रोम की धम पीठ के लिए किसी का भी निवाचन उसके अनुमति के बिना नही होना चाहिए।[12]

यदि हम इस प्रकार के वाक्याशो स यह अनुमान लगाना ठीक नी समझ कि पीटर डेमियन धार्मिक मामलो म लौकिक सत्ता के हस्तक्षेप को उचित मानता था तो उसके लेखो मे हम इस प्रकार के वाक्याशा को भी पा सकते है जो लौकिक की तुलना म आध्यात्मिक सत्ता की श्रेष्ठता की भावना को स्पष्टतया अभिव्यक्त करत हैं। एक स्थान पर वह पोप का राजाओ का राजा तथा सम्राटा का राजा बताता है जो गौरव और सम्मान म सभा मनुष्या मे बढकर है।[13] यह पीटर डमियन ही है जिसने कुछ एसे शब्दा का सम्भवत सवप्रथम प्रयोग किया जो उत्तरकालीन सघष म प्राय उद्धत किये गय। उसने ईसा को सत पीटर को यह कहत हुए बताया है Beato vitae aeternae clavigero terreni simul et coelestis imperii iura और दूसरे स्थान पर उसा सत पीटर को स्वग और पृथ्वी के विधान सुपुद किये है।[14]

इन वाक्याशा का एक महत्त्वपूण इतिहास है तथा ये प्राय इस अथ मे माने गय है कि सत पीटर के उत्तराधिकारी को भी किसी रूप मे धार्मिक एव लौकिक दोना क्षेत्रा एव सगठना म अधिकार प्राप्त हैं।[15] पीटर डेमियन का स्वय इन शब्दो स ठीक क्या अभिप्राय था यह कहना अत्यन्त कठिन है।[16] जिस सन्दभ म ये कहे गए है वह उनकी व्याख्या पर कोई प्रकाश नहा डालता। उसके सभी ग्रथो की परीक्षा से यह पूणतया असम्भव प्रतीत होता है कि वह लौकिक विषया म भी लौकिक की तुलना म धार्मिक सत्ता की सर्वोच्चता की स्थापना का प्रतिपादक था किन्तु निश्चित हा वह धार्मिक सत्ता की गरिमा की महान् उत्कृष्टता को स्थापित करना चाहता था और यह सिद्धान्त मानता था कि महानतम व्यक्ति राजा और सम्राट भी पोप के धार्मिक अधिकार के अन्तगत हैं।

कम स कम एक स्थान पर उसके शब्दो म भावी सघर्षों के बारे म सूचना दने वाली भविष्यवाणी उपलब्ध होती है। हनरी चतुथ को लिखे गये एक पत्र म वह उसे लोम्बार्ड और जमन बिशपो की परिषद् द्वारा 1061 ई म चुने गय नकली पोप पारमा के केडेलुअस के विरुद्ध चच और असली पोप अलक्जण्डर द्वितीय का समथन करने का अनुरोध करता है और आग्रहपूवक कहता ह कि यदि हेनरी न वसा नही किया तो वह दोष का भागी होगा तथा सम्राट आज्ञापालन करवाने योग्य तभी होता है जबकि वह अपने सृष्टा की आज्ञा माने वह यदि दवी आदेशा की अवहेलना करता है तो उसकी प्रजा द्वारा उसकी पदच्युति न्याय सगत हो सकती है।[17]

जबकि हम पीटर डेमियन के विचारो के विभिन्न पक्षा का विवेचन करते हैं तो यह

पूरी तरह स्पष्ट रहता है कि लौकिक और धार्मिक सत्ता के सम्बन्धो के बारे मे उसका सामान्य निर्णय व्यावहारिक रूप म जिसे हमने गेलेशियन परम्परा कहा पर आधारित है अर्थात् पाँचवी शताब्दी म पोप गलेशियस प्रथम (*Pope Gelasius I*) द्वारा प्रारम्भ किये गये विचार जिनके अनुसार प्रत्येक महान् सत्ता अपने क्षेत्र म स्वतन्त्र है। हम समझते हैं कि रोचक तथा महत्वपूर्ण शब्दावली म यह उनके ग्रन्थों के अनेक वाक्याशा म अभि व्यक्त हुई है।

हमारे द्वारा अभी अभी उल्लिखित हेनरी चतुर्थ को लिख गय उसी पत्र म पीटर डेमियन उस घनिष्ठ सम्बन्ध का वणन करता है जो राजकीय और धार्मिक सत्ताओ मे होना चाहिए क्योंकि प्रत्येक को दूसरे की आवश्यकता है। पुरोहितो का सरक्षण साम्राज्य द्वारा तथा साम्राज्य का पुरोहिता के पद की पवित्रता द्वारा होता है। राजा ने चच के शत्रुओ का सामना करने के लिए तलवार बाधी है तथा पुरोहित अपने को प्राथना म लीन करता है ताकि वह राजा और जनता के पक्ष म ईश्वर को प्रसन्न कर सके।[18] वह एक अन्य *स्थान पर इन दो शक्तियो के बीच कार्यों का सावधानी से भेद करता है* पुरोहित का काय करुणा स पूण और बच्चो के प्रति मातृवत् वात्सल्य से भरा है न्यायाधीश का काय क्रूर व्यक्तियो को दण्ड देना तथा उनके हाथा से निरपराधा की रक्षा करना है उसे देवदूतो (Apostles) के *इन शब्दो को सदव स्मरण रखना चाहिए क्या तुम्हे सत्ता का* कोई भय नही ? वही करो जो उचित हो तुम्हे उसी की प्रशसा मिलेगी। क्योकि वह अच्छाई के लिए ही ईश्वर का प्रतिनिधि है। किन्तु यदि तुम वह करते हो जो बुराई है तो भयभीत रहो क्योंकि वह व्यथ ही तलवार धारण नही करता। राजा की तलवार और पुरोहित के दण्ड (Infula) मे बहुत अन्तर है।[19]

एक अन्य स्थान पर वह कुछ भिन्न वाक्या द्वारा इस मत का व्यक्त करता है। न्याया धीशो का न्यायासन निश्चित रूप से पुरोहित के धम-पीठ से भिन्न है। *न्यायाधीश इसलिय तलवार धारण करता है कि वह उनको दण्ड दे सके जो अधमपूवक जीवन व्यतीत करते हैं* पुरोहित निरपराधिता के दण्ड से सन्तुष्ट रहता है जिससे वह एक मौन तथा शांतिपरक अनुशासन बनाये रख सके। एक अन्य स्थल पर वह उसी सिद्धान्त का उल्लेख दो तलवारो की शब्दावली स करता है तथा वह उस दशा के सुख का वणन करता है जहाँ साम्राज्य की तलवार पुरोहित की तलवार का साथ देती है जब पुरोहित की तलवार राजा की तलवार पर पानी चढाती है और राजा की तलवार पुरोहित की तलवार को तेज करती है क्योंकि ये दोनो तलवार वही हैं जिनका ईश्वरीय उल्लेख (Lord s Passion) के समय वणन किया गया है। वास्तव मे तभी साम्राज्य एव पौरोहित्य का उत्थान एव *समादर होगा जब इन दोनो तलवारा का सुन्दर सामजस्य हो।*[20]

ये दोना तलवार ईश्वरीय हैं। दोना दिव्य अधिकारो की प्रतिनिधि हैं दोनो का एक दूसरे से निकटतम समन्वय होना चाहिए। किन्तु यह उल्लेखनीय है कि पीटर डेमियन उनको एक दूसरे से पूर्णतया स्वतन्त्र एव विभिन्न बताता है तथा वह किसी प्रकार भी यह सकेत नहीं देता जसा बाद म प्रतीत होने लगा कि दोनो तलवारें धार्मिक सत्ता के अधिकार म हैं।[21]

सन्दर्भ

1 Ratherius Praeloq roum i 4 Maigne P L., vol 136
2. Id id., 9
3 Id id iv 2.
4 Sylvest II., De Informat on Ep scoporum
5 Anselm Gesta Episcop Leod ., 66 M G H S S., vol 7
6 Gerbert, 'Epi tolae I
7 W'ppo 'V ta Chuon ad (p 1245)
8 Anselm G ta Ep sc Leod 58 M G H S S vol 7
9 देखा पृ 25।
10 देखा पृ 25
11 देखा पृ 25
12. देखा पृ 14।
13 Peter Dam an Opusc., xx I
14 Id Opusc., -9 The phrase is also in Peter Damian s 'D sceptat o Synodalis M G H., Lib De Lite vol p 78
15 Id., Opusc v 9 The phrase is also n P ter Damian s D sceptat o Synodal M G H Lib De Lite ol i p 78
16 Cf I pp 206–209
17 Id Ep 3 ol 144 col 441
18 Cf vol ., pp 190–193
19 Id Ep v 3 p 440
20 Id., Sermo ix x.
21 Cf vol II p 208

द्वितीय भाग

अधिप्लापन विवाद

प्रथम अध्याय

धर्म-विक्रय

हम दसवीं शताब्दी तथा ग्यारहवीं के प्रथम सत्तर वर्षों में लौकिक तथा धार्मिक अधिकारियों के सम्बन्धों के विवेचन का प्रयास कर चुके हैं, तथा हमारे विचार में यदि कोई विषय के इतिहास का तटस्थ परीक्षा करे तो उसे यह स्पष्ट हो जायगा कि यद्यपि इन सम्बन्धों में अनेकों कठिनाइयाँ थीं तथा ये अनेक प्रकार से असन्तोषजनक थे तो भी समग्र रूप से यह कहना सत्य ही है कि ये सम्बन्ध मित्रता एवं सहानुभूति से युक्त थे। इसका कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं होता कि सम्राटों अथवा राजाओं से चर्च की स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप करने की अथवा पोप या बिशपों की नवीं एवं दसवीं शताब्दियों में परम्पराओं से स्वीकृत से अधिक राजनैतिक सत्ता का दावा करने की कोई निश्चित अभिलाषा थी। हम यह भलीभाँति कह सकते हैं कि अब तक दोनों सत्ताएँ यूरोपीय सभ्यता की उन्नति के लिए साथ-साथ प्रयत्नशील थीं यद्यपि यदाकदा उनमें मतभेद भी होता था लेकिन समग्र रूप से उनमें सामञ्जस्य था तथा जहाँ तक प्रत्येक सत्ता के सर्वोत्कृष्ट प्रतिनिधियों का प्रश्न है उनमें एक बड़ी सीमा तक पारस्परिक सौमनस्य भी था।

हमें उस युग के इतिहास का अध्ययन करना है जिसमें ये सब परिवर्तित हो गये प्राचीन काल की शान्ति एवं सहयोग उग्र संघर्ष एवं पारस्परिक वैमनस्य में बदल गया। हमें उस त्रुटि के प्रति सावधान रहना चाहिए जो एक असावधान अध्ययन से हो सकता है। दोनों सत्ताओं का संघर्ष हिल्डब्राण्ड से लेकर इन्नोसेण्ट चतुर्थ तक निरन्तर नहीं रहा। इस समय के बीच कई वर्षों तक पोप एवं राजा के सम्बन्ध मित्रतापूर्ण रहे। यद्यपि यह प्रतिपादित किया जा सकता है कि यह एक असाधारणता थी साधारण रूप से इस समय से तो उनके सम्बन्ध विरोध भरे थे तथा परस्पर विरोधी दावों का कोई हल नहीं मिला था तथा ये शान्ति के मध्यान्तर एक महान् युद्ध के बीच ये काल मानो युद्ध विराम के समय की भाँति ही थे। इस मत पर जब तक कि हम अपनी सामग्री का विस्तृत

(राजा और सम्राट) निभर रह रहें। अन इसका सबसे अधिक महत्व था कि लौकिक सत्ता को धार्मिक पदों पर नियुक्ति के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त हो तथा यह स्वाभाविक था कि वे सामान्यतया इसके लिए सर्वाधिक योग्य व्यक्ति उनमें से ही पाए जो राजकीय गिरजाघरों में सेवा के लिए प्रशिक्षण पा चुके हों। यह भी लगभग अनिवार्य था कि अन्ततोगत्वा सुधारवादी दल का राजनीतिक सत्ता से इसी प्रश्न पर संघर्ष छिड़ता क्योंकि धार्मिक सुधार के लिए यह सबसे अधिक अनिवार्य था कि विशप एवं ऐबट धार्मिक सिद्धान्तों से नियन्त्रित होने वाले तथा चर्च के नियमों के प्रति निष्ठावान व्यक्ति हों। हेनरी तृतीय अथवा विजेता विलियम जैसे धर्मनिष्ठ एवं बुद्धिमान शासक इस तथ्य को समझ सकते थे किन्तु क्षुद्र व्यक्ति जो अधिक स्वनिक तथा अदूरदर्शी थे वैसा नहीं करते थे।

यहाँ हम मध्ययुगीन चर्च की धर्म विक्रय सम्बन्धी प्रथाओं के विकास के सम्पूर्ण इतिहास का अध्ययन नहीं कर सकते अस्तु हम ग्यारहवीं शताब्दी के साहित्य में उपलब्ध परिस्थितियों के संक्षिप्त विवरण से ही सन्तुष्ट रहना होगा। रोडोल्फस ग्लेबर सामान्य रूप से कुछ काल से विद्यमान इन परिस्थितियों का एक नैराश्यपूर्ण विवरण प्रस्तुत करता है। वह कहता है कि जिन राजाओं को यह ध्यानपूर्वक देखना चाहिए कि चर्च के प्रशासन के लिए योग्य व्यक्ति नियुक्त किए जाएं वे प्राय उन्हीं को सर्वाधिक योग्य मानते हैं जिनसे वे सबसे अधिक भेंट पाते हैं।[1] दूसरे स्थान पर वह जर्मनी तथा गाल के बिशपों को सम्राट हेनरी तृतीय द्वारा इसी विषय पर दिए गए एक भाषण का विवरण प्रस्तुत करते हुए सम्राट को यह कहता हुआ बताता है कि वह धर्म विक्रय की सीमा से सुपरिचित था तथा उसने यह स्वीकार किया कि उसके पिता (सम्राट कोनाड सलिक) इस विषय में बड़ी सीमा तक दोषी थे। वह बताता है कि सम्राट हेनरी ने यह प्रस्ताव किया कि सारे साम्राज्य में घोषणा की जाय कि कोई भी पादरी पद या धार्मिक अधिकार मूल्य देकर प्राप्त न हो और यदि कोई मूल्य देने या लेने का दुस्साहस करे तो उसे पद से मुक्त कर दिया जाय तथा वह अभिशप्त हो नहीं तक उसका स्वयं का प्रश्न था उसने प्रतिज्ञा की कि ईश्वर ने उसे मुक्त रूप से साम्राज्यिक किरीट प्रदान किया है तथा वह भी मुक्त रूप से धर्म सम्बन्धी प्रत्येक वस्तु को प्रदान करने के लिए प्रस्तुत है।[2]

सिल्वा कैंडिडा का कार्डीनल हुम्बर्ट सुधारवादी सम्प्रदाय के उन उत्तरी पादरियों में से एक था जिन्हें टूल का ब्रूनो जब वह 1048 ई० में लियो नवम के रूप में पोप बना अपने साथ इटली लाया था। एक स्थान पर वह कहता है कि ओथोस (Othos) से लेकर हेनरी तृतीय के काल तक धर्म विक्रय का दोष जर्मनी गाल एवं इटली में फैल गया है। हेनरी तृतीय ने उसे दूर करने के लिए वास्तव में कुछ प्रयत्न किया और उसे पूर्णतया समाप्त करने की अभिलाषा की किन्तु उसकी अकालमृत्यु ने इस प्रयास को विच्छिन्न कर दिया। हुम्बर्ट विशेष कटुतापूर्वक फ्रांस के समकालीन राजा हेनरी प्रथम की निन्दा करता है जिसने अब तक इस दुर्गुण को आश्रय दिया था।[3] एक अन्य स्थान पर वह कहता है कि उच्चतम से लेकर निम्नतम तक प्रत्येक व्यक्ति धार्मिक वस्तुओं के व्यवसाय में लगा है सम्राट राजा सामन्त तथा अन्य लौकिक सत्ताधारी जिन्हें चर्च की रक्षा करना चाहिए अपने यथार्थ कार्य को त्याग चुके हैं ताकि वे चर्च की सम्पत्ति हथिया

सकें।[4] धम विक्रय वास्तव मे आदि प्रचारकों के काल मे ही प्रारम्भ हो चुका था किन्तु उत्पीडन के युग मे यह कुप्रथा लुप्त हो गई थी। परन्तु चच मे शांति की पुनर्स्थापना के पश्चात् तथा धार्मिक सत्ता के समक्ष सम्राट के समपरण के युग मे यह प्रथा पुनर्जीवित हुई क्योंकि चच के वभव ने मनुष्या के लोभ को दीप्त किया।[5] उसके वरान के अनुसार मामला यहाँ तक बढ चुका था तथा इतना खुला एव निलज था कि कोई भी जो चच या राज्य म अधिकार पद पाना चाहता उसे शपथपूवक प्रतिज्ञा करनी होती थी कि वह धम पद विक्रयी मनुष्यो के कृत्रिम रूप स धारण किए गए अधिकारो को बनाए रखेगा। सम्राट को स्वय शपथ लेनी पडती थी कि अपने पवित्र पूववर्तियो द्वारा धम विक्रय के विरुद्ध बनाए गए नियमो का पालन तो दूर रहा वह उनको अवध घोषित कर देगा।[6] वह कहता है कि उसे इस घटना का ज्ञान था जबकि प्रतिज्ञा किए मूल्य को चुकाने के लिए पापी धम-पद क्रेता चच के बहुमूल्य सगमरमर को और यहाँ तक कि अपनी छत की खपरेलो तक को उखाडने के लिए विवश हो गया था।[7] दूसरे स्थान पर वह दयनीय शब्दो मे इस कुप्रथा के कारण विशेषतया इटली के चर्चों एव मठो के विध्वस एव उनके उजडने का वरान करता है।[8]

हसफेल्ड के लेम्बट (Lambert of Hersfeld) के विवरण के अनुसार ब्रेमेन के आर्च बिशप तथा काउन्ट वनर ने जबकि वे हेनरी चतुथ के अवयस्कता के काल म शासन का नियन्त्रण करते थे सभी धार्मिक एव लौकिक पदो को विशेषत मठाधीशो के पदो को बेचा था।[9]

हम वास्तव म ऐसे विवरणो को अक्षरश अगीकार नहीं करना चाहिए। हम चच की दशाओं के दिए गए इन विवरणो मे किसी सीमा तक अतिशयोक्ति की मात्रा को स्वीकार करने के लिए तयार रहना चाहिए किन्तु इसम सन्देह का कोई अवसर नही है कि ये तात्त्विक रूप से सत्य हैं तथा चच की व्यवस्था मे और कोई ऐसा प्रश्न नहीं था जिस पर सुधारवादियो ने ध्यान देना अधिक आवश्यक समझा हो। हम सुत्री म पोप की पदच्युति के इतिहास का वरान कर चुके हैं तथा यह देख चुके हैं कि प्रमुख सुधारको म से अधिकाश ने इस विषय म तथा धम विक्रय के सम्पूर्ण विषयो म हेनरी तृतीय के कार्यों के प्रति आभार व्यक्त किया है।[10]

हमारे पास पोप लियो नवम द्वारा फ्रास म धम विक्रय को दबाने के लिए की गई कायवाही का विवरण उपलब्ध है। उसने 1049 ई म राइम्स नामक स्थान पर बिशपो एव मठाधीशो की एक सभा बुलाई तथा उसम फ्रासीसी सम्राट को भी उपस्थित रहने का निमन्त्रण दिया। उसके दरबारियो ने उसे सम्मति दी कि यह साम्राज्य के सम्मान की दृष्टि से बहुत सकटपूर्ण होगा यदि वह फ्रास म परिषद् के बुलाए जाने मे पोप का समथन करे और इसकी स्वीकृति उसके पूवजो द्वारा भी नहीं दी गई थी साथ ही उसे यह भी राय दी कि उस साम्राज्य के अशान्त भागो पर आक्रमण के समय अपना साथ देने के लिए बिशपो एव एबटो को बुला लेना चाहिए ताकि वे परिषद् मे भाग न ले सकें।[11] तदनुसार राजा ने पोप को उत्तर दिया कि वह तथा उसके बिशप इस परिषद् मे उपस्थित नही हो सकेंगे तथा उससे प्राथना की कि वह अपनी फ्रास की यात्रा को स्थगित कर दे। लियो

नवम ने उत्तर दिया कि वह ऐसा नहीं कर सकता तथा जो भी उपस्थित हो सकते हैं उनको लेकर परिषद् अवश्य बुलायेगा। जब परिषद् की बैठक हुई तो अनेक बिशपों एवं एबटों को विभिन्न अपराधों विशेषतः धर्म विक्रय के कारण पदच्युत किया गया तथा राइम्स के आर्च बिशप को बाद में रोम में होने वाली परिषद् में उपस्थित होने की आज्ञा दी गई जहाँ वह अपने ऊपर लगाए गए धर्म विक्रय के आरोप से अपने को मुक्त कर सके।[12] परिषद् ने एक आदेश जारी किया तथा यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि कोई भी बिशप के पद पर पादरियों तथा जनता द्वारा निर्वाचन के बिना नियुक्त नहीं किया जाय कोई भी पुरोहिताभिषेक अथवा धार्मिक पदों को न तो बेचे न खरीदे तथा यदि किसी ने उनको खरीद कर प्राप्त किया है तो वे उसे बिशपों को सौंप दें। आदेश में यह भी व्यवस्था थी कि कोई भी जनसाधारण पादरी की वृत्ति अंगीकार नहीं कर सकता किसी भी पादरी को शस्त्र धारण नहीं करने चाहिए न कोई लौकिक पद धारण करना चाहिए।[13] वाइबट जो टूल का आर्चडिकन था द्वारा लिखे गए पोप लियो नवम के जीवन में हम पोप द्वारा इटली में तथा अन्यत्र धर्म विक्रय के प्रतिरोध के लिए उठाये गए प्रबल उपायों का और विवरण उपलब्ध होता है तथा वह वर्णन करता है कि किस प्रकार उसने आर्चबिशपों एवं बिशपों को जो इसके अपराधी थे पदच्युत कर दिया।[14]

पोप लियो नवम के ये कठोर उपाय चर्च के सुधारवादी दल द्वारा सशोधित पोप पद के नेतृत्व में धार्मिक पदों के क्रय विक्रय के दमन के लिए किए गए सकल्पित प्रयत्न की दिशा में पहले कदम थे। वास्तव में कुछ सुधारवादियों का दृष्टिकोण इतना कठोर था कि अन्ततोगत्वा उसने उनमें परस्पर ही एक उग्र विवाद को जन्म दिया। कार्डिनल हुम्बट जैसे कुछ लोगों का विचार था कि धर्म पद क्रय द्वारा प्राप्त अभिषेक अथवा पदारोहण अवैध है[15] जबकि पीटर डेमियन जैसे अन्य व्यक्ति उनको वैध मानते थे[16] तथा यह कहते थे कि जो वास्तव में अपराधी हैं उनको पदच्युत करना चाहिए तथा जो अज्ञानवश ऐसे लोगों से धार्मिक आदेश प्राप्त कर चुके हैं उनको अपना पद धारण करने देना चाहिए।[17] हमारा कार्य इस मतभेद में उठाये गए प्रश्नों के महत्त्व का विवेचन करना नहीं है हम केवल यही देखना चाहते हैं कि यह बुराई कितनी फैली हुई थी तथा उसके उन्मूलन के लिए ग्यारहवीं शताब्दी के सुधारकों ने कितने प्रबल सकल्पपूर्वक प्रयत्न किए।

हमारे प्रयोजन से धर्म-पद विक्रय का प्रश्न मुख्यतः उन परिस्थितियों से सम्बन्ध रखने के कारण महत्त्वपूर्ण है जिन्होंने धार्मिक एवं लौकिक सत्ताओं के बीच महान् संघर्ष को जन्म दिया। जैसा हम देख चुके हैं हेनरी तृतीय की 1056 ई० में मृत्यु होने तक चर्च के सुधारवादियों ने अपने धर्म विक्रय विरोध के प्रयत्नों में लौकिक सत्ता का स्पष्टतया वास्तविक उत्साहपूर्ण समर्थन मिला। इस समस्या की पृष्ठभूमि में कुछ अन्य समस्याएं भी थीं जिनका समाधान जैसा कि हम कह चुके हैं अधिक कठिन था। यह उल्लेखनीय है कि पीटर डेमियन इस विषय में बहुत स्पष्ट है कि चर्च को वास्तविक धर्म पद विक्रय से जितनी हानि हुई उतनी ही राज्य के प्रशासकीय पदों पर की गई सेवाओं के लिए उनको बिशप पदों एवं मठों में पदोन्नति से हुई है। पोप अलेक्जेण्डर द्वितीय को लिखे गए एक पत्र में पीटर डेमियन उससे अनुरोध करता है कि किसी भी व्यक्ति को बिशप न बनने दिया जाय

या पद पर न रहने दिया जाय जिसने इसे मूल्य देकर या इससे भी अधिक निन्दनीय राजकीय सेवा के द्वारा प्राप्त किया हो।[18] एक ग्रन्थ म जो वास्तव म दरबारी पादरियो के विरुद्ध लिखा गया है वह कहता है कि उसे कोई भी चीज इतनी असह्य नहीं प्रतीत होती जितनी यह कि कुछ व्यक्ति धम पद के लालच मे ऐसा व्यवहार करते हैं मानो वे उच्चपदस्थ व्यक्तियो के दास हो तथा यह आग्रह करता है कि बिशप पद को राजा की दरबारी सेवा से प्राप्त करना भी उतना ही धम-पद क्रय है जितना उसे धन देकर खरीदना तथा वह राजकुमारो और दूसरो को चेतावनी देता है कि जिनको चच के पदो पर नियुक्ति का अधिकार है वे इन पदो को केवल अपनी इच्छा से या प्रसाद के कारण प्रदान न करें।[19]

कार्डीनल हम्बट इसी विषय को उत्तजक तथा भावपूर्ण शली मे वर्णन करता है। वह स्पष्टत पादरी के प्रशासकीय कार्यों की निन्दा नही करना चाहता क्योकि वह इससे परिचित है कि कई अवसरो पर इस प्रकार का काय न केवल राज्य के लिए अपितु चच के लिए भी उपयोगी होता है किन्तु वह प्रभावपूर्ण शब्दो म उन लालची पादरियो की भीड की निन्दा करता है जो राजाओ के दरबारो मे मडराते रहते थे तथा लम्बी परिश्रमपूर्ण सेवा करते थे ताकि अन्ततोगत्वा वे कोई धार्मिक पद प्राप्त कर सकें। वे इन मनुष्यो को सबसे अधिक धम-पद क्रयी मानता था क्योकि वे न केवल धम को वरन् अपने आप को मूल्य स्वरूप देते थे। वह शिकायत करता है कि इटली विशेषत ऐसे आदमियो से भरा हुआ था जिन्होंने चच का पद अपने धार्मिक काय के कारण नही किन्तु अपनी लौकिक सेवाओ के मूल्यस्वरूप प्राप्त किया है जो कभी-कभी लोक विनिन्दित तथा अपमानजनक प्रकृति की भी होती थी।[20]

निस्सन्देह इस प्रकार की शिकायतें और दावे एक बडी सीमा तक आधारपूर्ण एव न्यायसगत थे तथा यह स्पष्ट है कि उठाया गया प्रश्न बहुत कठिनाइ स भरा था। राज्य को प्रशासकीय काय के लिए प्रशिक्षित व्यक्तियो की तथा ऐसे व्यक्तियो की प्रबल आवश्यकता थी जिनकी व्यक्तिगत निष्ठा पर राजा और सम्राट निभर रह सकें तथा यह देख पाना कठिन है कि धार्मिक सम्प्रदाय से बाहर अन्य क्षेत्रो में ऐसे व्यक्ति उस समय कहाँ पाए जा सकते थे।

सन्दभ

1 Rodolfus Glabe H stona u 6
2. Id d v 5
3 Card nal H mbert Ad ersus S mo- m os Lib De Lit u 7 p
4 Id d u 5 p 204
5 Id id., i 35 p 183
6 Id d Lib De Lite u 36 p 185
7 Id d i 43 p 192
8 Id id. Lib De Lite 35 p 184
9 Lambert f Hersfeld 1063
10 देखो भाग 1 अध्याय 2।
11 Anselm Monachus Reme Historia Ded cat onis 9 M gne P L. vol 142.
12. Id d 14 15 16
13 Id id 16
14 Leo IX V ta 88 4 and 6

द्वितीय अध्याय

अयाजकीय "प्रतिष्ठापन" का निषेध

हमने उन परिस्थितियों अथवा दशाओं म स कतिपय के अध्ययन का प्रयत्न किया जिनसे साम्रा य एव चच के बीच सघप का उदय हुआ। यह स्पष्ट है कि चच म एक महान् दोप था चच के पदो का क्रय एव विक्रय इस सीमा तक ब गया था कि उनके लिए कठोरतम उपाय न केवल उचित वरन् अत्य त अनिवाय थे। यद्यपि यह स्पष्ट है कि हेनरी तृतीय क रा यकाल म राजकीय सत्ता सुधारवादियो क पक्ष में थी एव सुधार की वृद्धि क लिए किए गए कुछ कार्यो क औचि य पर कुछ सदेह होने पर भी समग्र रूप स सुधारवादी उसकी स चा अभिलाषा को स्वाकार करते थे तथा उसकी कमशक्ति क लिए आभारी थ। अब हम धार्मिक एव लौकिक सत्ता क सम्ब धो क तीव्र परिवतना पर विचार करना है, जो लगभग 20 वर्षों (1056 ई से 1076 ई) की अवधि म ही सौहादपूण सहयोग एव सहकारिता स उग्र विरोध म परिवर्तित हो गए।

सुत्री (Sutri) क बा पोपो ने सुधार-काय का बीडा उठाया तथा उनको अपने प्रयासो म हेनरी तृतीय का समथन मिला। दुभाग्यवश व० काय क सम्पूर्ण होने से पूव ही मर गया तथा उसकी मृत्यु क बाद यूरोप की धार्मिक परिस्थितियाँ एक बार फिर अस्त यस्त हो गइ। हम पहले ही हनरी चतुथ का अवयस्कता क समय ब्रमेन क आच बिशप एव काउट वनर क प्रशासन म जमनी की धार्मिक दशा का शोचनीय विवरण प्रस्तुत कर चुके हैं कि स प्रकार वे सभी प दो को चाहे वे धार्मिक हो अथवा लौकिक इस सीमा तक क्रय विक्रय का विषय मानते रहे कि कोई भी यक्ति चच म अथवा रा य मे तबतक प ोन्नति की आशा नहीं करता था जबतक कि व० उनसे उस खरी न ले।[1] जब हनरी चतुथ ने शासन का भार स्वय सभाला तो एसा प्रतीत होता है कि बहुत थोडा सा सुधार हुआ था। बम्बग क बिशप का 1070 ई म रोम बुलाया गया तथा उस पर बिशप पद को खरीद कर प्राप्त करने का आरोप लगाया गया। हसफी ड का लम्बट वास्तव म पोप एलक्जण्डर द्वितीय पर यह अभियोग लगाता है कि उसन उससे बडी भेंटें स्वाकार करक उसे अ राप स मुक्त कर दिया किंतु वह यह भी कहता है कि उसकी एव

मंज तथा कोनोन के आर्चबिशप को पोप द्वारा धार्मिक व्यवस्था का वचन तथा धर्म विक्रयी लोगों से सम्पर्क करने के लिए तीव्र भर्त्सना की गई तथा उनको इसकी शपथ दिलाई गई कि वे पुनः ऐसा नहीं करेंगे।[2]

लेम्बर्ट वर्णन करता है कि अगले वर्ष में हेनरी चतुर्थ ने राइखनाउ (Reichenau) के मठाधीश को मुख्य नेतृत्व नियुक्त किया तथा कांसटेंस की धर्म सभा (Chapter) के अन्तर्गत एक ऐसा व्यक्ति को बिशप नियुक्त करने का प्रयास किया जिस पर कि चोरी एवं धर्म विक्रय के आरोप थे।[3] पोप ने इस प्रश्न को मंज के आर्चबिशप को सौंपा तथा हमें एक पत्र उपलब्ध होता है जिसमें वह पोप के आज्ञापालन के कारण उस पर आने वाले महान् संकट का वर्णन करता है क्योंकि सम्राट ने उसे स्पष्टतः प्रबल धमकी दी थी कि वह कांसटेंस के लिए निर्वाचित बिशप का अभिषेक करना स्वीकार न करे।[4]

ग्रेगोरी सप्तम को लिखे गए हेनरी चतुर्थ के 1073 ई. के एक पत्र में वह अपने दोषों को स्वीकार करता है जिनमें औरों के साथ साथ यह भी है कि वह धर्म विक्रय का अपराधी है तथा मामले को ठीक करने के लिए उसकी राय एवं सत्ता समर्थन की याचना करता है। वह मिलन (Milan) के चर्च के सम्बन्ध में अपने को गम्भीर दोषों का अपराधी बतलाता है।[5]

पुनः 1074 ई. के सम्बन्ध में लेम्बर्ट वर्णन करता है कि जर्मनी में पोप के प्रतिनिधि हेनरी चतुर्थ से सहयोग न करने के प्रति सजग थे क्योंकि उस पर धर्म विक्रयात्मक कार्यों के आरोप थे। ग्रेगोरी सप्तम ने इन प्रतिनिधियों को धर्म विक्रय के अभियुक्त व्यक्तियों का निर्णय करने के लिए भेजा था तथा वे एक धर्म सभा को बुलाना चाहते थे। बिशपों ने इसका दृढ़तापूर्वक विरोध किया तथा यह तर्क प्रस्तुत किया कि पोप के अतिरिक्त वे किसी अन्य के द्वारा इसका सम्मान सहन नहीं करेंगे। पोप ने पहले ही बेम्बर्ग के बिशप तथा अन्य बिशपों को निलम्बित कर दिया था तथा अपने पवित्र कर्त्तव्यों को करने से रोक दिया था जब तक कि वे उसकी (पोप की) उपस्थिति में अपने को शुद्ध न कर लें। लेम्बर्ट के अनुसार हेनरी चतुर्थ ने इस आशा में कि इसमें बाम से के बिशप तथा अन्यों को जिन्होंने सेक्सन युद्ध में उसका विरोध किया था दण्डित किया जा सकेगा पोप के प्रतिनिधियों का समर्थन किया किन्तु अन्ततः यह पाया गया कि यह मामला इन दूतों के लिए कठिन है तथा उसे स्वयं पोप की सुनवाई के लिए सौंप दिया गया।[6]

केवल जर्मनी में ही धर्म विक्रय की समस्या उत्कट नहीं थी। हम फ्रांस में लियो नवम द्वारा 1049 ई. की राइम्स परिषद् में उठाए गए कठोर उपायों पर विचार कर चुके हैं किन्तु यह स्पष्ट है कि उसके प्रयत्नों के बावजूद भी यह दोष दूर नहीं किया जा सका। ग्रेगोरी सप्तम के फ्रांस बिशपों से पत्र-व्यवहार में उसने सबसे पहले लौकिक सत्ताधारियों के विरुद्ध कठोर उपायों की धमकी दी। 1073 ई. के शालों के बिशप (Chalons) को लिखे गए एक पत्र में वह फ्रांस के राजा फिलिप को किसी भी समकालीन राजा से अधिक चर्च का उत्पीड़क बताता है तथा वह धमकी देता है कि यदि फिलिप धर्म विक्रय का अपराध नहीं त्याग देगा तो वह एक ऐसा सामान्य धर्म बहिष्कार का आदेश देगा जिससे फ्रांसीसी जनता उसका आज्ञा पालन करना अस्वीकार कर देगी।[7] उसी वर्ष उसने वियोस

क आर्चबिशप को आदेश दिया कि वह ओटन के निर्वाचित बिशप का फ्रांस के राजा की स्वीकृति की प्रतीक्षा किए बिना अभिषेक कर दें।[8] अगले वर्ष में ग्रेगोरी ने फ्रांस के आर्च बिशपों एवं बिशपों को लिखा तथा फिलिप की भर्त्सना की कि वह राजा कहलाने योग्य नहीं था अपितु केवल निरंकुश शासक कहा जा सकता था। उसने (ग्रेगोरी ने) उन पर कड़ा आरोप लगाया कि राजा को अपराधों से रोकने के लिए उनके द्वारा अपने धार्मिक अधिकारों का प्रयोग नहीं किया गया तथा उनको आज्ञा दी कि वे एकत्रित होकर संयुक्त रूप से उससे भेंट करें तथा उसके मुंह पर उसके अपराधों के लिए उसकी निंदा करें। अगर राजा उनकी बात पर ध्यान देने से मना करता है तो उसने आज्ञा दी कि वे उसके सम्पर्क एवं आज्ञा पालन से विरत हो जाएं तथा सारे फ्रांस में धर्म क्रिया के सार्वजनिक अनुष्ठानों का निषेध कर दें। यदि फिलिप उस समय भी न माने तो उसने उनको यह आश्वासन दिया कि वह अपनी शक्ति भर फ्रांस का राज्य उससे छीनने का प्रयास करेगा।[9]

ग्रेगोरी के पत्र यह संकेत करते हैं कि वे अपराध जिनके आरोप उसने फिलिप पर लगाए हैं केवल चर्च के सामान्य हितों के विरुद्ध ही नहीं थे क्योंकि वह दूसरे पत्रों में फ्रांस में इटेलियन व्यापारियों के लूटने का विशेषत संकेत करता है।[10] फ्रांस के चर्च की अवनति एवं अव्यवस्था उसके अनुसार विशेषत धर्म विक्रय के प्रचलन के कारण थी तथा उसके लिए सबसे अधिक कठोर सुधारों की अपेक्षा थी और यह भी स्पष्ट है कि उसने लौकिक एवं धार्मिक सत्ता के बीच वैसी ही संघर्ष की आशंका उत्पन्न की जैसा हेनरी तृतीय की मृत्यु के बाद साम्राज्य में उठ खड़ा हुआ था।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि लौकिक और धार्मिक सत्ताओं के सम्बन्ध बिगड़ रहे थे तथा हमारे मत में यह कहना उचित ही है कि किसी भी मतभेद को प्रकट करने वाली विशेष घटना के पीछे एक अधिक सामान्य कारण था और यही कारण है कि हेनरी तृतीय के देहावसान के बाद लौकिक सत्ता सुधार के प्रयत्न में धार्मिक सत्ता का सहयोग देने से विमुख हो गई थी तथा धर्म विक्रय एवं पादरियों की लौकिकता जैसे दोषों के बने रहने के लिए उत्तरदायी प्रतीत होती थी। इन परिस्थितियों में पोप ने लौकिक सत्ता के धार्मिक नियुक्तियों में हस्तक्षेप के नियंत्रण अथवा निषेध की नीति अंगीकार की। यह उचित या अनिवार्य भी माना जा सकता है किन्तु यह मानना होगा कि यह कदम लगभग क्रांतिकारी था।

इस ग्रन्थ के प्रथम भाग में हम देख चुके हैं कि सामान्यत यह विवादास्पद नहीं था कि बिशप अथवा मठाधीश की नियुक्ति में राजा या सम्राट का भी यथोचित स्थान है जबकि इन बिशपों के चुनाव में धर्म प्रदेश विशेष के पादरी तथा जनता के अधिकार और उनकी अभिपुष्टि में अधिधर्माध्यक्ष तथा प्रान्त के अन्य बिशपों के अधिकार सामान्यत मान्य थे। वास्तविक व्यवहार में निस्संदेह राजा ही इन नियुक्तियों को प्राय मतदाताओं की इच्छा का थोड़ा ध्यान रखकर कर लेता था किन्तु यह मानना अतिशयोक्ति पूर्ण होगा कि कोई भी उत्तरदायी व्यक्ति उनको उपेक्षणीय मानता था। यद्यपि यह सत्य है कि इन अधिकारों के पारस्परिक समायोजन के प्रश्न को लेकर ही सर्वप्रथम भावी संकट के चिह्न

प्रकट हुए। हम उस बढ़ते हुए आग्रह के कुछ स्पष्ट प्रमाण पहले ही देख चुके हैं जिसमें कि सुधारवादी चर्च के सदस्य तथा चर्च की परिषदें धर्म प्रदेश में पादरियों तथा जनता द्वारा बिशप के निर्वाचन में राय दिए जाने के अधिकार के बारे में बल देने लगे थे। हम यह भी देख आए हैं कि कितने बलपूर्वक 1049 ई. में राइम्स की परिषद् ने इस सिद्धान्त पर बल दिया कि कोई भी व्यक्ति चर्च के अधिकार-पद पर पादरियों एवं जनसाधारण द्वारा निर्वाचन बिना नियुक्त नहीं किया जाए।[11] और हम यह भी देख चुके हैं कि मेंज की परिषद् ने किस प्रकार बेसान्सों के आर्चबिशप पद के एक दावेदार को इस स्पष्ट तर्क पर कि उसका निर्वाचन जनसाधारण एवं पादरियों द्वारा नहीं हुआ है अस्वीकार कर दिया।[12] हसफील्ड का लैम्बर्ट ट्रीयर के पादरियों तथा जनता के विक्षोभ का वर्णन करता है जबकि 1066 ई. में आर्चबिशप एबरहार्ड की मृत्यु होने पर क्यूनो को कोलोन के आर्चबिशप के हस्तक्षेप के कारण उनकी राय के बिना नियुक्त कर दिया गया था।[13]

हम सुधारवादी दल के दो प्रमुख लेखकों अर्थात् कार्डीनल हुम्बर्ट एवं पीटर डेमियन के कुछ सिद्धान्तों पर विचार करने का पहले ही अवसर मिल चुका है अब हम इस प्रश्न के अन्य के दृष्टान्तों के लिए पुनः उनके ग्रन्थों पर दृष्टिपात करना चाहिए किन्तु इस बात को स्पष्ट कर देना चाहिए कि कम से कम प्रारम्भ में सर्वाधिक प्रमुख सुधारक भी लौकिक सत्ता के धार्मिक पदों की नियुक्ति में लौकिक सत्ता के इस अधिकार को अस्वीकार नहीं करते थे कि इसका भी उसमें कुछ भाग है। एक स्थान पर कार्डीनल हुम्बर्ट अत्यन्त प्रबल शब्दों में न्यायसंगत एवं विधिविहित नियुक्ति की शर्तों को प्रस्तुत करता है। वह कहता है कि जिस व्यक्ति का निर्वाचन धार्मिक पद के लिए होना है उसका चुनाव पहले पादरियों द्वारा होना चाहिए फिर उसकी माँग जनता द्वारा होनी चाहिए तब ही उसका अधि धर्माध्यक्ष की स्वीकृति से प्रान्त के बिशपों द्वारा अभिषेक किया जाना चाहिए। इनमें से किसी भी एक शर्त का पालन किए बिना जिसका अभिषेक हुआ है उसे वास्तविक नहीं अपितु मिथ्या बिशप माना जाए।[14] हुम्बर्ट के शब्द वास्तव में दो अन्य प्रश्नों को जन्म देते हैं एक तो बिना किसी निश्चित धर्म क्षेत्र के बिशप की नियुक्ति के अनौचित्य के सम्बन्ध में दूसरा अधिधर्माध्यक्ष तथा रोम के धर्मासन के मध्य सत्ता के पारस्परिक सम्बन्ध के विषय में किन्तु हम यहाँ इनका वर्णन नहीं कर सकते।

दूसरे स्थान पर वह समकालीन राजकुमारों की धृष्टता एवं धन लिप्सा की निन्दा करता है जिनके द्वारा सभी दैवी तथा मानवीय कानूनों की अवहेलना करके धार्मिक नियुक्तियों के सभी अधिकारों को हथिया लिया गया था तथा इनके विपरीत पूर्वी साम्राज्य (Imperium Transmarinum) की परिस्थिति से तुलना करता है जहाँ ऐसी नियुक्तियों को पूर्णतया प्रधान गिरजाघर एवं बिशपों पर छोड़ दिया गया था।[15]

यदि हम इन वाक्यांशों को पृथक कर लें तो हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि हुम्बर्ट धार्मिक नियुक्तियों में लौकिक सत्ता को किसी भी प्रकार के योगदान से वञ्चित रखना चाहता था किन्तु जब हम उसी ग्रन्थ के एक अन्य लेखांश पर विचार कर तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि उसका यह अभिप्राय नहीं था। यहाँ वास्तव में वह क्षोभपूर्वक ऐसी नियुक्तियों में समस्त उचित क्रम के तिरस्कार की शिकायत करता है। फलस्वरूप जो पहला

होना चाहिए वह अंतिम तथा अन्तिम पहला हो जाता है। चयन में लौकिक सत्ता प्रथम स्थान का दावा करती है तथा जनता पादरी एवं यहां तक कि प्रमुख धर्माध्यक्ष को भी उनकी बात माननी होती है चाहे वह उससे सहमत हो अथवा नहीं। तथापि यह ध्यान में रखना चाहिए कि नियुक्ति का सच्चा तरीका बताते हुए वह कहता है कि प्रमुख धर्माध्यक्ष को पादरियों के द्वारा निर्वाचित की पुष्टि करनी चाहिए तथा राजा को जनता की माँग को।[16] अर्थात् हुम्बट बहुत स्पष्टतया यह स्वीकार करता है कि राजा से परामर्श लेना चाहिए तथा उसकी अनुमति प्राप्त करनी चाहिए।

यदि हम पीटर डेमियन को लें तो उसके ग्रन्थों के लेखांशों से[17] जिनको हम पहले उद्धृत कर आये हैं यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि उसकी स्थिति भी हुम्बट से भिन्न नहीं है। वह लौकिक सत्ता द्वारा अभियाचित अधिकारों के दुरुपयोग का प्रबल विरोध करता है तथा बिशप के निर्वाचन में पादरियों एवं जनता के अधिकारों पर बल देता है किन्तु साथ ही वह बहुत निस्संकोच होकर यह स्वीकार करता है कि लौकिक सत्ता का भी इस प्रकार की नियुक्ति में न्यायसंगत एवं उचित स्थान है।

हम समझते हैं कि सुधारवादियों की स्थिति स्पष्ट थी वे धार्मिक निर्वाचनों की स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखने के लिए तथा लौकिक सत्ता के दावों को अपने मतानुसार उचित सीमा तक संकुचित करने के लिए कृतनिश्चय थे किन्तु वे इनको पूर्णतया अस्वीकार भी नहीं करते थे। हम इस मामले को और आगे बढ़ा सकते हैं क्योंकि स्वयं ग्रेगोरी सप्तम का कम से कम अपने अधिकार काल के प्रथम वर्ष का पत्राचार यह सिद्ध कर सकता है कि वह धार्मिक नियुक्तियों में लौकिक सत्ता के अधिकारों को अस्वीकार नहीं करता था।

1073 ई० में लियोंस के आर्च बिशप हुम्बट को लिखे गए एक पत्र में जिसको पहले उद्धृत किया जा चुका है वह उसे किसी नन्दिक नामक व्यक्ति का अभिषेक फ्रांस के राजा की स्वीकृति की प्रतीक्षा किए बिना ही करने का निर्देश देता है जिसे ओटन के धर्म-क्षेत्र द्वारा बिशप पद के लिए चुना गया था।[18] निस्सन्देह ग्रेगोरी यहाँ राजा के अधिकारों की अवहेलना करता है किन्तु वह उसकी उपेक्षा एवं विलम्ब के कारण ही ऐसा करता है। ल्यूका के निर्वाचित बिशप एनसलम को लिखे गए उसी वर्ष के पत्र में वह उसे राजा के द्वारा बिशप पद की प्रतिष्ठा प्राप्त करने का निषेध करता है जब तक कि वह धर्म बहिष्कृत लोगों से सम्पर्क त्याग कर रोमन धर्मपीठ से सन्धि नहीं कर लेता है।[19] किन्तु यह उल्लेखनीय है कि यह निषेध केवल तात्कालिक परिस्थितियों के ही कारण है। 1074 ई० में न्दिये के काउंट (Die) तथा उस चर्च के निष्ठावान् लोगों को लिखे गए एक पत्र में वह काउन्ट द्वारा अन्य सभी की सहमति से बिशप के निर्वाचन का उल्लेख करता है—अनुमानतः उसका अभिप्राय उस क्षेत्र के पादरियों एवं जनता से है।[20] पुनः उसी वर्ष फर्मों के काउन्ट ह्यूबर्ट तथा वहाँ की जनता को लिखे गए एक पत्र में वह कहता है कि उसने चर्च को तब तक प्रधान उपयाजक को सौंप दिया है जब तक कि उसके स्वयं की देख रेख में राजा की राय एवं अनुमति से बिशप पद के लिए उपयुक्त व्यक्ति न मिल जाय।[21] एरेगान के राजा सको (Sancho) को लिखे गए 1075 ई० के एक पत्र में वह बिशप के गिरते हुए स्वास्थ्य के कारण एक धर्म-क्षेत्र में की जाने वाली व्यवस्था के बारे में विचार विनिमय करता है। राजा

तथा बिशप ने दो पादरियों के नाम सुझाए हैं जिनमे मे एक को बिशप बनाना है। ग्रगोरी दोनों को इस आधार पर अस्वीकार कर देता है कि व रगला के पुत्र हैं साथ ही यह वादा करता है कि यदि उपयुक्त चरित्र के व्यक्तियों के नाम जनता की सहमति से राजा एव बिशप द्वारा प्रस्तावित हो तो वह उस पर विचार करेगा।[22] हेनरी चतुर्थ को 1076 ई की जनवरी म लिखे गए एक पत्र द्वारा जिसम वह उसको फर्मो तथा स्पोलेतो (Spoleto) के बिशप पद उन दो व्यक्तियों को दे देने के लिए भर्त्सना करता है जिनसे वह अपरिचित है वह केवल यह सन्देह प्रकट करता है कि क्या चर्च किसी भी व्यक्ति द्वारा देय है परन्तु वह स्पष्टत यह नहीं कहता कि राजा को इस विषय म वसा करने का कोई अधिकार नहीं है।[23]

ग्रेगोरी सप्तम द्वारा अयाजकीय प्रतिष्ठापन के विरुद्ध आदेश प्रकाशित करने के बाद भी उसके पत्र व्यवहार म ऐसे वाक्यांश पाए जाते हैं जो बिशप पद की नियुक्ति म लौकिक सत्ता के कतिपय अधिकार को स्वीकार करते प्रतीत होते है। लियो के बिशप ह्यू को 1077 ई म लिखे गए पत्र म वह लिखता है कि फ्रांस के राजा फिलिप न उस केनेब्रिया म सत यूफेमिया के मठाधीश को शान्त का बिशप बनाने को कहा है किन्तु वह कहता है कि वह वसा नहीं करेगा जब तक कि उसे उस धर्म-क्षेत्र की जनता की इच्छा का पर्याप्त ज्ञान न हो जाय।[24] स्वाबिया (Suabia) के रुडाल्फ को जो पारखाम्भ की विधान सभा द्वारा 1077 ई म जर्मनी का राजा चुना गया था लिखे गए एक पत्र में वह मेग्डेबग के आर्च बिशप के निर्वाचन के बारे म इस प्रकार विचार विनिमय करता है जसे वह विषय रुडोल्फ से सम्बन्ध रखने वाला हो तथा केवल यह सकेत करता है कि यदि वे उसकी राय लेने को तयार हो तो व उन दो पादरियो म से एक को चुनेंगे जिनकी वह सिफारिश करे किन्तु यह आर्चबिशप्स बिशप्स पादरियो एव जनसाधारण की सहमति तथा निर्वाचन द्वारा किया जाना चाहिए।[2]

तब यह मानना एक त्रुटि प्रतीत होती कि चच का सुधारवादी दल बिशपों की नियुक्ति म लौकिक सत्ताधारियों के परम्परागत स्थान को पूर्णतया समाप्त करने पर तुला हुआ था। यह प्रतीत होता है कि यद्यपि वह यह अनुभव करता था कि वास्तव म तात्कालिक ढग और तरीके जिनके माध्यम से ये अधिकार प्रयोग म लाए जाते थे अस्वीकाय थे तथा धार्मिक चुनावों की स्वतन्त्रता पर बल दिया जाना चाहिए एव उसे सुरक्षित रखना चाहिए तो भी वास्तव म स्वय लौकिक सत्ता पर नहीं अपितु उनके अधिकार की मात्रा एव सीमा तथा उसके प्रयोग के स्वरूप पर उसका आक्रमण था।

जसा हम अगले अध्यायों म देखेंगे यह प्रश्न कि प्रतिष्ठापन किन स्वरूपों के अन्तगत प्रदान किया जाना था इस सघर्ष म एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त करने लगा इसलिए इस स्थान पर इस प्रश्न पर किए गए एक प्रारम्भिक सुविचारित एव तर्कसगत विचार विमर्श पर ध्यान देना सुविधाजनक होगा। कार्डीनल हम्बर्ट का धर्म विक्रयी व्यक्तियो के विरुद्ध ग्रन्थ जिसका पहले हम कई बार उल्लेख कर चुके हैं 1058-59 ई म लिखा गया था तथा उसके वाक्य जिनके कुछ शब्दों को हमने उद्धृत किया है इस प्रश्न का विस्तारपूर्वक वर्णन करते है। जसा हम देख चुके हैं, हम्बर्ट स्वीकार करता है कि राजा

की स्वीकृति जनसाधारण की इच्छा से मेल खाने वाली होनी चाहिए किन्तु वह शिकायत करता है कि विधानों के उल्लंघन में सभी अनुपातों एवं व्यवस्थाओं को पूर्णतया नष्ट कर दिया गया है तथा लौकिक सत्ता बिशपों की नियुक्ति में प्रथम एवं सर्वोच्च स्थान का दावा करती है तथा पादरियों जनता एवं अधिधर्माध्यक्ष को स्वीकृति देनी ही होती है चाहे वे सम्मत हों अथवा नहीं तथा उसकी मान्यता है कि इन परिस्थितियों में की गई नियुक्तियाँ वास्तव में अवैध हैं। वह स्वीकार करता है कि पादरी को धर्म-दण्ड एवं मुद्रा प्रदान करना जनसाधारण का अधिकार नहीं हो सकता क्योंकि ये धार्मिक सत्ता एवं पद के संस्कारगत प्रतीक हैं तथा इनके एक बार प्रदान किए जाने के बाद निर्वाचन के विषय में जनता अथवा पादरी को तथा अभिषेक के विषय में अधिधर्माध्यक्ष को कोई भी कार्य स्वातन्त्र्य नहीं रहता।[8]

स्पष्टतः हुम्बर्ट यह अनुभव करता था कि जब लौकिक सत्ता धर्मदण्ड या मुद्रा से प्रतिष्ठापित करती है तो इससे धार्मिक नियुक्ति के विषय में उसकी स्थिति की पूर्णतया मिथ्या धारणा बनती है ये धार्मिक पद के प्रतीक थे जिन्हें लौकिक सत्ता प्रदान नहीं कर सकती तथा एक बार प्रदान किए जाने पर ये निर्वाचकों एवं अधिधर्माध्यक्ष के अधिकारों का अतिक्रमण करते हैं एवं उनसे ऊपर हैं। अतः यह प्रतीत होता है कि कम से कम 1058–59 ई. तक बिशप का मुद्रा एवं धर्म दण्ड से प्रतिष्ठापन का विरोध एक निश्चित स्वरूप अंगीकार कर चुका था तथा इन्हीं विषयों के सम्बन्ध में धीरे धीरे धार्मिक नियुक्तियों में लौकिक सत्ता के अधिकार के दावे के सम्बन्ध में सुधारवादी दल की स्थिति को एक निश्चित स्वरूप प्राप्त हुआ। किन्तु हमें निश्चित ही यह ध्यान रखना चाहिए कि इस विषय के सम्पूर्ण साहित्य में प्रतिष्ठापन शब्द के साथ एक अस्पष्टता जुड़ी हुई है हम कभी भी निश्चयपूर्वक नहीं कह सकते कि इस शब्द का प्रयोग बिशप के धर्म-दण्ड एवं मुद्रा प्रदान के विशिष्ट अर्थ में किया गया है अथवा नियुक्ति के सामान्य अर्थ में।

हम उन परिस्थितियों के सामान्य स्वरूप पर विचार कर चुके हैं जिनसे ग्रेगोरी सप्तम एवं हेनरी चतुर्थ के बीच प्रतिष्ठापन के प्रश्न को लेकर संघर्ष उत्पन्न हुआ किन्तु इसका वर्णन करने से पूर्व हम एक विशेष विवाद पर ध्यान देंगे जो कि कुछ समय से चला आ रहा था तथा अन्तिम विस्फोट होने में जिसका पर्याप्त मात्रा में महत्त्व हो सकता है। यह मिलन (Milan) का प्रश्न था।

पादरियों के विवाह को प्रतिबन्धित करने के लिए विशेषतः 1059 ई. में पोप निकोलस के आदेश के बाद पोप पद के फलस्वरूप प्रयत्नों के द्वारा विशेषतः मिलन में तथा अन्य स्थानों पर उत्पन्न हुए गम्भीर संकटों के बारे में हम यहाँ विचार नहीं कर सकते। 1059 ई. में ल्यूका के आर्चबिशप तथा पीटर डेमियन को इन संकटों से निपटने के लिए मिलन भेजा गया था तथा यह साफ है कि मिलन शहर में पोप के उस नगर पर सत्ता के यथार्थ स्वरूप के बारे में गहरा मतभेद थे।[9] हमारा सम्बन्ध यहाँ उस प्रश्न से है जो पोप तथा सम्राट के मध्य मिलन के आर्चबिशप के चुनाव को स्वीकार अथवा अस्वीकार कर देने के अधिकार के सम्बन्ध में उठ खड़ा हुआ था। इस संघर्ष का विस्तृत विवरण आरनल्फ के मिलन के आर्चबिशपों के इतिहास में उपलब्ध होता है। यद्यपि यह

स्पष्ट है कि वह सम्राट के दल के पक्षपाती के रूप म लिख रहा है तथापि उसका वर्णन सघपरत दलो के दृष्टिकोणो को प्रस्तुत करने की दिशा म महत्त्वपूर्ण है। उसकी मान्यता है कि इटेलियन साम्राज्य की यह प्राचीन प्रथा रही है कि बिशप की मृत्यु के बाद राजा *पादरियो एव जनता के अनुरोध पर उसके उत्तराधिकारी को नियुक्त कर दता है।* वह कहता है कि रोमवासी इसे न्यायसगत नही मानते थे तथा हिल्डेब्रण्ड ने जबकि वह रोम का मुख्य उपयाजक था प्राचीन प्रथा को मिटाकर एक नया नियम लागू करने का प्रयत्न किया कि चुनाव के लिए रोम के धर्मपीठ की स्वीकृति आवश्यक समझी जाए।[?] 1071 ई मे आर्चबिशप विडो की मृत्यु पर यह सघर्ष छिड़ गया। हर्लेम्बाल्ड ने जो विवाहित पादरियो के विरुद्ध आन्दोलन का एक प्रमुख नेता था एटटो नाम के एक व्यक्ति का चुनाव रोम की अनुमति से कुछ पादरियो एव जनता द्वारा करवा लिया। आरनल्फ कहता है कि अधिकाश पादरी एव बुद्धिमान जनता राजा के अधिकारो एव प्राचीन प्रथा को स्वीकार करने क पक्ष मे थे तथा प्रान्त के बिशपो ने राजा की अनुज्ञा प्राप्त करके नोवारा म सम्मेलन किया तथा गोटोफ्रिड नामक व्यक्ति का आर्चबिशप पद पर अभिषेक कर दिया। हिल्डब्रण्ड ने 1073 ई म पोप पद प्राप्त करने के बाद गोटोफ्रिड तथा उसके अभिषेक-कर्त्ताओ को एक धर्मसभा मे बुलाया तथा एटटो के निर्वाचन की पुष्टि कर दी।[30] कुछ समय के लिए हेनरी चतुर्थ चुप हो गया तथा उसने पूर्वोद्धृत पत्र मे अपने अपराधों को अगीकार करके मिलन के बारे म पोप के निर्णय को स्वीकार करने की सहमति व्यक्त कर दी।[31]

1075 ई मे ग्रेगोरी सप्तम ने एक आदेश के द्वारा सभी प्रयाजकीय प्रतिष्ठापन को निषिद्ध कर दिया। खेद है कि हम उस आदेश के शब्दो का कोई विवरण उपलब्ध नही होता। ग्रेगोरी की पजिका मे यह विद्यमान नही है तथा इसके विषय म केवल सक्षिप्त विवरण आरनल्फ के उपयुक्त ग्रथ मे उपलब्ध होता है। उसकी सूचना इतनी छोटी एव सक्षिप्त है कि हम निश्चयपूर्वक नही कह सकते हैं कि वह आदेश के ठीक शब्दो को प्रस्तुत कर रहा है। वह कहता है कि ग्रेगोरी ने रोम की एक धर्मसभा म राजा (हेनरी चतुर्थ) को बिशप पद प्रदान करने मे किसी भी अधिकार (Ius) को प्रदान करने का निषेध कर दिया तथा उसने चर्चों के प्रतिष्ठापन से सभी जनसाधारण को हटा दिया।[32] *यह सम्भव है कि आज्ञप्ति को तत्काल प्रकाशित करना अभिमत न हो तथा ग्रेगोरी अपने* शब्दो को बदलने की सम्भावना पर विचार करने को प्रस्तुत हो जसा कि हेनरी चतुर्थ को जनवरी 1076 ई म लिखे गए पत्र मे विवक्षित होता है।[33] आरनल्फ का कथन *सार रूप म सत्य है यह केवल अभी उल्लिखित वर्णन से ही नही अपितु उसके पत्र-व्यवहार* म पाए जाने वाले इस विषय पर अन्य स्पष्ट उल्लेखो से भी स्पष्ट प्रतीत होता है।

मार्च 1077 ई मे ट्रूस के आर्चबिशप को लिखे गए एक पत्र म ग्रेगोरी कहता है कि उसकी जानकारी मे *ब्रिटेनी क राजा भविष्य मे बिशप के प्रतिष्ठापन के अधिकार के* दावे तथा अपनी सहमति बेचने की प्राचीन किन्तु विकृत प्रथा को त्यागने के लिए सहमत हैं।[34] मई 1077 मे दिये के बिशप हूा को लिखे गए पत्र मे वह गेराल्ड की कम्बराई के बिशप पद पर नियुक्ति की परिस्थितियो का वर्णन करता है। उसका निर्वाचन पादरियो

एव जनता द्वारा हुआ तथा तदुपरान्त उसने बिशप पद को हेनरी चतुर्थ से प्राप्त किया। गेराड अपनी सफाई म यह तक देता है कि उसे ग्रेगोरी की उस आनप्ति का ज्ञान नही था—*जिसमे यह निषिद्ध घोषित किया गया था तथा यह कि हेनरी को धर्म-बहिष्कृत कर* दिया गया था। अरतु ग्रेगोरी उसके निर्वाचन को स्वीकार करने के लिए तयार है किन्तु इस शर्त पर कि गेराड इसकी (अपने अज्ञान की) राइम्स प्रान्त के आचबिशप एव बिशपो की एक सभा म घोषणा करे। ग्रेगोरी दिये के बिशप को भी इस परिषद् मे निर्देश देता है *कि उपस्थित सभी लोगो को यह बताए कि कोई भी लौकिक सत्ता या व्यक्ति इस प्रकार* के पद प्रदान करने में हस्तक्षेप नही करेगा तथा कोई भी अधिधर्माध्यक्ष या बिशप जो ऐसे व्यक्ति का अभिषेक करता है जिसे बिशप पद की प्राप्ति अयाजक से हुई हो अपने पद एव गौरव से वचित कर दिया जाएगा।[35] 1078 ई के माच मास मे ग्रेगोरी ने स्पायस *के बिशप हूजमान के इसी स्पष्टीकरण को कि उसे पोप की घोषणा का ज्ञान नहीं था* मान लिया तथा इसके परिणामस्वरूप उसके बिशप पद की पुष्टि कर दी।[36]

अत यह स्पष्टत प्रतीत होता है कि आरनल्फ का कथन सही है और ग्रेगोरी ने 1075 ई म हेनरी चतुर्थ के स्थान तथा बिशप पद पर अयाजक नियुक्तियो के सम्बन्ध *म एक आज्ञप्ति जारी की थी। रोम म नवम्बर 1078 ई मे सम्पन्न एक परिषद् की* आनप्ति मे अयाजकीय प्रतिष्ठापन की निन्दा की स्पष्ट रूप से अभिव्यक्ति की गई है। इस घोषणा में यह कहा गया है कि कई मामलो मे धम पिताओ के आदेशों के विपरीत चर्चों के प्रतिष्ठापन अयाजको द्वारा किए गए हैं अत यह व्यवस्था दी जाती है कि कोई भी पादरी बिशप पद मठ अथवा चच का प्रतिष्ठापन सम्राट या राजा के हाथों से प्राप्त नही करेगा अथवा किसी अयाजक पुरुष या स्त्री के हाथो से प्राप्त नही करेगा और यदि कोई वसा करता है तो वह प्रतिष्ठापन अवध होगा तथा उसे प्राप्त करने वाला व्यक्ति धम बहिष्कृत कर दिया जाएगा।[37] यह भी व्यवस्था दी गई है कि सभी नियुक्तियाँ जो मूल्य देकर या पादरियों एव जनता की स्वीकृति बिना अथवा उनकी अनुमति बिना जिनको कि अभिषेक का अधिकार है प्राप्त की गई हैं अवधानिक मानी जाएँगी।[38] माच 1080 ई की रोमन परिषद् ने इस निषेध को दोहराया तथा इसम कुछ महत्त्वपूर्ण व्यवस्थाए जोड दीं। यदि कोई व्यक्ति भविष्य मे बिशप अथवा मठाधीश के पद को किसी अयाजक के हाथो से प्राप्त करता है तो उसे बिशप अथवा मठाधीश नही गिना जाएगा तथा प्रतिष्ठापन देने अथवा प्राप्त करने वाला व्यक्ति धम बहिष्कृत होगा।[39] जब किसी चच में कोई स्थान रिक्त हो तो पोप अथवा अधिधर्माध्यक्ष द्वारा एक बिशप भेजा जाएगा जिसके निर्देशानुसार पादरी और जनता बिना लौकिक हस्तक्षेप के भय अथवा पक्षपात के एक पल्ली-पुरोहित (Pastor) को पोप अथवा अधिधर्माध्यक्ष की सहमति से चुनगे। यदि वे अन्यथा करें तो निर्वाचन अवध होगा तथा वे अपना निर्वाचन का अधिकार खो देंगे जो कि रोम के पोप अथवा अधिधर्माध्यक्ष मे निहित हो जाएगा।[40]

रोम की 1080 ई की परिषद् की इन आनप्तियो से बिशपो एव मठाधीशा की नियुक्ति के विषय म लौकिक सत्ता के सम्बन्धो के विषय मे ग्रेगोरी सप्तम का दृष्टिकोण पूर्णत विकसित हो गया था। किन्तु इसका यह अभिप्राय नही है कि उसके दृष्टिकोण की

व्याख्या में हम पूर्णतया निश्चित हैं। वह दृढ़तापूर्वक और स्पष्टता से सभी अयाजकीय प्रतिष्ठापन का निषेध करता है किन्तु क्या उसका अभिप्राय धार्मिक नियुक्तियों में लौकिक सत्ता के हाथ का पूर्णतया निषेध है यह पूरा रूप से स्पष्ट नहीं। जसा हम पहले देख चुके हैं कि प्रतिष्ठापन शब्द का एक पारिभाषिक अर्थ भी है। किन्तु सम्भव उसका प्रयोग पारिभाषिक अर्थ म नहीं होता था तथा हम निश्चयपूर्वक नहीं कह सकते कि इन वक्तव्यों एव ग्रगोरी की आज्ञप्तियों में जिनका हम उल्लेख कर आए हैं इस शब्द का यही अर्थ है। इसके बाद उठने वाले सघर्ष के दौरान ही ये अस्पष्टताएँ धीरे धीरे दूर हुइ।

सन्दर्भ

1 देखें भाग 2 अध्याय 1।
2 Lambert of He sf ld 1070
3 *Id d 1071 (p 1108)*
4 S gf ed Archb shop of M i tz, *Ep t l e s M g v 1 46 p 142*
5 G g y VII R g strum 29 ( )
6 Lambert An al 1074 (d 215).
7 Greg y VII R g i 35
8 Greg y VII R g 36
9 Id d 5
10 Cf Gr g ry VII R g i 18 & 32
11 देख भाग 2 अध्याय 1।
12 देख भाग 1 अध्याय 3।
13 Lambert of H f ld [An les 1066 (M G H S S p 173)
14 H mbert Ad e S m a os 5
15 *Id d 10*
16 Id Ad sus S mon cos 6
17 देखें भाग 1 अध्याय 3।
18 देखें भाग 2 अध्याय 2।
19 *G gory VII R gistrum 1*
20 Id id 69
21 *Id id u 38*
22 Greg ry VII R g' i 50
23 *Id id i 10*
24 Id id v 11
25 G egory VII Ep C ll 26
26 H mbert Ad S m 6
27 *i tola II Epp 7 8*
28 P t r D m a Opusculum v
29 Arnulfus Ge t Arch p scop rum Med la e m i 21
30 A ulfu Ge t Arch p scoporum M d l um iu 25
31 देखें भाग 2 अध्याय 2।
32 Arn lfu G t Arch p coporum Med l um 7
33 G gory VII R g 10
34 Id d 13
35 G eg ry VII Reg 22
36 Id d 18
37 G g VII Reg 5 (b).
38 Id d 5 (b)
39 Id d u 14-s p 398
40 Id d 14 ( ) p 400

तृतीय अध्याय

"प्रतिष्ठापन" प्रश्न पर वादविवाद–(1)

हमने कुछ उन परिस्थितियो को खोजने का प्रयास किया है जिनके परिणामस्वरूप 1075 ई म अयाजकीय प्रतिष्ठापन निषिद्ध कर दिया गया। अब हम उस सघर्ष के इतिहास पर विचार करना है जिसे इसने जन्म दिया तथा विवाद की विषयवस्तु के वास्तविक स्वरूप पर जिस रूप मे वह विवाद-कर्त्ताओं के मस्तिष्क म उदित हुई विचार करना है। जसा हम देखेंगे विवाद प्राय प्रतिष्ठानो मे पादरी के धर्म-स्थल एव धार्मिक मुद्रा के प्रयोग के प्रश्न की ओर अभिमुख होता है किन्तु यह स्पष्ट है कि वास्तविक विवाद का यह विषय नहीं था। पोप की ओर से यह सिद्धान्त कि धार्मिक नियुक्तियाँ लौकिक सत्ता से पूणतया नियन्त्रित नही होनी चाहिए तथा सामान्य के दृष्टिकोण से यह सिद्धान्त कि लौकिक सत्ता का भी कम प्रकार की नियुक्ति म कुछ स्थान है वास्तव म ये ही महत्त्व पूण विषय थे।

साम्राज्यिक स्थिति का सयत विवरण 1081–82 ई मे ट्रीयर के वनरिश द्वारा लिखे गए वरदून के बिशप थियोडेरिक के नाम से रचित पत्र या ग्रन्थ मे उपलब्ध होता है।[1] वह स्वीकार करता है कि इस मान्यता म कुछ तक आभासित होता है कि बिशपो की नियुक्ति राजा द्वारा नही की जानी चाहिए। तथापि वह शिकायत करता है कि इसका निषेध अवाछित उग्रता एव शीघ्रता के साथ किया गया है उसका वास्तविक प्रयोजन धम के प्रति उत्साह नही किन्तु राजा (अर्थात् हेनरी चतुथ) के प्रति घृणा है। स्वाबिया के रूडोल्फ तथा अन्य राजाओ के द्वारा की गई नियुक्तियाँ स्वीकार कर ली गई हैं अथवा कम से कम उनका ख्याल रखा गया है जबकि हेनरी चतुथ के प्रति निष्ठावान बिशपो की चाहे उनका सामान्य स्वीकृति से निर्वाचन अथवा स्वागत ही क्यो न हुआ हो निन्दा की गई तथा उनको धम-बहिष्कृत किया गया है। वह आग यह तक प्रस्तुत करता है कि राजा द्वारा नियुक्ति की यह प्रथा कम से कम वर्षों युगों से विद्यमान एव स्वीकृत है तथा वह इजराइल के राजा द्वारा पुरोहितो की नियुक्ति का उल्लेख करता है मेकेबियन युग (Maccabean Period) के पूव दृष्टान्त उद्धृत करता है तथा ग्रेगोरी महान् तथा सेविल

के इसीडोर (*Isidore of Seville*) के लेखों से अनेक अंश प्रस्तुत करता है।[2]

साम्राज्यिक स्थिति को और विस्तृत रूप में सम्भवत 1086 ई की एक रचना में जो पेरेश के बिशप विडो द्वारा लिखी गई है निरूपित किया गया है।[3] वह बिशपों के साम्राज्यिक प्रतिष्ठापन के विरुद्ध तर्कों का एक संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करता है तथा सत ग्रम्बरोस की रचनाओं से विशेषत कुछ वाक्य उद्धत करता है जिनको कि इन तर्कों के समर्थन में प्रस्तुत किया जा सकता है किन्तु वह उनको यह कहकर अलग कर देता है कि ये विवाद विषय से संगत नहीं हैं। वह इस पर बल देता है कि बिशप के पद के दो पहलुओं में स्पष्ट विभेद *करना आवश्यक है। एक ओर उसका पद आध्यात्मिक है तथा* उसकी समस्त आध्यात्मिक शक्तियाँ उसे पवित्र आत्मा (Holy Spirit) द्वारा दूसरे बिशपों के माध्यम से प्राप्त होती हैं। दूसरी ओर उसके लौकिक अधिकार एवं सम्पत्तियाँ हैं जो उसे राजा द्वारा प्रदान की जाती हैं। पवित्र आत्मा द्वारा उसे प्रदान की गई आध्यात्मिक शक्तियाँ साम्राज्यिक सत्ता के अधीन नहीं हैं किन्तु लौकिक वस्तुएं क्योंकि लौकिक सत्ता द्वारा प्रदान की जाती हैं अत उनके स्वामित्व का उस सत्ता के आनुक्रमिक धारणकर्त्ताओं *द्वारा पुनर्नवीकरण किया जाना चाहिए। इसी के आधार पर वह इस तथ्य की व्याख्या* एवं औचित्य सिद्ध करता है जैसा वह कहता है कि पोप हेड्रियन प्रथम तथा पोप लियो तृतीय द्वारा सम्राटों को प्रतिष्ठापन का अधिकार प्रदान किया गया था। वह इसमें यह भी जोड़ देता है कि धार्मिक चुनावों में प्राय घटने वाली सामान्य अशान्ति को रोकने के लिए भी ऐसा किया गया था।[4]

विडो धार्मिक निर्वाचनों में राजा की न्यायसंगत स्थिति के बारे में अपने मत की परिपुष्टि पोप निकोलस द्वितीय की घोषणा की धाराओं से भी करता है जैसा कि वह समझता है कि इसके अनुसार कोई भी व्यक्ति बिना साम्राज्यिक स्वीकृति के रोम का बिशप नहीं हो सकता। उसके अनुसार बड़ी सीमा तक इसका कारण यह तथ्य है कि धर्माध्यक्षीय निर्वाचनों में लौकिक सत्ता के नियन्त्रण न होने पर जो आनुषंगिक उपद्रव *होते थे विशेष रूप से हेनरी तृतीय के हस्तक्षेप से पूर्व पोप के धर्मासन के तीन अधिभोक्ताओं* के मध्य संघर्ष इसके साथ ही साथ यह तथ्य भी कि बिशपों के सभी लौकिक अधिकार राजाओं और सम्राटों से प्राप्त होते हैं तथा उनके प्रदान किए बिना धारण नहीं किए जा सकते और वह इस पर बल देता है कि इसी अधिकार के कारण पादरी किसी भी प्रकार के कराधान से मुक्ति का दावा कर सकता है। इसके बाद वह सेविल के इसीडोर से *ब्राउलियो (Braulio) के पत्र व्यवहार का उद्धरण देते हुए कुछ वाक्यांशों से यह निकालता* है कि इसीडोर बिशप पद की नियुक्ति में राजा का अधिकार मानता था। अन्त में वह कहता है कि जो यह मानते हैं कि बिशप की नियुक्ति केवल पादरी का ही कार्य है उन्हें स्मरण रखना चाहिए कि वह मूसा (Moses) ही था जो कि यद्यपि पुरोहित नहीं था जिसके द्वारा ईश्वर ने कानून प्रदान किए तथा पुरोहित वर्ग को आदेशित किया और यदि धार्मिक पद को धारण न करने वाले को इसके लिए अनुमति दी गई थी तो इसे अनुचित नहीं *मानना चाहिए कि सम्राट और राजा बिशप पद पर नियुक्ति करें क्योंकि उनका जो* अभिषेक होता है वह किसी सीमा तक पुरोहित से महानतर एवं अधिक गौरवशाली है तथा

उनको एक साधारण अयाजक नहीं समझना चाहिए।[5]

यदि हम इन तर्कों पर विचार करने का प्रयत्न करें और उनके महत्त्व को परिसीमित करें तो यह प्रतीत होगा कि विडो की दृष्टि में वास्तव में महत्त्वपूर्ण विचार यह था कि बिशप की लौकिक सम्पदा लौकिक सत्ता के अधीन ही उसकी मानी जा सकती है और राजा ही उसे प्रदान करता है। वह इससे भी परिचित है कि बिशपों की नियुक्ति के विषय मे लौकिक सत्ता के अधिकार के दावो के बारे में हेड्रियन प्रथम तथा लियो तृतीय के नकली दस्तावेजो के प्रमाणों के अतिरिक्त अनेक पूर्व दृष्टान्त थे जिनको कि जैसा प्रतीत होता है उसने सर्वप्रथम प्रयोग किया है तथा वह इस पर बल देता है कि साम्राज्यिक सत्ता चर्च में व्यवस्था स्थापित करने मे बहुत उपयोगी हो रही है। उसके अन्तिम तर्क के कि राजा और सम्राट अपने अभिषेक के कारण साधारण अयाजक नही माने जा सकते महत्त्व पर हमें पुन विचार करने का अवसर मिलेगा। सबसे महत्त्वपूर्ण मान्यता पहली थी क्योंकि यह 1122 ई में वार्म्स में हुए समझौते के स्वरूप का पूर्वाभास प्रदान करती प्रतीत होती है।

अब हम अयाजक प्रतिष्ठापन के निषेध के बारे मे ग्रेगोरी सप्तम के कार्यों के पूर्वतर समर्थकों के दृष्टिकोण एवं तर्कों की तुलना बेनेरिच तथा विडो के दृष्टिकोण से करनी चाहिए। इनमें सर्वप्रथम लौटेनबाख का मेनेगोल्ड है जिसका ग्रन्थ एड गेबेहरडम (Ad Gebehardum) सम्भवत 1085 ई मे लिखा गया था।

वह 1078 ई की रोमन परिषद् की अनुज्ञप्ति के रूप मे इस निषेध को उद्धृत करता है तथा उल्लेखनीय कटुतापूर्वक दावा करता है कि यह कैथोलिक परम्परा परिषद् के निर्णयों एवं धर्म पिताओ के नियमो का प्रतिनिधित्व करता है। वह विशेषत तथाकथित प्रेरितिक विधान (Apostolical Canons) के एक नियम पर बल देता है जो पोप लियो प्रथम की प्राय उल्लिखित उक्ति है कि कोई भी व्यक्ति बिशप नही माना जा सकता जिसको पादरियो द्वारा चुना न गया हो जनता द्वारा जिसकी माग न की गई हो तथा धर्माध्यक्ष के अनुमोदन से प्रान्त के बिशपो ने जिसका अभिषेक न किया हो तथा पोप सीलेस्टाइन प्रथम (Pope Celestine I) की समान रूप से सुपरिचित उक्ति भी (जिसे वह इनोसेन्ट प्रथम की उक्ति बताता है) कि कोई भी बिशप अनिच्छुक व्यक्तियो पर लादा नहीं जा सकता तथा वह तर्क प्रस्तुत करता है कि यदि यह सत्य है तो स्पष्ट है कि बिशपो को राजाओं और राजकुमारो द्वारा स्वेच्छा से नियुक्त नहीं किया जा सकता।[6]

कुछ आगे चलकर वह कार्डीनल हुम्बर्ट के ही समान शब्दो में जिनका हम पहले उल्लेख कर चुके हैं उस हेय कौशल की निन्दा करता है जिसके द्वारा अनेक व्यक्ति लौकिक अधिकारियो के कृपापात्र बनते थे तथा धार्मिक पदों को प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करते थे।[7]

तत्पश्चात् स्पष्टत बेनेरिच के तर्कों के सन्दर्भ में मेनेगोल्ड मकेबियन युग के तथाकथित पूर्व-दृष्टान्तो पर विचार करता है तथा निश्चयपूर्वक मानता है कि उनको गलत समझा गया था परन्तु यदि वास्तव मे वे वैसे नही भी होते तो भी वे किसी अधिकार से युक्त नहीं हैं क्योंकि मकेबियन पुस्तकें (Books of Maccabees) प्रामाणिक धर्म ग्रन्थ संग्रह का अंग नही हैं।[8] उसी प्रकार वह यह भी तर्क करता है कि सोलोमन द्वारा सैडोक को

उन्च पुरोहित नियुक्त करना एक गलती थी किन्तु यदि व० ठीक भी होता तो भी इससे कोई बात सिद्ध नहीं होती क्योंकि उस युग की परिस्थितियों को देख कर यदि राजा को वसा अधिकार दे भी दिया गया हो तो भी नवीन व्यवस्था के अन्तर्गत उसका कोई औचित्य नहीं था।[9]

वह विस्तारपूर्वक वेनेरिच की मान्यता की कि सत इसीडोर तथा सत ग्रेगोरी महान् बिशपों की नियुक्ति मे राजाओं और सम्राटों के न्यायोचित अधिकारों को स्वीकार करते थे परीक्षा करता है तथा तर्क देता है कि उनके ग्रन्थों से जिन वाक्यांशों को वेनरिच ने उद्धृत किया है वे गलत समझे गए हैं तथा व० प्रदर्शित करने के लिए अनेक दृष्टांत प्रस्तुत करता है कि रोमन धर्मपीठ का निर्वाचन कभी भी किसी लौकिक सत्ताधारी के अधिकार मे नहीं रहा जबकि दूसरी ओर पोप को बिशपों की नियुक्ति तथा नये धर्म क्षेत्र के संगठन का अधिकार था।[10]

इस प्रकार लौकिक सत्ता द्वारा बिशपों की नियुक्ति के अधिकार के समर्थन मे उठाये गए तर्कों पर विचार करके वह राजाओं द्वारा मुद्रा एव धर्म-दण्ड से बिशप के प्रतिष्ठापन की व्यर्थता एवं अनौचित्य को सिद्ध करता है क्योंकि ये आध्यात्मिक रहस्यों के प्रतीक थे तथा जसा मेनेगोल्ड कहता है कि यह प्रथा थी कि वे राजा से प्राप्त करने के बाद अभिषेक करने वाले बिशपो द्वारा पुन प्रदान किए जाते थे यह एक प्रकार मूर्खता थी।[11]

मेनेगोल्ड दृढ़तापूर्वक लौकिक सत्ताधारियों द्वारा बिशपों की नियुक्ति के दावों तथा राजाओं द्वारा मुद्रा एव दण्ड से प्रतिष्ठापन के विरुद्ध आने तक प्रस्तुत करता है किन्तु यह स्पष्ट नहीं होता कि उसका अभिप्राय यह सिद्ध करना था कि नियुक्ति मे लौकिक सत्ता का कोई भी हाथ नहीं है। वह राजा के स्वेच्छाचारी कार्य को अस्वीकार करता है। ऐसा प्रतीत नहीं होता कि उसके मन में अनिवार्यत किसी भी प्रकार के समझौते की अभिलाषा नहीं थी।

1087 ई में फैरेरा के विडो द्वारा उस ग्रन्थ के प्रणयन के जिस पर हम पहले विचार कर चुके हैं एक वर्ष बाद कार्डीनल ड्यूसडेडिट ने कलक्ट्यो केनोनम (Collectio Canonum) नामक ग्रन्थ लिखा जिसमे उसने अनेक अधिकृत लेखांश प्रस्तुत किए जिनके द्वारा धार्मिक पदों के निर्वाचन की स्वतन्त्रता का प्रतिपादन किया गया था तथा लौकिक सत्ता द्वारा बिशपों की नियुक्ति की निन्दा की गई थी।[1] 1097 ई मे ड्यूसडेडिट ने एक नया ग्रन्थ प्रारम्भ किया जिसका शीर्षक लिबर कान्ट्रा इनवासोरेस एट साइमोनिएकास (Lib llu contra invasores et symonia os) था जिसमे इस प्रश्न पर वह विस्तारपूर्वक विचार करता है। वह ग्रन्थ के प्रारम्भ में उसका उद्देश्य बताता है कि वह उन धर्म विक्रयी तथा धार्मिक विभेदकारियों को उत्तर देना बताता है जो कहते हैं कि ईसा का चर्च राजकीय सत्ता के अधीन है तथा राजा को स्वविवेकानुसार धार्मिक पदों पर नियुक्ति का तथा चर्च सम्पत्ति को अपने आपको अथवा दूसरों को हस्तांतरित करने का अधिकार है। यद्यपि वह प्रतिज्ञापित करता है कि इस प्रकार कहकर वह राजकीय गौरव का अपमान नहीं कर रहा है क्योंकि राजा का पद भिन्न है तथा पुरोहित का पद उससे भिन्न है। प्रत्येक को दूसरे की आवश्यकता है, तथा

किसी को भी दूसरे के काम में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।[13]

अत वह तथाकथित प्ररितिक विधान से वाक्यो को उद्धत करना प्रारम्भ करता है।
Si quis episcopu s ecularibus potestatibus usus ecclesiam per ipsis obtineat depona ur et segregentur omnes qui illi Communicant

उसका विचार है कि यह नियम प्रेरितों द्वारा इस अनुमान पर लागू किया गया था कि एक युग ऐसा आएगा जबकि लौकिक सत्ता ईसाई धम को अंगीकार कर लेगी तथा अपनी सत्ता को चच पर लागू करने एव अपनी इच्छा तथा सत्ता से पादरियों को नियुक्त करने को आकर्षित होगी। वह इससे परिचित है कि इन नियमों की प्रामाणिकता पर सदेह किया गया है किन्तु वह यह प्रतिपादित करता है कि वे विभिन्न परिषदों एव धर्माचार्यों द्वारा स्वीकार किए जाते रहे हैं तथा वह इस पर बल देता है कि बहुत समय तक चच ने इन परम्पराओ को अक्षुण्ण बनाए रखा है तथा प्रत्येक चच के पादरी एव जनता ही अपने बिशप को चुनते रहे।[14] यह प्रथा तबतक चलती रही जबतक कि चर्चों की सख्या बहुत नहीं हो गई और वे धनवान नहीं हो गए तथा इसे पोप एव सम्राटो द्वारा मान्यता प्राप्त रही। प्रथम सम्राट जिन्होंने इन परम्पराओं का उल्लघन किया उनमे से थे जिनको वह यूटीशियन (Eutychian) कहता है उदाहरणाथ जीनो तथा एनेस्टेशियस और उनका अनुकरण कुछ उत्तरकालीन पूर्वी रोमन सम्राटों ने किया। डयूसडेडिट इस तथ्य से परिचित है कि एक समय रोमन चच भी अभिषेक से पूव अपने बिशपों के निर्वाचन को राजाओं को सूचित करते थे। फिर वह अनेक पोप सम्बन्धी एव परिषदीय विज्ञप्तियों को गिनाता है जिन्होंने लौकिक सत्ताधारियो के हस्तक्षेप का निषेध किया था तथा जिनके अनुसार निर्वाचन स्वतन्त्र होना चाहिए।[15] वह पोप निकोलस द्वितीय द्वारा पोप के चुनाव के सम्बन्ध मे जारी की गई विज्ञप्ति की इस व्यवस्था के बारे में कुछ कठिनाई अनुभव करता है जिसम यह कहा गया है कि सम्राटो को सूचना पोप के निर्वाचन के बाद परन्तु उसके अभिषेक से पूव देनी चाहिए। इस विज्ञप्ति की इस व्यवस्था के बारे में पहले वह यह तक प्रस्तुत करता है कि चाहे यह घोषणा म व्यक्त भी किया गया हो तो भी राजा तथा उनके सलाहकारों द्वारा बाद म निकोलस द्वितीय को पदच्युत करने के प्रयत्न सम्बन्धी आचरण के कारण और तत्पश्चात् पहले पारमा केडेलुअस तदनुरूप रेवन्ना के ग्यूबट को पोप के विरोध म खडा करने के कारण अवध हो गई है। दसरे वह यह मानता है कि इस घोषणा की प्रतियो में इतनी जोड-तोड हुई है कि वे एक-दूसरे से सगत नहीं हैं। तीसरे यदि निकोलस ने यह माना भी दी हो तो भी यह अवध थी क्योंकि वह केवल एक अधिधर्माध्यक्ष था तथा बिशपो की परिषद् की सहायता से भी वह पाँच अधिधर्माध्यक्षो तथा हजारो आचार्यो द्वारा अभिघोषित एव ईसाई सम्राटों द्वारा परिपुष्ट व्यवस्था को नहीं बदल सकता क्योकि उनकी घोषणाओ म राजकीय अधिकारियों को बिशपा की नियुक्ति अथवा निर्वाचन म हस्तक्षेप का कोई भी अधिकार प्रदान नहीं किया गया है।[16] तत्पश्चात् वह पोप के लखो एव रोमन कानून से अनेक अश उद्धत करता हुआ यह सिद्ध करता है कि कोई भी काय जो अवध रूप से और गलती स किया गया है अवध घोषित करना चाहिए, अत निष्कष निकालता है कि पोप निकोलस की आज्ञा अवध थी।

वह प्रतिपादित करता है कि यह कहते हुए वह पोप की पावन स्मृति के विपरीत कोई असम्मानजनक बात नहीं कह रहा है क्योंकि वह भी मनुष्य था तथा यह सम्भव है कि वह कोई इस प्रकार का कार्य करने को राजी कर लिया गया हो जो कि धर्मानिक एवं न्यायसंगत न हो तथा वह पोप बोनीफेस द्वितीय का एक दृष्टान्त देते हुए बताता है कि किस प्रकार उसने एक गलत जारी की गई विज्ञप्ति का रद्द कर दिया था तथा यह बताता है कि पोप निकोलस द्वितीय भी वैसा ही करता यदि उसने धर्माचार्यों की संगृहीत सम्मति को देखा होता एवं उनको अपनी भ्रान्ति के विपरीत पाया होता।[17]

हयूसबेडिट इसके बाद उस तर्क पर विचार करता है कि बिशप की नियुक्ति स्वेच्छापूर्वक लौकिक सत्ता द्वारा दीर्घकालीन प्रथा से स्वीकृत है और इसके उत्तर में कहता है कि विभिन्न प्रयासों से प्रचलित होने पर उसी प्रथा को मान्यता दी जानी चाहिए जो कि प्रेरितिक युग जितनी पुरानी हो तथा लौकिक राजाओं द्वारा इस प्रथा में लायी गई विकृतियाँ इन अधिकारों को समाप्त नहीं कर सकती।[18] अन्त में वह यह बलपूर्वक कहता है कि राजाओं द्वारा धार्मिक पदों पर नियुक्ति ही धर्म विक्रय की कुप्रथा के प्रचलन एवं पादरियों द्वारा कर्तव्य की अवहेलना का कारण है क्योंकि वे राजसभाओं में अपनी अनुचित सेवाओं के मूल्य स्वरूप प्रायश्चित्ता प्राप्ति के लिए भीड़ करते रहते हैं। वह इस तर्क को राजकीय गिरजों और उनके पादरियों पर आक्रमण के लिए प्रयुक्त करता है।[19]

हयूसबेडिट की मान्यता है कि उस समय इन्हीं कारणों से ग्रेगोरी सप्तम ने सभी बिशप पदों एवं मठों की लौकिक नियुक्तियों को अवैध घोषित कर दिया था तथा घोषणा की थी कि *उन सभी व्यक्तियों को जो प्रतिष्ठापन प्रदान करने का प्रयास करेंगे धर्म बहिष्कृत कर दिया जाएगा तथा वह 1080 ई. की रोम की परिषद् की घोषणा को* उद्धृत करता है।[20]

यह उल्लेखनीय है कि हयूसबेडिट उसी सिद्धान्त को कस्बों के गिरजाघरों पर व्यक्तिगत प्रश्रय के प्रश्न पर भी लागू करता है तथा यह मानता है कि कस्बे के पुरोहित को भी कस्बे के पादरियों एवं जनता द्वारा चुना जाना चाहिए तथा किसी को भी उनकी इच्छा के विपरीत नियुक्त नहीं करना चाहिए।[21]

यदि हम विवादास्पद साहित्य के उन प्रमुख तर्कों को संहृत करने का प्रयास करें जिन पर हम विचार कर आए हैं तो हम कह सकते हैं कि यद्यपि साम्राज्यिक दल के प्रतिनिधियों द्वारा बहुत कुछ कहा गया है जो कि बिशपों की नियुक्ति के सम्बन्ध में लौकिक सत्ता को व्यापक अधिकार देने का समर्थन करता है जिनका वे एक लम्बे समय तक उपयोग भी करते रहे हैं *तथापि साम्राज्यिक दल के समर्थकों ने पहले ही इसे स्वीकार कर लिया था कि बिशप की स्थिति के लौकिक एवं धार्मिक पक्षों में एक अनिवार्य अन्तर है* तथा यह माना था कि धार्मिक नियुक्ति को निर्धारित करने के अधिकार के बारे में लौकिक सत्ता का दावा शुद्ध रूप से लौकिक पक्ष से ही सम्बद्ध है। दूसरी ओर ग्रेगोरी सप्तम के समर्थक कभी-कभी यह स्वीकार करने के पूर्णतया विरुद्ध प्रतीत होते हैं कि लौकिक सत्ता का भी धार्मिक पदों पर नियुक्तियों में कोई भी स्थान हो सकता है किन्तु उनका मुख्य बल किसी सत्ता द्वारा स्वेच्छानुसार नियुक्ति करने के निरंकुश अधिकार के

खण्डन पर तथा धर्मप्रदेश क पादरियो और जनता द्वारा स्वतन्त्र चुनाव करने के अधिकार पर है यद्यपि उनके द्वारा भी लौकिक सत्ता के दुरुपयोग के कारण होने वाले व्यावहारिक दोषो पर बहुत ध्यान दिया गया है। इस समय तक उन्होने साम्राज्यिक दल के इस तर्क पर जो कि उच्च धर्माधिकारियो की लौकिक पदस्थिति पर बल देता था न तो विमर्श किया था और न इसका खण्डन ही किया था।

ग्यारहवी शताब्दी की समाप्ति तक यह सघर्ष एक भिन्न स्वरूप प्राप्त करने लगा तथा अब हम इस पर विचार करेंगे।

सन्दर्भ

1 क ... ने M G H Libelli De Lite Vol I पृ 280–284 पर इसका विस्तृत विवेचन किया है।
2 W n ch f T ier Epist la 8
3 Cf M G H Lib De Lit vol 1 pp 529 532
4 W do D S isma e H ld b and L bell D L te 1 p 564
5 Id d d p 566
6 Man g ld Ad G beha d m 50
7 Id d 53
8 Id d 55
9 Id d 56
10 Id id 57 63
11 Id d 64
12 Ca d al Deusd d t C lle t o Can on m e g 93 96 97 196 iv 11 16 17 20 146
13 D sded t L b llus contra invaso res tc p logus
14 Id d i 3 9
15 Id d i 11
16 Id id 12
17 Id d 14
18 Id d 15
19 Id d i 16 cf p 79
20 Id id i 2

चतुर्थ अध्याय

"प्रतिष्ठापन" प्रश्न पर वादविवाद-(2)

हम ग्यारहवी शताब्दी के अन्तिम वर्षों से लेकर पस्कल द्वितीय (Paschal II) तथा हेनरी पचम (Henery V) द्वारा समझौते के प्रयत्नो तथा सघर्ष के विकास पर विचार करना होगा। इस युग की विशेषता एक मध्यस्थतावादी मत का विकास है जो दोनो दलो के तर्कों से युक्ति-सगत तत्वो को विभिन्न रूपो मे स्वीकार करता है। मध्यस्थ दल की अपेक्षा मध्यस्थ मत शब्द का ही प्रयोग करना अधिक श्रेष्ठ है क्योंकि यह हम उन मनुष्यो मे पाएगे जिनको अपने काल के अधिक सामान्य सघर्ष के सम्बन्ध मे जिस पर हम बाद मे विचार करेंगे कभी किसी एक महान दल का कभी दूसरे का समर्थन करते हुए अथवा कभी कभी पूर्णत किसी भी दल से सम्बन्ध न रखते हुए पा सकते हैं।

वस्तव मे यह प्रतीत हो सकता है कि ग्रेगोरी सप्तम की 1086 ई मे मृत्यु एव हेनरी चतुर्थ की 1106 ई मे मृत्यु ने सारी परिस्थिति को ही बदल दिया हो किन्तु जहाँ तक प्रतिष्ठापन का प्रश्न है यह सही नही था। ग्रेगोरी सप्तम के उत्तराधिकारियो विशेषत पोप अरबन द्वितीय (Pope Urban II) ने ग्रेगोरी सप्तम द्वारा प्रयाजक प्रतिष्ठापन के निषेध को दृढतापूर्वक बनाए रखा जबकि हेनरी पचम ने भी पिता की मृत्यु के बाद उसके प्रति अपने अधिकार को बनाए रखा। तथापि यह सम्भव है कि चाहे विरोधी दलो की औपचारिक रूप मे तथा वाह्यत स्थिति वसी ही दिखाई देती हो किन्तु मूल विरोधियो के हट जाने से परिस्थितियों मे एक बडी सीमा तक परिवर्तन आ गया तथा मध्यस्थतावादी प्रवृत्तियो को विकसित होने तथा बल प्राप्त करने का अवसर सुगम हो गया।

जिस लेखक मे हम यह मध्यस्थतावादी प्रवृत्ति स्पष्टत दिखाई देती है वह सम्भवत शार्त्रे (Chartres) का बिशप ईवो (Ivo) है। ईवो अपने युग का सबसे विद्वान व्यक्ति था जसा कि उसके महान वधानिक ग्रन्थो डेक्रेटम (Decretum) तथा पेनोरमिया (Panormia) से पर्याप्त रूप में विदित होता है। उसके पत्रो से स्पष्ट है कि वह प्रतिष्ठापन के प्रश्न पर सघर्ष से उत्पन्न अवस्था से सन्तुष्ट नही था तथा वह बिशपो की नियुक्ति मे लौकिक सत्ता के योगदान के पूर्ण बहिष्कार को स्वीकार करने के लिए तयार नही था। लियोन्स

के प्राचबिशप ह्यू (Hugh) को जिसे वह फ्रास का धर्माधियात तथा पोप का दूत मानता है 1096-97 ई म लिखे गए एक पत्र मे वह डेम्बट (Daimbert) की सेन्स (Sens) के आर्चबिशप पद पर नियुक्ति स उठने वाले प्रश्न पर विचार करता है। सवप्रथम वह लियोंस क आर्चबिशप द्वारा सेस क आर्चबिशप पर प्रभुत्व की मांग का शास्त्र सम्मत न होने के कारण विरोध करता है[1] तदन्तर ह्यू द्वारा उसके अभिषेक पर इस आधार पर उठाई गई आपत्ति का कि उसने फ्रास के राजा से प्रतिष्ठापन प्राप्त किया है विचार करता है। वह यह कहकर प्रारम्भ करता है कि उसे कोई विश्वसनीय सूचना नही है कि डेम्बट ने वसा किया है साथ ही यह भी मानता है कि यदि उसने वसा किया भी हो तो यह धम का उल्लघन नही है। पोपो ने स्वय उन व्यक्तियो के जिनका विधिवत् निर्वाचन हुआ है बिशप पद प्रदान करने म राजाओ का अधिकार स्वीकार किया है तथा वह यह समझता है कि पोप अरबन द्वितीय ने केवल अयाजक प्रतिष्ठापन का निषेध किया है न कि जनता क अध्यक्ष के रूप मे राजा द्वारा निर्वाचन म योगदान अथवा पद प्रदान का भी निषध किया है। वह इस पर बल देता है कि यह पूणतया महत्वहीन है कि किस रूप म पद प्रदान किया गया—हाथ से या शब्दो स या धम दण्ड से क्योकि राजाओ का प्रयोजन कोई आध्यात्मिक वस्तु प्रदान करना नही था किन्तु उनका अभिप्राय या तो निर्वाचनकर्त्ताओ की अभिलाषा से अपनी सहमति व्यक्त करना है अथवा चच की सम्पत्ति और अन्य भौतिक वस्तुओ को उन व्यक्तियो को सौंपना है जिनका निर्वाचन हो चुका है तथा वह सत आगस्तान क सुपरिचित शब्दो को उद्धत करता है जिनमे यह कहा गया है कि सभी सम्पत्ति मानवीय कानूनो स नियन्त्रित होती है। पुन जबकि वह इसको प्रतिपादित करता है कि उसका अभिप्राय पोप के निणयो क विरुद्ध अपनी सत्ता स्थापित करना नही है जहा तक कि वे तकसगत तथा धर्माचार्यों के अधिकारो के अनुकूल हैं वह यह भी मानता है कि ये नियम अर्थात् राजाओ द्वारा प्रतिष्ठापन का निषेध भी शाश्वत कानूनो की किसी व्यवस्था पर निभर नही किन्तु केवल पोप के प्रमाण पर निभर है।[2] (Quia ea illicita maxime facit presidentium prohibito)।

ईवो द्वारा अपने पत्र म अगीकार की गइ स्थिति बहुत उल्लेखनीय तथा महत्त्वपूर्ण है। सवप्रथम वह अयाजको द्वारा प्रतिष्ठापन के इस निषेध को जिसे हम प्रशासनिक नियम कह सकते हैं मानता है जिसे जसा सुविधाजनक हो चाहे क्रियान्वित किया जाए अथवा नही और वह इसे चच के कानूनो का स्थायी अग नही मानता है। दूसरे वह इस निषेध का यह अभिप्राय नही मानता कि राजा का धार्मिक पदो की नियुक्ति म कोई स्थान नहीं है वह मानता है कि जनता के अध्यक्ष के रूप मे निर्वाचन मे उसका योगदान हो सकता है तथा उस सपुष्टि या पद प्रदान करने का अधिकार है। तीसरे राजा यह जिस प्रकार करे—यह स्वरूप उसके मत म महत्त्वहीन है उसका धार्मिक अधिकारों से कोई भी सम्बन्ध नही है किन्तु उसका अथ या तो चुनाव से सहमति की अभिव्यक्ति के रूप म या उसे धम प्रदेश की भौतिक सम्पदाओ को प्रदान करने के रूप म लिया जाना चाहिए और ईवो इस बारे म स्पष्ट है कि य राजा द्वारा ही प्रदान किए जाने चाहिए क्योकि सभी सम्पदा लौकिक सत्ता के अधिकार म है।

कुछ वर्षों बाद सम्भवत 1111 ई अथवा 1112 ई म ईवो सेन्स प्रात के आर्च विशप तथा अन्य विशपो के नाम स लियोन्स के आर्चविशप आयोसक्रेनस को लिखे एक पत्र म पुन उसी प्रश्न पर विचार करता है। आयासक्रेनस ने फ्रासीसी प्रान्तों के आर्च विशपा एव विशपो की एक परिषद् अयाजको द्वारा प्रतिष्ठापन के प्रश्न पर विचार करने के लिए बुलाई थी। ईवो अपने प्रात के नाम पर उस परिषद् म सम्मिलित होना इस आधार पर अस्वीकार कर देता है कि धर्माधिपति के अधिकार म राज्य की परिषद् का आह्वान करना नहीं है साथ ही वह पस्कल द्वितीय के रिसन 1111 ई० म जसा हम आगे देखेंगे प्रतिष्ठापन का अधिकार सम्राट हेनरी पचम को प्रदान कर दिया था इस काय की सावजनिक चर्चा अथवा निन्दा करने का भी विरोध करता ह किन्तु ईवो तथा दूसरे विशपो को यह यह सूचित कर चुका था कि उसने उस अधिकार को वापिस ले लिया था तथा उसन वह स्वीकृति बाध्य किये जाने पर ही दी थी। ईवो कहता ह कि यह सही नहीं ह कि वे पोप क कार्यों पर विचार करने के लिए परिषद् म एकत्रित हो क्योंकि जबतक वह धम से विचलित न हो तबतक उसका न्याय अथवा निन्दा करने का उनको कोई अधिकार नहीं ह।[3] वह इस पर बल देता ह कि प्रतिष्ठापन का प्रश्न अपधम या शाश्वत कानून का प्रश्न नहीं ह किन्तु जसा उसने अपने पूव पत्र म कहा था यह प्रशासनिक व्यवस्था का प्रश्न ह अत यह तकसगत ह कि पोप विभिन्न व्यक्तियो को प्रतिष्ठापन प्राप्त करने क अपराध स दोष मुक्ति की अनुमति उनके द्वारा धम दण्ड समपण कर पुन पोप के हाथो प्राप्त करने पर प्रदान करदें। यदि कोई अयाजक यह सोच कि दण्ड समपण एव प्राप्ति म किसी प्रकार का सस्कार निहित ह या वह धार्मिक सस्कार का सत्य प्रदान कर सकता ह ता वह अपधर्मी ह। अत म वह अपनी राय इस प्रकार देता ह कि जहाँ तक अयाजक द्वारा प्रतिष्ठापन दूसरे व्यक्ति के अधिकारो का अतिक्रमण है इसकी समाप्ति यदि यह बिना धार्मिक फूट के हो सके कर देनी चाहिए किन्तु यदि इसका यही परिणाम होगा तो ऐसी कायवाही को स्थगित कर देना चाहिए।[4]

ईवो ने इस प्रकार पुन स्पष्ट कर दिया कि वह अयाजक प्रतिष्ठापन के प्रश्न को चच की प्रशासनिक व्यवस्था स सम्बन्धित मानता था आवश्यक एव शाश्वत कानून का अग नहीं क्योकि उसका विशप के आध्यात्मिक पद से कोई सम्बन्ध नहीं ह। तथापि यह प्रतीत होता ह कि वह इस निष्कष पर पहुँचा कि धम दण्ड द्वारा अयाजक प्रतिष्ठापन लोकनिन्दा का कारण ह अत अच्छा हो यदि किसी गम्भीर अव्यवस्था अथवा सघष का उत्पन्न किए बिना किया जा सके कि इस समाप्त कर दिया जाए। लियोन्स के आयोसे क्रेनस ने अपने उत्तर म लिखा ह कि यद्यपि प्रतिष्ठापन का काय धम विरुद्ध नहीं ह तथापि यह मन कि यह अनुताप्त हो सकता ह धम विरोधी ह।[5]

यहाँ शास्त्र का ईवो उन लोगो के बीच जो कुछ मिलाकर पोप क दल के समथक थे एक मध्यस्थतावादी प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करता है तथा जसा कि हम देख चुके हैं कि वह स्पष्टतया यह कहता है कि वह अयाजक प्रतिष्ठापन क प्रश्न पर पाप के काय की आलोचना की धृष्टता नहीं कर रहा है हम प्यूरा क ह्यु को उनका अच्छा प्रतिनिधि मान सकते हैं जो पोप क काय के आलोचक थे किन्तु प्रतिष्ठापन के प्रश्न पर जिनकी स्थिति

मध्यस्थतावादी थी। उसका महत्वपूर्ण ग्रन्थ De Regia Potestate et Sacerdotali Dignitate जिसका हम बाद म पूर्ण वर्णन करेंगे बारहवी शता ी के प्रारम्भिक वर्षों म लिखा गया था तथा इंगलैण्ड के हेनरी प्रथम को समर्पित किया गया था। उसमे वह यह कहता है कि राजा को (Praesulatus Honor m) प्रदान करने का अधिकार है जबकि आर्चबिशप आत्मा का उपचार प्रदान करता है तथा वह मानता है कि यह प्रथा उसके समय तक प्रचलित थी। जबकि पादरी एव जनता चर्च की प्रथा के अनुरूप बिशप को चुन ता राजा को धमद्रोह पूर्वक चुनाव म हस्तक्षेप नहा करना चाहिए किन्तु वैध रूप म अपनी स्वीकृति यदि निर्वाचित प्रतिनिधि उचित रूप से योग्य है प्रदान करनी चाहिए किन्तु यदि वह अनुपयुक्त व्यक्ति है तो राजा और जनता दोनो का हा अपनी स्वीकृति प्रदान न करने का अधिकार है। चुनाव के बाद राजा को सभी भौतिक सम्पदाएं प्रदान करना चाहिए किन्तु मुद्रा और दण्ड नहीं जो कि आर्चबिशप द्वारा ही दिए जाने चाहिए अन वह कहता है कि इस प्रकार लौकिक एव आध्यात्मिक दोनो सत्ताओ के पास वह बना रहेगा जो उनके अधिकार की वस्तु है।[6]

ह्यू की स्थिति सम्भवत साभिप्राय सभी वादविषयो पर स्पष्ट नही है। वह निश्चयपूर्वक नही कहता कि निर्वाचन सर्व पादरी एव जनता द्वारा ही किया जाए किन्तु राजा की स्थिति के अपने विवरण म वह स्पष्ट कर देता है कि राजा को स्वेच्छा से कार्य नहा करना चाहिए। वह ईवो की भांति बिशप के आध्यात्मिक-पद जिसे आर्चबिशप द्वारा प्रदान किया जाना चाहिए तथा उनकी लौकिक स्थिति म जिस वह राजा से प्राप्त करता है बहुत स्पष्टतया विभेद करता ह तथा वह धर्म पैत्र की भौतिक सम्पदाओ को प्रदान करने म राजा द्वारा दण्ड एव मुद्रा के प्रयोग की निन्दा करता है।

बिशपो के प्रतिष्ठापन पर एक बहुत महत्वपूर्ण ग्रन्थ सुरक्षित रखा है जो जसा विचार ह 1109 ई का है।[7] इस ग्रन्थ का लेखक अज्ञात ह किन्तु यह स्पष्ट ह कि वह साम्राज्यिक दल का था वास्तव म यह भी मत है कि यह ग्रन्थ उस पक्ष के समझौते की सम्भावना के न्यूनाधिक सुविचारित सुझाव का प्रतिनिधित्व करता है।[8] लेखक पूर्व दृष्टान्तो की भव्य शृंखला प्रस्तुत करके लौकिक सत्ता के बिशप पद पर नियुक्ति के ऐतिहासिक अधिकार की पुष्टि करता है। वह पोप हेड्रियन प्रथम की अप्रामाणिक घोषणा को उद्धत करता है जिसे जमा कि हम देख चुके हैं फेरेरा के विडो[9] ने भी प्रस्तुत किया था किन्तु यह सिद्ध करता है कि इसम बहुत पूर्व ही सम्राटो राजाओ और राजभवनो के मेयरो द्वारा बिशपो की नियुक्ति तथा प्रतिष्ठा होती थी तथा यह प्रथा पोप ग्रेगोरी महान् द्वारा स्वीकार की गई थी।[10] वह इस पर बल देता है कि यह निष्प्रयोजन है कि प्रतिष्ठापन राजा द्वारा शब्दो से अधिकार दण्ड से अथवा किसी अन्य तरीके स ही किया जाय किन्तु वह सुझाव देता है कि अधिकार-दण्ड अधिक उपयुक्त प्रतीक है क्योकि इसके दोनो प्रकार के अर्थ होने हैं भौतिक भी एव आध्यात्मिक भी। लेखक स्पष्टत लौकिक सत्ता द्वारा बिशप के प्रतिष्ठापन के अधिकार का सम्बन्ध चर्च की भौतिक सम्पदा एव शक्ति स जोडता है। वह कहता है कि कान्सटेण्टाइन के युग तक चर्च निर्धन था किन्तु जब ईसाई सम्राटो ने उस बहुत अधिक भौतिक सम्पत्ति तथा शक्तियाँ प्रदान कर दी

तो यह उचित ही था कि राजा जो जाता में से एक है तथा जनता का अध्यक्ष है बिशप को जिसको उसने राज्य की इतनी शक्तियाँ प्रदान कर रखी हैं प्रतिष्ठित करे एव गद्दी पर बठाए। यदि बिशप उतने ही निधन रहते जसा कि ग्रेगोरी महान् ने एक बिशप का वणन करते हुए लिखा है कि उनके पास एक शीतकालीन लबादा भी नही था तो स्थिति कुछ भिन्न होती तथा उस दशा में उस व्यक्ति से श्रद्धा एव निष्ठा की शपथ प्रदान करने की कोई आवश्यकता नही होती।[11]

लेखक राजा के प्रतिष्ठापन के अधिकार का सम्बन्ध भौतिक धन सम्पत्ति के स्वामित्व से जोडता है तथा उस स्वरूप को महत्व नही देता जिसमे प्रायत यह सम्पादित हो किन्तु वह इस तथ्य की ओर सकेत करता है कि श्रद्धा एव शपथ से सयुक्त प्रतिष्ठापन जिस रूप में भी हो अभिषेक से पूव किया जाना चाहिए। यह इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि धार्मिक पदो पर नियुक्ति में राजकीय सहमति की स्वतन्त्रता को पुष्ट करने के लिए कृतसकल्प है। उसका सुझाव कि यदि चच निधन बना रहता तो राजकीय दावे को अस्वीकार किया जा सकता था सघष को हल करने की दिशा मे पस्कल द्वितीय के आश्चयजनक सुझाव से कहाँ तक सम्बद्ध हो सकता है इसे जाँचने का हमारे पास कोई साधन नही है तथा उस पर हम अगले अध्याय में विचार करेंगे।

अन्त लेखक यह कहता है कि राजाओ के बिशपो के प्रतिष्ठापन के अधिकार को छीनने के पोप के प्रयत्न का परिणाम ईसाई लोगो में वमन्त बडे भय एव सकोच को निश्चितरूपेण उत्पन्न करेगा। वह स्वीकार करता है कि यदि इन अधिकारो का दुरुपयोग किया जाए तो पोप को इसमे सुधार लाना चाहिए किन्तु वह शिकायत करता है कि पोप इस पर बल देता है कि यदि वे गलती करें तथा बिशपो की नियुक्ति में स्वेच्छाचार बरतें तो भी उनकी निन्दा नही करनी चाहिए और यह तक प्रस्तुत करते हैं कि सर्वो व पादरी का निणय किसी मनुष्य द्वारा नही किया जा सकता वह उन्हें एक से अधिक बार स्मरण दिलाता है कि जब जब पोप के निर्वाचन के सम्बन्ध में झगडे हुए हैं तब तब वे पूर्वी रोमन या फ्रैंक सम्राटो के हस्तक्षेप से ही सुलझे हैं।[12]

पिछले ग्रन्थ मे हम इस मान्यता के सबसे कट्टर समथक रूप में कि राजकीय सत्ता को नियन्त्रित करना अवविन्न था[13] अ टिनो व ग्रेगरी की स्थिति पर विचार कर चुके हैं अत यह आश्चयजनक नही कि वह बिशपो के प्रतिष्ठापन के राजकीय विशेषाधिकार का दृढता से समथन करता है। तथापि उसके मामले मे भी यह उल्लेख करना लाभकर होगा कि वह प्रतिष्ठापन का क्या अथ समझता है तथा उसके समथन में दिए गए उसके तर्कों का क्या स्वरूप है। उसका ग्रन्थ ओरथोडाक्सा डिफेंसियो इम्पारियलिस (Ortho doxa Defensio Imp rialis) हेनरी पचम के पदारोहण के बाद लिखा गया था तथा यह माना जाता है कि उसका काल 1111 ई होना चाहिए लगभग वही समय जबकि हेनरी पचम ने पस्कल द्वितीय को कुछ समय के लिए प्रतिष्ठापन का अपना अधिकार मानने को बाध्य कर दिया था।

ग्रेगोरी वास्तव में चरम साम्राज्यिक स्थिति का प्रतिनिधि है तथा राजा को चच के अध्यक्ष के रूप में वणन करता है। कभी वह ओल्ड टेस्टामेंट से इसका समथन करता है

तथा सत क्रिसोस्टम (St Chrysostom) के नाम से आरोपित एक वाक्य से भी जो अप्रामाणिक प्रतीत होता है।[14] हम इस धारणा पर बाद मे विचार करना होगा। वह तक प्रस्तुत करता है कि यदि यह ऐसा है तो यह तकसम्मत नही है कि सम्राट को चच के धर्माधिकारियो क पद पर जो कि उसके सभासद हैं नियुक्ति स वचित रखा जाए तथा यह उपयुक्त प्रतीत होना है कि बिशप द्वारा अभिषेक से पूव उनको सम्राट द्वारा अधिकार दण्ड एव मुद्रा स प्रतिष्ठित किया जाए।[15]

पुन वह तक करता है कि यदि पोप क विशिष्ट आभूषण कान्सटैन्टाइन द्वारा प्रदान किए गए थे इसके लिए वह कान्सटैन्टाइन के दान पत्र (Donation of Constantine) के एक अश को उद्धृत करता ह ता यह और भी अधिक उपयुक्त है कि सम्राट बिशप को मुद्रा एव दण्ड प्रदान कर सक।[16] किन्तु वह यह स्पष्ट करने क लिए सावधान है कि प्रतिष्ठापन किसी आध्यात्मिक पद या अधिकार का नही किन्तु कवल लौकिक सम्पदा एव अधिकार का प्रतिनिधित्व करता है।[17] अनत वह तक करता है कि एक समय था जबकि चच निधन थे अब वे समृद्ध हैं तथा अपन अधिकार म वे सनिक एव सामन्तो को रखत हैं तथा यह स्थिति राजा क लिए बहुत भयावह होगी यदि वे उसके नियन्त्रण म न रहें इसलिए चच क धर्माधिकारियो का जिन्ह यह अधिकार राजकीय या साम्राज्यिक सत्ता स प्राप्त है अपनी एव अपने सनिको की राजा क प्रति निष्ठा का प्रतिज्ञा करनी चाहिए।[18]

वास्तव म पोप क दल का भी एक लेखक इसी युग म था जिसकी स्थिति इस सम्बन्ध म अनन्य मानी जा सकती है वह ल्यूका क बिशप रेंगरियस (Rangerius Bishop of Lucca)। अपन छन्दोबद्ध ग्रन्थ De Anulo et Baculo म वह मानता ह कि धम दण्ड एव मुद्रा पवित्र प्रतीक हैं जिनको एक साधारण व्यक्ति के हाथो म स्वीकार नही करना चाहिए वह अपने विचार क अनुसार उनक आध्यात्मिक महत्त्व का वणन करता ह। उसक अनुसार मुद्रा बिशप एव चच क सगम का प्रतीक है तथा दण्ड अनुशासनात्मक पादरी के पद का।[19] दूसरे स्थान पर इन व्याख्याओ को प्रस्तुत करने क बाद वह इस अस्वीकार करता ह कि य औपचारिक रूप म राजाओ द्वारा दिए गए हैं। वह मानता ह कि पादरी का दण्ड कदापि तलवार क अधीन नही हो सकता अत वह बिशप द्वारा राजा के प्रति शपथ ग्रहण का प्रबल विरोध करता है तथा इस मान्यता का खण्डन करता है कि चच की भौतिक सम्पदा राजा को उसके ऊपर को अधिकार प्रदान करती ह क्योकि ये ईश्वर को दी गई थी तथा पुन मांगी जा सकती हैं।[20] पुन वह कान्सटैन्टाइन के दान पत्र का और पोप को उसके द्वारा प्रदान किए गए महान् सम्मान एव उपहारो का उल्लेख करता है। किन्तु दृढतापूवक यह अस्वीकार करता है कि इनक कारण पोप को उसकी आध्यात्मिक सत्ता मिली है जो कि जसा वह मानता ह पहले से ही उसके पास थी।[21]

इसमे कोई सन्देह नही कि रेंगेरियस पूणतया मुद्रा एव दण्ड से प्रतिष्ठापन के बारे म अनन्य है तथा चच को भौतिक सम्पदा के बारे मे उसका दृष्टिकोण सराधक नही है।

अब यदि हम उन लखको क अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तो को जिन पर हम अभी विचार कर आए हैं एकत्रित करन का प्रयत्न करें तो यह कहना तकसगत प्रतीत होगा

कि समग्र रूप स व एव मध्यस्थ प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं अथवा कम स कम वा विषयक प्रश्नो के प्रति स्पष्टतर बाध का परिचय दते हैं। ईवो यद्यपि अधिकारान पोप क दल का समथक है तथापि वह दूसर दल स इस बात म सहमत है कि राजा का धार्मिक पदा की नियुक्ति म अवश्य कोई अधिकार है जबकि प यूरी का यह मानना है कि दण्ड एव मुद्रा के प्रतिष्ठापन की विधि छोड देनी चाहिए तथा ट्रक्टेटस का स्पष्टत रचयिता भी इसस सहमत है कि वसा ही करना चाहिए। केवल केटीनो का ग्रेगोरी यह मानता है कि इसे बनाए रखना चाहिए वह चच क मध्यस्थ के रूप म राजा की स्थिति के बार म एक सिद्धान्त प्रचलित करता है जिस पर हम बाद म विचार करग किन्तु वह भी इसस सहमत है कि प्रतिष्ठापन किसी आध्यात्मिक शक्ति का प्रतिनिधित्व नहीं करता किन्तु उसका सम्बन्ध केवल भौतिक धन सम्पत्ति स है। वास्तव म यह स्पष्ट है कि लौकिक दावे के समथक इस बात स अधिकाधिक परिचित होते जा रह थे कि उच्चतर पादरियों क पद क राजनतिक महत्व पर ही यह दावा निभर था और य कटीनो क ग्रेगोरी तथा ट्रक्टेटस द्वारा भला भांति व्यक्त किया गया है।

सन्दर्भ

1 I o f Chart Ep t la ad H g m Lib D Lite ol i
2 Id d
3 I of Ch rt Ep d Ios ra n m Lib D Lite 1
4 Id d
5 Iosce n Re po L b De Lit 1
6 H gh f Fle y T t t d R g a P it t t t S d l D g t t 15
7 Cf L b D Li ol p 495
8 Cf G rs P D d tsch In est t rst t t K g He h V
9 T tat d I t t Epi o- porum Lib D L t p 498
10 Id d p 499 501
11 Id d p 501
1 Id d p 50_
13 Cf (I p 12
14 G g ry f Cat O th d D f Impe 1
15 Id d 3
16 Id d 4
17 Id d 5
18 Id d 7
19 R ge s Liber de A ulo t B cul L b D A 1 et B cul Lib D L t 1 p 509
0 Id d 860
21 Id d 1107

पचम अध्याय

पैस्कल द्वितीय तथा हेनरी पचम

अब हम प्रतिष्ठापन विवाद के निश्चित समझौते के प्रथम प्रयत्न के इतिहास एव स्वरूप पर विचार करना चाहिए जो वास्तव म अपनी निर्भीकता एव साहस के कारण आश्चयजनक था। क्योकि पस्कल द्वितीय द्वारा पद चिह्न अर्थात् विशेषकर बिशपो एव मठाध्यक्ष के पद का सम्पूण अध राज तिक स्थिति एव विशेषाधिकारो के समपण का प्रस्ताव पोप की ओर से अपने अधिकार में विद्यमान भौतिक सत्ता को सौंप कर चच की आध्यात्मिक स्वतत्रता को प्राप्त करने के निश्चित प्रयत्न का प्रतिनिधित्व करता है।

इन वर्षों के जटिल इतिहास का विवचन करने से पूव यह देखना उपयुक्त होगा कि फ्रास एव इगलड म पोप एव लौकिक सत्ताए बिशपो की नियुक्ति के प्रश्न पर एक निश्चित समझौते तक पहुँचने म समर्थ हो गयीं।

ऐसा प्रतीत होता है कि फ्रास म पोप द्वारा प्रतिष्ठापन का निषेध धीरे धीरे स्वीकार कर लिया गया तथा सिद्धान्त रूप म निर्वाचन का अधिकार स्वीकृत हो गया यद्यपि यह भी स्पष्ट है कि स्वीकृति या सतुष्टि का अधिकार राजा ने नहीं छोडा।

इगलैंड म एन्सलम न विलियम रूफस की मृत्यु के पश्चात् 1100 ई म लौट कर प्रतिष्ठापन एव राजा के प्रति समादर प्रश्न पर दृढ रुख अपनाया उसने समादर प्रदान करने से अस्वीकार कर दिया तथा उन बिशपो का अभिषेक करना अस्वीकार कर दिया जिन्होंने राजा से मुद्रा एव धर्म-दण्ड द्वारा प्रतिष्ठापन प्राप्त किया था। उसे पुन 1103 ई म इगलैंड छोडना पडा किन्तु उसके हेनरी प्रथम से सम्बन्ध कभी भी विच्छिन्न नहीं हुए तथा अतत एक समझौता हो गया यद्यपि हम उसके समस्त विवरण के बारे म निश्चित नहीं हो सकते।[2]

एक वक्तव्य जिसके बारे म हम निस्संदेह पूर्ण विश्वास रख सकते हैं एन्सलम का है पोप पस्कल को लिखे गए एक पत्र म जिसम वह सूचना देता है कि राजा ने अपने चर्चों के प्रतिष्ठापन के स्वत्व को परित्याग किया है तथा राजा In personis eligendis nullaten propria utitur voluntate sed religiosorum se penitus committit consilio [3]

इडमर (Eadmer) 1107 ई की लन्दन की परिषद् में हुए समझौते के बारे में दो विवरण देता है हिस्टोरिया नोवोरम (Historia Novorum) में वह सूचित करता है कि राजा ने औपचारिक रूप में मुद्रा एवं दण्ड द्वारा प्रतिष्ठापन को त्याग दिया है तथा एन्सलम ने यह वादा किया है कि किसी को भी इस कारण अपने गौरव से वंचित नहीं किया जाएगा कि उसने राजा को समादर प्रदान किया है। अपने एन्सलम के जीवन चरित्र में वह लिखता है—Rex enim ante-cessorum suorum usu relicto nec personas quae in regiment ecclesiarum sumebantur per se elegit nec eas per dationem virgae pastoralis eccles Is quibus praeficibantur investivit[4]

चुनाव के बारे में यह वक्तव्य स्पेलमैन (Spelman)[5] द्वारा उद्धृत क्रायलैण्ड की हस्तलिखित प्रति (Croyland MSS) से स्पष्ट होता है किन्तु माम्सबरी[6] के विलियम तथा ह्यू ग कैंटर[7] (Huge Cantor) द्वारा इसका पूर्णतया खण्डन किया गया है।

एन्सलम तथा हेनरी के बीच हुए समझौते की शर्तों के बारे में इसके सिवाय कि हेनरी ने मुद्रा एवं दण्ड द्वारा प्रतिष्ठापन करने का दावा छोड़ दिया था निश्चिततापूर्वक नहीं कहा जा सकता जबकि जैसा एन्सलम के पत्र से प्रतीत होता है राजा ने चुनावों में स्वेच्छया हस्तक्षेप से विरत होना स्वीकार कर लिया तथा जैसा 1106 ई में एन्सलम को लिखे गए पत्र से विदित होता है पस्कल द्वितीय ने अनिच्छा से इस सुविधा के अस्थायी होने की आशा करते हुए अनुमति दे दी कि बिशप राजा के प्रति समादर कर सकते हैं।[8]

हेनरी चतुर्थ की 1106 ई में मृत्यु होने के बाद उसके पुत्र हेनरी पंचम ने जो अभी तक पिता के विरुद्ध पोप के दल के साथ था बिशप पद पर नियुक्तियाँ करने तथा संभवत उनको प्रतिष्ठापन प्रदान करने की प्रथा पुन प्रारम्भ कर दी। पोप पस्कल द्वितीय ने जो 1099 ई में अरबन द्वितीय का उत्तराधिकारी बना ग्रेगोरी सप्तम तथा अरबन द्वितीय की नीति बनाए रखी तथा समय समय पर अयाजक प्रतिष्ठापन के निषेध को दोहराया। इसलिए इस महान् विवाद का कोई समझौता नहीं हुआ किन्तु हेनरी के पदारोहण के बाद एक गोष्ठी की व्यवस्था करने के प्रयत्न हुए ताकि इन विषयों पर विचार किया जाए तथा संभव हो तो किसी हल को ढूंढा जाय।[9]

हम इन वर्षों में घटित होने वाली घटनाओं अथवा समझौता-वार्ता का विस्तार से अध्ययन नहीं कर सकते किन्तु हमें उनकी कुछ अधिक महत्वपूर्ण अवस्थाओं को देखना चाहिए। अक्तूबर 1106 ई की ग्वासटल्ला (Guastalla) की परिषद् में पस्कल द्वितीय ने अयाजक प्रतिष्ठापन के निषेध को दोहराया परन्तु साथ ही हेनरी पंचम के प्रति निधियों के साथ यह भी निश्चित किया कि वह शीघ्र ही जर्मनी आयेगा।[10] परन्तु जैसा जीनबट ने अपने इतिवृत्त (क्रानिकल) में संकेत किया है यह देखकर कि राजा एवं जर्मनी का दृष्टिकोण अनिश्चित है वह फ्रांस की ओर चला गया। हेनरी जर्मनी में सम्बद्ध प्रतिष्ठापन के विषय में जर्मनी क्षेत्र के बाहर हुई परिषद् में औपचारिक विचार पर सहमत नहीं हुआ।[11] किन्तु शीघ्र ही मई 1107 ई में शालों (Chalons) में एक अनौपचारिक भेंट हुई तथा इस भेंट में जिसका पर्याप्त रूप से विस्तृत विवरण एबट जुगर (Abbot Suger) ने प्रस्तुत किया है ट्रीर के आर्चबिशप द्वारा राजकीय दावे का एक वक्तव्य

प्रस्तुत किया जो कि बहुत उल्लेखनीय है। उसने बताया कि ग्रेगोरी महान् के युग से ही यह साम्राज्य का कानूनी अधिकार रहा है कि चुनाव का निम्न प्रकार अपनाया जाए। औपचारिक चुनाव से पूर्व जिस व्यक्ति का नाम प्रस्तावित करना है उसके बारे में राजा की अनुमति ले ली जाए फिर औपचारिक चुनाव जनता का भाग पादरियो द्वारा निर्वाचन तथा सम्माननीय जन (Honoratiores) की स्वीकृति से हो। अभिषेक के बाद बिशप सम्राट के पास जाए जो मुद्रा तथा दण्ड द्वारा उसे पद चिह्न से प्रतिष्ठित करें तथा वह उसके प्रति समादर तथा निष्ठा प्रदान करे। किसी भी दूसरी स्थिति में उसको नगरो दुर्गों आदि का स्वामित्व न मिले जो कि राजकीय सत्ता की सम्पत्ति है। उसने कहा कि यदि पोप इससे सहमत हो तो साम्राज्य एव चर्च में शान्ति स्थापित हो जाएगी।[1]

हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते कि जुगर के वर्णन का प्रत्येक अंश सत्य है किन्तु इसमें सन्देह करने का कोई कारण नहीं है कि सार रूप में यह सत्य है तथा इस स्थिति में इसका बड़ा महत्त्व है क्योंकि ये प्रस्ताव हेनरी पचम की ओर से समझौते की दिशा में वास्तविक प्रगति के सूचक हैं। इस वक्तव्य में दो बातें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं पहली तो यह कि राजा नियुक्ति का अधिकार नहीं वरन् चुनाव से पूर्व राय लिए जाने तथा निषेधाधिकार के अधिकार मागता है दूसरा जबकि हेनरी दण्ड एव मुद्रा से प्रतिष्ठित करने का स्वत्व बनाए रखता है यह अभिषेक के बाद होगा पूर्व नहीं तथा इसका सम्बन्ध निश्चित रूप से धर्माध्यक्षीय पद की सामान्य प्रकृति से न होकर केवल पद चिह्न प्रदान करने से है।

जुगर के वर्णन से प्रतीत होता है कि तत्काल तो राजकीय प्रस्तावों पर गभीर ध्यान नहीं दिया गया। दन पीयासेन्जा (Piacenza) के बिशप को पोप के नाम पर यह कहता हुआ बताता है कि यदि चर्च राजा की राय के बिना बिशप को नहीं चुन सकता तो यह चर्च को दास बना देने के समान होगा—राजा के द्वारा मुद्रा एव दण्ड से प्रतिष्ठापन दवी अधिकारों का अतिक्रमण तथा निष्ठा का समारोह बिशप की गरिमा के विपरीत था। जुगर कहता है कि जमनों ने यह वक्तव्य अत्यन्त अरुचिपूर्वक सुना और धमकी दी कि झगड़े का निपटारा यहाँ नहीं अपितु रोम में तलवारों से होगा।[13]

मई के अन्त में पस्कल ने ट्रोयेस (Troyes) में एक परिषद् बुलाई तथा वहाँ बिशप के स्वतन्त्र चुनाव के बारे में आज्ञप्ति प्रचलित की तथा धार्मिक नियुक्तियों में जनसाधारण के हस्तक्षेप की निन्दा की[14] किन्तु उसी समय यह तय किया गया कि हेनरी पचम अगले वर्ष इटली आए तथा सारे प्रश्न पर एक सामान्य सभा में विचार किया जाए।[15] यह व्यवस्था भग हो गई किन्तु पोप एव हेनरी के बीच बातचीत चलती रही तथा डा पाइज़र (Dr Peiser) की राय में Tractatus de Investitura ग्रन्थ जिस पर हम पिछले अध्याय में विचार कर आए हैं इसी युग का है तथा राजकीय पक्ष द्वारा समझौते की दिशा में एक निश्चित प्रगति का प्रतीक है।[16] 1109 ई में हनरी ने महत्त्वपूर्ण बिशपों का एक राज प्रतिनिधिमण्डल पोप को अपने रोम आने के इरादे की घोषणा करने के लिए भेजा पस्कल ने दूतों का अच्छा स्वागत किया तथा पडरबान के एनल (Annals of Paderborn) के अनुसार उनको विश्वास दिलाया कि वह धर्मविधि सम्मत एव धार्मिक अधिकारों के अतिरिक्त कोई माँग नहीं करेगा तथा किसी भी प्रकार से राजा के

अधिकारों को कम करने का कोई भी प्रयत्न नहीं करेगा।[17]

1110 ई० के अगस्त में हेनरी पचम ने एक विशाल सेना लेकर इटली को प्रस्थान किया तथा वर्ष के अन्त तक वह ऐरेजो (Arezzo) आ पहुँचा तथा वहाँ से ही पस्कल से पत्र-व्यवहार करने लगा। एक्वापेन्देते (Acqupendente) से उसने पुन दूत भेजे जो पोप के प्रतिनिधियो के साथ सुत्री (Sutri) में उससे पास लौट आए।

इसके बाद उनमें होने वाली समझौते की वार्ता के प्रमुख विषयों को समझाने के लिए एक्कहार्ड द्वारा उनका अपने क्रानिकल में दिया हुआ संक्षिप्त विवरण उपयोगी होगा। पोप के दूतों ने घोषणा की कि वह राजा का अभिषेक करने तथा उसे सभी सम्मान एवं सद्भाव प्रदान करने को प्रस्तुत हैं यदि राजा प्रयाजक प्रतिष्ठापन को निषेध करके चर्च की स्वतन्त्रता का वादा करे। इसके बदले में पोप ने वादा किया कि चर्च भी सभी रियासतें, काउन्टशिप, चर्ची आदि तथा अपने अधिकार में सभी पद चिह्न को समर्पित करने के लिए तयार है। राजा ने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया किन्तु इस शर्त पर कि यह व्यवस्था Firma et autentica ratione consilio quoque vel concordia totius aecelesiae ac regni principum assensu स्थापित की जानी चाहिए, अर्थात् राजा चाहता था कि इस समझौते को सम्पूर्ण चर्च का अनुमोदन तथा स्वीकृति एवं साम्राज्य के सभी राजाओं की सहमति प्राप्त होनी चाहिए। एक्कहार्ड यह और कहता है कि राजा को विश्वास नहीं था कि यह प्राप्त हो सकती थी।[18]

समझौते की बातचीत एव बाद की घटनाओं का वर्णन हमारे पास दो रूपों में है। पहला पस्कल द्वितीय के एक समर्थक द्वारा जो कि उनका प्रत्यक्षदर्शी था लिखा गया एक विवरण जो तथा पस्कल द्वितीय के रजिस्टर में सम्मिलित कर लिया गया तथा फिर एनाल्स रोमेनी (Annales Romani) में शामिल किया गया दूसरा हेनरी पचम का सभी ईसाइयो को सम्बोधित एक विश्व-पत्र। इनमें केवल घटनाओं का वर्णन ही नहीं अपितु कुछ अधिक महत्वपूर्ण दस्तावेज भी हैं जिनमें वह अधिकार पत्र भी सम्मिलित है जिसके लिए प्रयत्न किया गया था।

सबसे पहले महत्वपूर्ण दस्तावेज वे हैं जिनमें हेनरी पचम तथा पैस्कल द्वितीय के पारस्परिक वादे हैं। हेनरी पचम ने वादा किया कि पद चिह्न के बारे में पोप द्वारा समझौते में स्वीकृत कार्यों को कर लेने पर वह प्रतिष्ठापन के बारे में सभी स्वत्वों को छोड देगा चर्च उन वादों और सम्पदाओं के विषय में स्वतन्त्र रहेगा जो कि राज्य की नहीं थीं तथा वह सत पीटर की विरासत और सम्पत्ति को वैसे ही बनाए रखेगा जैसा कि चार्ल्स लुई हेनरी एव अन्य सम्राटों ने किया था।[19]

पस्कल द्वितीय ने पीटर लियोनिस (Peter Leonis) के द्वारा जो रोम का अध्यक्ष (Prefect of Rome) था यह प्रतिज्ञा की कि यदि राजा दस्तावेज में कहे गए अपने वादे को पूरा करेगा तो पोप राजा के अभिषेक के दिन सभी उपस्थित बिशपों को आदेश देगा कि वे चार्ल्स लुई हेनरी तथा उनके पूर्ववर्तियों के युग में साम्राज्य के अधिकार में विद्यमान पद चिह्नों को राजा और साम्राज्य को लौटा दें। उसने वादा किया कि वह लिखित रूप में सत्ता एवं न्याय द्वारा तथा धर्म बहिष्करण के दण्ड के प्रावधान सहित आदेश देगा कि

कोई भी उपस्थित एव अनुपस्थित बिशप अथवा उनके उत्तराधिकारी उन पद चिह्नों में जसे नगर ड्यूकी एव काउन्टा की रियासतें आदि जिन पर साम्राज्य का स्पष्ट अधिकार था ^{0} अनधिकार पूर्ण हस्तक्षेप नही करेगा। पीटर लियोनिस ने शपथ ली कि यदि पोप अपनी प्रतिज्ञा पूरी न करेगा तो वह राजा का साथ देगा।[1]

इन पारस्परिक प्रतिज्ञाओ से हमे एक घोषणा की तुलना करनी चाहिए जो कि हेनरी के विश्व पत्र मे सम्मिलित है। कान्सटीटयूशन्स' के सम्पादक ने यह सुझाव दिया है कि पस्कल को ये घोषणाएं अभिषेक के दिन जारी करनी थी। इस दस्तावेज म केवल पद चिह्नो को लौटाने की आज्ञप्ति की औपचारिक घोषणा ही नहीं है अपितु उन परिस्थितियो पर एक तर्कसम्मत वक्तव्य भी है जिनके कारण पोप ने ऐसा किया। वह घोषणा करता है कि जबकि किसी भी पुरोहित को राज्य के कार्यों तथा राज्य की सभाओं में भाग नहीं लेना चाहिए तथा किसी पीडित व्यक्ति की सहायता करने के अतिरिक्त राज्य के न्यायालय म उपस्थित नही होना चाहिए हेनरी के साम्राज्य मे बिशप एव एबट निरन्तर लौकिक कार्यों म व्यस्त रहते हैं क्योंकि उनके द्वारा राजा से नगर रियासतें और दूसरी सम्पदाए स्वीकार की गई हैं जो राज्य की सेवा से सम्बन्धित हैं। इसके ही कारण वह इस प्रथा का विकास बताता है कि बिशपो का अभिषेक तबतक न हो जबतक कि वे राजा द्वारा प्रतिष्ठापन' प्राप्त न कर लें। यह धम विक्रय का तथा निर्वाचन के बिना बिशप पदों पर नियुक्ति का कारण रहा है तथा इन्ही दोषो के उपचार के लिए ग्रेगोरी सप्तम एव अरबन द्वितीय ने अयाजक प्रतिष्ठापन की निन्दा की थी तथा वह उनके काय का समथन करता है। अत वह आज्ञा देता है कि चार्ल्स लुई हेनरी तथा राजा के अन्य पूर्ववर्तियो के समय से साम्राज्य के अधिकार मे विद्यमान सभी पद चिह्न' सौंप दिए जाए और कोई भी बिशप या एबट भविष्य म राजा के किसी विशेष अनुग्रह के बिना उनका दावा न करें तथा पोप की गद्दी पर उसका कोई भी उत्तराधिकारी इस विषय मे सम्राट या उसके राज्य को न सताए। तब वह आज्ञप्ति करता है कि अपनी बलि तथा अन्य सम्पदाओ सहित जो स्पष्टत साम्राज्य की सम्पत्ति नही है राज्यारोहण के दिन हेनरी द्वारा की गई प्रतिज्ञा के अनुसार सभी चच स्वतत्र हो जाएँगे।

यह स्पष्ट है कि इन पारस्परिक प्रतिज्ञाओ मे प्रतिष्ठापन के संघर्ष को समाप्त करने का एक ऐसे ढग का प्रयत्न है जिसे लगभग क्रान्तिकारी माना जा सकता है। हम देख सकते हैं कि यह स्वीकार किया गया है कि प्रतिष्ठापन का प्रश्न ऐसी परिस्थितियों के फलस्वरूप उत्पन्न हुआ था जो किसी सीमा तक दोनो पक्षों की माग के औचित्य को सिद्ध करती हैं। पोप स्वीकार करता है कि यह सत्य है कि बिशपो के पास बडा राजनैतिक शक्तियाँ थीं जिनके कारण यह दावा उठा कि बिशप का अभिषेक राजकीय स्वीकृति तथा प्रतिष्ठापन के बिना नहीं हो सकता तथा उसकी मान्यता है कि इसके परिणामस्वरूप धम विक्रय का उदय एव बहुधा निर्वाचन की स्वतत्रता का पूर्ण विनाश हो गया। अत सम्पूर्ण विपत्ति के मूल को नष्ट करने के लिए पस्कल प्रस्ताव करता है कि चच को पद चिह्नों' को त्याग देना चाहिए जबकि इसके बदले म हेनरी ने प्रतिष्ठापन को त्यागने की प्रतिज्ञा की है। ये प्रस्ताव वास्तव मे क्रान्तिकारी एव दूरगामी थे। वास्तव म उनका

अभिप्राय यह नहीं था कि चर्च अपनी सारी सम्पत्ति त्याग देवें वे दशमांश तथा अपनी अधिकांश भूमि रख सकते थे या किन्तु यदि इनको व्यावहारिक रूप मिल जाता तो चर्च की राजनैतिक स्थिति पूर्णत परिवर्तित हो जाती विशेषकर जर्मनी में विशेषतया परन्तु एक बड़ी सीमा तक सभी यूरोपीय देशों में।

हेनरी पंचम का विज्ञप्ति पत्र इस समझौते की बातचीत एव बाद में घटित होने वाली घटनाओं दोनों के ही सम्बन्ध में उसके आचरण के समर्थन में लिखा गया था। अत उसे हम सर्वप्रथम प्रस्तावों के सम्बन्ध में अपने दृष्टिकोण को दुनिया को समझाने का हेनरी का प्रयत्न समझना चाहिए। वह अपने आपको चर्च की सेवा के लिए उत्सुक एव उसकी न्यायोचित इच्छाओं के अनुरूप कार्य करने वाला बताते हुए उसे प्रारम्भ करता है। पस्कल ने उसे ऐसे न्याय सुझाए जो उसके साम्राज्य को विस्तृत एव गरिमा मण्डित बनायें किन्तु वास्तव में वह कपट पूर्वक साम्राज्य एव चर्च की यथार्थ स्थिति को नष्ट करने का प्रयास कर रहा था। वह कहता है कि पस्कल ने बिना किसी औपचारिक विचार (Absque omni audientia) के साम्राज्य से बिशपों और मठाध्यक्षों के उस प्रकार के प्रतिष्ठापन को छीनने का प्रस्ताव किया है जो चार्ल्स के समय से तीनसौ वर्षों से कुछ अधिक ही उसके अधिकार में है। जब राजकीय दूतों ने पूछा कि उस दशा में राजकीय सत्ता का क्या होगा क्योंकि उसके पूर्वज लगभग प्रत्येक वस्तु चर्च को प्रदान करते रहे हैं पस्कल ने उत्तर दिया कि राजा उन सब सम्पत्ति और पद चिह्नों को ले ले या बनाए रखे जिनको कि चार्ल्स लुई हेनरी तथा उसके अन्य पूर्ववर्तियों ने चर्च को प्रदान किया था तथा वे यदि दशमांश एव बलि-कर बने रहें तो उन्हें संतुष्ट रहना चाहिए। राजकीय दूतों ने उत्तर दिया कि राजा चर्चों के प्रति ऐसा दुर्व्यवहार करने तथा धर्म द्रोह का आरोप स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं। पोप ने विश्वास पूर्वक प्रतिज्ञा की तथा उसके प्रतिनिधियों ने उसके लिए शपथ ली कि वह स्वयं (Cum iusticia et auctoritate) चर्च से इन वस्तुओं को लेकर राजा और साम्राज्य को हस्तांतरित कर देगा। तब राजकीय दूतों ने वादा किया कि यदि पोप अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर देगा—यद्यपि वे जानते थे कि वैसा नहीं किया जा सकता—तो राजा चर्चों के 'प्रतिष्ठापन' के अधिकार को छोड़ देगा।[22]

सर्वप्रथम यह स्पष्ट है कि हेनरी पंचम इसके लिए उत्सुक था कि उसे बिशपों एव मठाधीशों को अपनी राजनैतिक स्थिति एव सत्ता से वंचित करने के प्रस्ताव के लिए उत्तरदायी नहीं समझा जाए परन्तु यह पोप ही था जिसकी ओर से यह प्रस्ताव आया था तथा दूसरे वह यह विश्वास दिलाना चाहता था कि उसने कभी नहीं सोचा था कि पोप अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर सकेगा। जैसा कि हम देख चुके हैं एक्कहार्ड कहता है कि राजा की स्वीकृति इसी शर्त पर दी गई थी कि पोप की प्रतिज्ञा की पुष्टि सलाहकारों द्वारा हो तथा उस चर्च एव साम्राज्य के राजाओं की सहमति प्राप्त हो तथा यह सम्भव प्रतीत होता है कि इन्हीं उन वाक्यांशों का अभिप्राय है जिनको जैसा हेनरी सूचित करता है पोप के वादे में दो बार दोहराया गया है नामत कि ऐसा (cum iusticia et auctoritate) किया जाए। जैसा हम देखेंगे कि रोमन एव जर्मन दोनों बिशपों एव मठाध्यक्षों

के इसी विरोध को ही हेनरी इस प्रस्तावित समझौते की असफलता उत्पन्न करने वाला बताता है।

अब हम उन वास्तविक घटनाओं के विचार की ओर प्रवृत्त होते हैं जो हेनरी के रोम आगमन पर घटीं। हेनरी के विश्व पत्र मे जब वह नगर मे प्रविष्ट हुआ तो उस पर कपट पूर्वक आक्रमण का वर्णन है किन्तु वह कहता है कि अपने आप को विचलित किए बिना वह सत पीटर के फाटक तक गया तथा वहाँ यह बताने के लिए कि वह ईश्वरीय चर्च को कोई हानि नहीं पहुँचाना चाहता उसने एक वक्तव्य जारी किया। तब उसने माँग की कि पोप अपना वचन पूरा करें जैसा उसकी प्रतिज्ञा में निहित है–cum iusticia et auctoritate जब पोप ने अपने वचन को लागू करने का प्रयत्न किया तो उसके सामने ही जर्मन एव रोमन विशप मठाध्यक्ष तथा सभी चर्च पुत्रों ने उसका विरोध किया तथा उसकी घोषणा को धर्म विद्रोह कह कर उसकी निन्दा की।[23]

दुर्भाग्य से हेनरी का विश्व पत्र इसी बिन्दु पर विच्छिन्न है। एक्कहार्ड का वर्णन जो मुख्यतया किसी स्काटलण्डवासी डेविड (David the Scot) के द्वारा रचित विवरण पर आधारित है जिसे हेनरी अपने साथ लाया था[4] पोप के प्रस्तावों पर राजाओं के उपद्रवपूर्ण विरोध का वैसा ही वर्णन करता है जिसके कारण चर्चों के भ्रष्ट होने तथा उसकी धर्म वृत्ति (beneficia) की हानि होने की सम्भावना थी।[5]

रोमन विवरण में दिया गया वृत्तान्त अधिक विस्तृत है। राजा के रोम में आने तथा पोप द्वारा सत पीटर के गिर्जा की सीढ़ियों पर उसके स्वागत करने और उसे सम्राट घोषित करने के वर्णन के बाद उसके अनुसार वे सभी चर्च में प्रविष्ट हुए तब पोप ने हेनरी से उसके लिए प्रतिष्ठापन के अधिकार का त्याग एव अन्य वादे पूरे करने को कहा जबकि वह अपनी ओर से उसकी पूर्ति करने के लिए तैयार था जिसके लिए उसने वादा किया था। हेनरी चतुर्थ उसे तुरत पूरा करने के बजाय अपने विशपों एव राजाओं के साथ चर्च के उस भाग को चला गया जो सेक्रेटेरियम (secretarium) के पास था तथा उनके साथ वहाँ विचार करने लगा। अत में एक दीर्घ विलम्ब के बाद जर्मन विशप लौट आए तथा घोषणा की कि auctoritate et iustitia लिखित समझौते की पुष्टि नहीं की जा सकती। पोप ने यह कहते हुए उत्तर दिया कि सीजर की वस्तुएं सीजर को ही लौटानी चाहिए तथा जो भी ईश्वरीय सेवा में संलग्न हैं वे लौकिक विषयों में अपने को सलग्न न करें किन्तु वे जैसा रोमन विवरण कहता है अपनी कपट पूर्णता एव दुराग्रह पर अड़े रहे।[26]

पोप पर आरोपित तर्कों का अभिप्राय स्पष्टतया विशप पद के उन अधिकारों का समर्पण प्रतीत होता है जो कि इनके आध्यात्मिक पद से सम्बद्ध नहीं थे। अत यह प्रतीत होता है कि उस समझौते का अर्थ जिसका पुष्टीकरण जर्मन विशपों ने स्वीकार नहीं किया उनके अनुसार पद चिह्नों का समर्पण था और जब वे कहते थे कि उसकी पुष्टि नहीं हो सकती तब उनका अभिप्राय था कि उसके लिए चर्च की सहमति आवश्यक थी एव वह प्रदान नहीं की जाएगी। इस प्रकार समझौते की बातचीत टूट गई और इसके बाद की घटनाओं पर हम सक्षिप्त विचार करेंगे। यह वाग्विवाद सारे दिन मध्याह्नकाल तक चलता रहा तब पोप के मित्रों ने प्रस्ताव किया कि वह तुरन्त सम्राट का राज्याभिषेक

करें तथा आगे की बातचीत अगले सप्ताह तक के लिए स्थगित कर दी जाए। हेनरी के प्रतिनिधि इससे सहमत नहीं हुए तथा अन्त में पोप और उसके साथियों को बन्दी बना लिया गया। दूसरे दिन रोमवासियों ने जर्मन सेनाओं पर प्रबल आक्रमण किया तथा तीसरे दिन हेनरी रोम से पोप और कार्डीनलों को अपने साथ लेकर लौट गया। पोप को बन्दी बनाकर रखा गया तथा हेनरी ने माँग की कि वह औपचारिक रूप से 'प्रतिष्ठापन' के राजकीय अधिकार को स्वीकार करे किन्तु साथ ही उसने यह भी घोषणा की कि वह अधिकार जिसका कि वह दावा कर रहा है चर्चों अथवा बिशपों के धार्मिक कर्त्तव्यों से सबद्ध नहीं किन्तु केवल पदचिह्नों से सबध रखता है। अन्त पस्कल ने रोमन क्षेत्र के विनाश, रोम नगर एव चर्च के विनाश के कारण निरन्तर उसको किए जा रहे आवेदनों से अभिभूत होकर तथा तुरन्त धर्म में फूट पड़ने की आशंका को देखकर यह कहते हुए समर्पण कर दिया कि चर्च की स्वतन्त्रता के लिए वह यह कार्य करने को विवश हुआ है जो कि अपनी जीवन रक्षा के लिए भी वह कदापि नहीं करता।[27]

समझौते की वास्तविक शर्तों को सम्मिलित करने वाले दस्तावेज रोमन विवरण एव एक दूसरे राजकीय प्रतिलेख में हैं। वे शर्तें जिनके अन्तर्गत पोप की ओर से पहली बार छूट दी गई थी बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। पोप अपने घोषणा-पत्र (Privilegum) द्वारा निम्न व्यवस्थाओं को पुष्टि की प्रतिज्ञा करता है। बिशप या मठाध्यक्ष का राजा की सहमति से धन विक्रय के बिना स्वतन्त्र चुनाव होगा। फिर राजा उसको दंड एव मुद्रा द्वारा प्रतिष्ठित करेगा। बिशप अथवा मठाध्यक्ष जिसे इस प्रकार स्वतन्त्र रूप से 'प्रतिष्ठित' किया गया है उस व्यक्ति द्वारा स्वतन्त्र रूप से अभिषिक्त होगा जिसका कि यह अधिकार है। जिसने राजा से प्रतिष्ठापन प्राप्त नहीं किया है ऐसे किसी भी व्यक्ति का अभिषेक नहीं हो सकेगा चाहे उसे पादरियों तथा जनता ने चुन लिया हो। आर्चबिशपों एव बिशपों को उन लोगों का अभिषेक करने की अनुमति है जिनको राजा द्वारा प्रतिष्ठापन प्राप्त है। इस प्रकार राजकीय दावे के सामने यह पूर्ण समर्पण था किन्तु यह उल्लेखनीय है कि हेनरी पचम ने स्वतन्त्र निर्वाचन के अधिकार को सिद्धान्त रूप में मान लिया था तथा अपने लिए केवल सहमति देने अथवा न देने का अधिकार सुरक्षित रखा। यह छूट औपचारिक मानी जा सकती है किन्तु महत्त्वहीन नहीं।

वास्तविक घोषणा पत्र में प्रतिज्ञा की शर्तों को दोहराया गया है किन्तु उसमें कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्धन भी हैं। उसमें कहा गया है कि 'प्रतिष्ठापन' का अधिकार पस्कल के पूर्ववर्तियों द्वारा पुराने सम्राटों को प्रदान किया गया था तथा इस प्रकार स्पष्टतया अप्रामाणिक प्रलेखों की प्रामाणिकता को स्वीकार किया गया है जिनके अनुसार पोप हेड्रियन प्रथम एव पोप लियो तृतीय द्वारा इन अधिकारों को प्रदान किया गया था। हम पहले ही परेरा के विडो द्वारा इनका उल्लेख देख चुके हैं।[28] तथापि इसके लिए दिया गया कारण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है जो नामत यह है कि बिशपों एव मठाध्यक्षों को पदचिह्नों का प्रदान इसलिए प्रमाने में किया गया है कि साम्राज्य की सुरक्षा उन पर निर्भर है।[29] पदचिह्नों का साम्राज्य के लिए महत्त्व का उल्लेख उस वक्तव्य से मेल खाता है जिसे हम अभी देख चुके हैं, कि हेनरी पचम द्वारा 'प्रतिष्ठापन' अधिकार के दावे में केवल

पद चिह्नो का ही उल्लेख था विशप के आध्यात्मिक पद का न ी।

एक्कहाड इन घटनाओ का सक्षिप्त वर्णन करता है तथा प्रसन्नतापूर्ण अभिव्यक्ति से समापन करता है कि अत म पृथ्वी पर ईश्वर की गरिमा एव शाति प्राप्त हुई तथा विभाजन का दीघ ोक प्रवा दूर हो गया[30] किन्तु उसकी प्रसन्नता अपरिपक्व थी क्योकि पोप के इस काय का तुरन्त ही चच के एक विशाल भाग द्वारा खडन किया गया तथा कुछ समय म ही पस्कल ि ीय ने अपने द्वारा प्रदान की गई सुविधाओ का निराकरण करने के लिए अपने को विवश पाया।

सदभ

1 Cf the excellent d scussions of the subject in p Imbert de l Tou de France du IX au XII Sicele 11 1 6

2 I owe the ref e e th oughout to F M k wer D Ve fass ng d r Ki che on E gland N te 23 24 pp 19 20

3 Eadm r H sto a Novorum (p 191)

4 Sp lman Conc li p 28

5 Will m of Malmesbury G sta ol i p 493

6 H go C tor History f F r Bish p of Yo k p 110

7 Eadmer H to a N um p 178

8 Id d (p 186) V ta Anselmi 63

9 इस पर श्रा गर्सो पाइस ने बहुत अच्छा शोध लेख लिखा है जिससे मुझे बहुत सहायता मिली है। Der Deutsche Investi turstreit unter Konig Heinrich V Berlin 1883

10 S egebe t Chron A D 1106

11 Id id A D 1107

12 Suger V ta Lud VI (M G H S S ol xx i p 50

13 Id id

14 Ekkeh rd Chronicon 1107

15 Id d 1107

16 Cf p 103

17 An al Pad bo nenses 1110

18 Ekkeha d Ch o on 1111

19 M G H Legum Sect IV Consti tut ones vol I 83

20 Id 85

21 Id 86

22 Id 100

23 M G H Legum Sect IV Consti t t nes I I 100 o

24 Ekk h d Chron c n (a) 1110

25 Ekkeh d Chr nicon (a) 1111

26 Id 99

27 Id id

28 देख भाग 2 अध्याय 3।

29 Id 96 P l g m Paschal s II De I e t t r

30 Ekkeha d Ch nicon (a) 1111

षष्ठ अध्याय

पैस्कल द्वितीय के कार्यों एव प्रस्तावो पर विचार

कुछ समय के लिए तथा दबाव मे आकर पस्कल द्वितीय ने सम्राट हेनरी पचम की मांगो के आगे आत्म समर्पण कर दिया था तथा प्रतिष्ठापन के अधिकार को स्वीकार कर लिया था किन्तु यह तात्कालिक ही था। एक वर्ष के भीतर ही समर्पण के विरुद्ध चर्च ने अपने रोष को इतने प्रबल शब्दो मे व्यक्त किया कि पस्कल द्वितीय उसे वापस लेने को स्वय विवश हो गया।

उसके कार्य के विषय मे समकालीन वाद विवाद पर विचार करना महत्वपूर्ण है क्योकि उससे यह सकेत मिलता है कि समझौते की माग वास्तव मे व्यापक थी तथा पद चिह्न के समर्पण पर उसके प्रस्ताव द्वारा उठाये गये या सुझाए गए विवाद पर विचार करना भी महत्त्वपूर्ण है।

उग्र पोपवादी दल की मनोदशा का अच्छा परिचय सेगनी के ब्रुनो (Bruno of Segni) द्वारा उस समय मे लिखे गये कुछ पत्रो मे मिलता है। इनमे से एक मे जो स्वय पस्कल को सम्बोधित है ब्रुनो उसके प्रति अपने प्रेम और निष्ठा को प्रतिपादित करते हुए भी उससे प्रार्थना करता है कि उसे ईसा से ज्यादा प्रेम करना चाहिए तथा वह कपट एव हिंसा की परिस्थितियो मे किए गए समझौते की निन्दा करता है। वह पस्कल द्वारा स्वय पहले किए गए अयाजक प्रतिष्ठापन के निषेध का अपने समर्थन मे उल्लेख करता है तथा उस पोप की आज्ञा से सगत बताता है तथा वह उन मनुष्यो को धर्मद्रोही कहकर उनकी निन्दा करता है जो रोम के चर्च की निष्ठा एव सिद्धान्तो का विरोध करते हैं।

यही दृष्टिकोण और भी प्रबलतर शब्दो मे वेन्डोम के मठाध्यक्ष जियोफी (Geoffrey) के द्वारा पस्कल को सम्बोधित एक पत्र मे व्यक्त किया गया है जिसे हेनरी पचम को रियायत देने के बाद तथा 1112 ई० की लेटरन परिषद् मे उसके प्रत्याहार से पूर्व लिखा

गया था। वह कहता है कि चच श्रद्धा पवित्रता एव स्वतन्त्रता पर ही जीवित है किन्तु अयाजक प्रतिष्ठापन के प्रति उदारता इन सबको नष्ट कर देती है तथा वह स्पष्ट शब्दों में कहता है कि यद्यपि चच के धमगुरु की चाहे उसका चरित्र दोषयुक्त भी हो तब भी आज्ञा माननी चाहिए किन्तु यदि वह धमद्रोही हो जाए तो उसे धमगुरु नहीं मानना चाहिए।[1] यह एक मनन्य वक्तव्य है तथा बलपूवक इस सत्य का दृष्टान्त प्रस्तुत करता है कि चच के ऐसे प्रसिद्ध अधिकारी थे जिनके इस प्रश्न पर इतने दृढ विचार थे कि वे चच की स्वतन्त्रता तथा पवित्रता के लिए विनाशकारी समझी जाने वाली इस व्यवस्था को स्वीकार करने की अपेक्षा स्वय पोप के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए तयार थे।

यह निस्सदेह बहु प्रचलित भावना थी तथा इसी को सम्मानपूवक उपस्थित करने के लिए ही पस्कल द्वितीय बाध्य हुआ जबकि उसने हेनरी पचम से किये गये समझौते को निरस्त कर दिया किन्तु यह एक गम्भीर त्रुटि होगी यदि हम यह सोचें कि मध्यस्थतावादी प्रवृत्ति जिस पर हमने पाँचवें अध्याय मे विचार किया पराजित तथा अन्तर्हित हो गई थी। इसके विपरीत वह शात्र के ईवो के दृष्टिकोण म जीवित रही तथा यह अधिक उल्लेखनीय है कि वह ऐसे व्यक्तियो के वाक्यो म भी अभिव्यक्त होने लगी जो अयाजक प्रतिष्ठापन का दृढनिश्चयपूवक विरोध करने पर बल देते थे।

हम शात्र के ईवो की लियोस के आच विशप आयोसरेनुस (Ioscerranus) को सम्भवत 1112 ई की कौंसिल एव पोप द्वारा प्रतिष्ठापन की छूट को औपचारिक रूप से वापस करने से पूव लिखे गए पत्र म स्थिति पर पहले ही विचार कर चुके हैं। वह उस स्वीकार नही करता था कि अयाजक प्रतिष्ठापन धमद्रोह है तथा मानता है कि उसकी अनुमति अथवा विरोध चच की प्रशासनिक व्यवस्था का अग है न कि शाश्वत विधि का। सम्भवत पस्कल के कार्यों क प्रबल विरोध का प्रभाव हम ईवो के मन पर पडा हुआ देख सकते हैं वास्तव मे वह अब इस मत का समथक प्रतीत होता है कि अच्छा हो यदि अयाजक प्रतिष्ठापन को समाप्त कर दिया जाय किन्तु उसम यह शत जोड देता है कि यह तभी किया जाय जबकि बिना धम मे फूट डाले यह सम्भव हो सके।[2]

इसम अधिक उल्लेखनीय दृष्टिकोण इस ग्रथ का है जो सभवत प्रत्याहार के तुरन्त बाद लिखी गई थी। लेखक मुद्रा एव दण्ड द्वारा प्रतिष्ठापन के विरुद्ध तर्कों को सशक्त रूप म प्रस्तुत करता है और कहता है कि ये आध्यात्मिक वस्तुओ के प्रतीक हैं तथा राजाओं द्वारा प्रदान नही किये जा सकते। दूसरी ओर वह यह स्वीकार करता प्रतीत होता है कि राजा ही पद चिह्नो को प्रदान कर सकता है[3] तथा वह सुझाव देता है कि वह राजदण्ड से वसा कर सकता है जो देश पर उसके अधिकार का प्रतीक है जिससे कि वह ड्यूक पद काउन्ट पद और अन्य पद चिह्न प्रदान करता है।[4] यह उल्लेखनीय है कि लेखक उस वास्तविक रूप को जताता है जिसके अन्तगत वाम्स के समझौते द्वारा सम्राट को पद चिह्न प्रदान करना था।[5]

इन रियायतो तथा पस्कल द्वितीय के प्रस्तावो द्वारा उठाए गए प्रश्नो पर सबसे उल्लेखनीय एव सबसे विस्तृत वाद विवाद नानातुला के प्लेसीडस (Placidus of Nonantula) के एक महत्वपूण ग्रन्थ म मिल सकता है जो सम्भवत 1111[6] ई के

अन्त मे लिया गया है क्योंकि वह केवल प्रतिष्ठापन ही नहीं वरन् सम्पूर्ण चर्च सम्पत्ति पर विचार करता है। प्रथम दर्शन में उसका मत सबसे अधिक सीमा तक अनम्य प्रतीत होता है क्योंकि वह इसे पूर्णत अस्वीकार करता है कि लौकिक सत्ता के दावे के पीछे वास्तव में कोई भी आधार है। किन्तु ध्यानपूर्वक परीक्षण से हमारा यह निर्णय सशोधित हो जाता है तथा वह यह सुझाता प्रतीत होता है कि जबकि वह अयाजक प्रतिष्ठापन की समाप्ति चाहता है तथापि वह इस मामले में किसी मध्यमार्ग को अपनाने को अस्वीकार नहीं करता तथा चर्च सम्पत्ति के बारे में उसके तर्क राजकीय दावे के विपरीत न होकर पोप द्वारा पदचिह्नों को सौंपने के प्रस्ताव के विरुद्ध हैं।

वह वास्तव में दृढ़तापूर्वक पस्कल द्वारा सम्राट को प्रतिष्ठापन का अधिकार सौंपने का खण्डन करता है तथा माँग करता है कि उसे यह छूट अस्वीकार कर देनी चाहिए।[7] वह इसे नहीं मानता कि अभिषेक के कारण सम्राट को बिशप अथवा मठाध्यक्ष को नियुक्त करने का कोई अधिकार मिलता है।[8] वह इस दावे से परिचित है कि पोप हेड्रियन प्रथम ने औपचारिक रूप से प्रतिष्ठापन का अधिकार चार्ल्स महान् को प्रदान किया था तथा वह स्पष्टत इस प्रदान की प्रामाणिकता को पूर्णतया खण्डन करने की स्थिति में नहीं था यद्यपि वह उसका उल्लेख करते हुए प्राय सन्देह व्यक्त करता है। अत वह यह तर्क करता है कि उसका कोई अन्य तथा अहानिकर अर्थ था या उसका सम्बन्ध किन्हीं तात्कालिक परिस्थितियों में था जिनके कारण वह उस समय उपयोगी रहा होगा किन्तु इस समय उत्पन्न अनिष्ट के कारण इसे रद्द कर देना चाहिए अथवा इसे पोप हेड्रियन द्वारा मानवीय दुर्बलताओं एव त्रुटि के कारण प्रदान किया गया था क्योंकि आठवीं धर्म सभा (Eighth Synod) में पोप हेड्रियन ने स्वय चर्च के चुनावों में लौकिक सत्ताधारियों द्वारा हस्तक्षेप की स्पष्टतया निन्दा की है। पोप स्वय भी जबकि उनको अधिकार प्राप्त है novas conder leges उन कानूनों को नहीं बदल सकते जिन्हें ईश्वर उसके प्रतिनिधियों अथवा उनके अनुयायी आचार्यों ने स्थापित किया है।[9] अत वह स्पष्टतापूर्वक एव बलपूर्वक अयाजक प्रतिष्ठापन के विरोध की माँग करता है तथा वह अनेक सुपरिचित वैधानिक नियमों को उद्धत करता है जो यह व्यवस्था करते हैं कि बिशप को धर्म क्षेत्र के पादरी एव जनता के द्वारा चुना जाए[10] और दूसरे स्थान पर वह यह जोड़ देता है कि बिशप का निर्वाचन पोप और उसके प्रतिनिधियों अथवा आर्च बिशपों के निर्णय पर आधारित है।[11]

अत अब तक यह भली भाँति प्रतीत होता है कि प्लसीडस पूर्णतया अनम्य था किन्तु जब हम थोड़ा अधिक पर्यवेक्षण करते है तो यह विचार सशोधित हो जाता है। वह स्वीकार करता है कि इन लोगों के दावों में कुछ बल है जो यह प्रतिपादित करते हैं कि यह अविचारपूर्ण है कि सम्राट अथवा राजा को बिशप के निर्वाचन में किसी भी प्रकार के योगदान से वचित रखा जाय जबकि जनता को इसकी अनुमति है और वह इसकी पुष्टि करता है कि उसका यह अभिप्राय नहीं है। धर्म-क्षेत्र के अन्य लोगों के समान ही सम्राट अथवा राजाओं का इन निर्वाचनों में अपना भाग है अर्थात् विशेषतया उन क्षेत्रों में जिनके वे पुत्र हैं परन्तु स्वामी या अधिपति के रूप में नहीं तथा इस अर्थ में उनको

निवाचन का पुष्टि करना चाहिए उनको अपना भौतिक तलवार से उसका रक्षा करनी चाहिए क्योंकि यह उनका उचित कर्तव्य है कि जो आध्यात्मिक तलवार से भयभीत न हो हान उनको भौतिक तलवार के आतक द्वारा विवश करें। यह महत्वहीन नहीं है यद्यपि यह वक्तव्य स्पष्टत सावधानी से बचकर किया गया है किन्तु प्लेसीडस इससे और भी आगे बढ़ जाता है। हम यहा पर चच का सम्पत्ति के बारे में उसके विचारो का विवरण देंगे किन्तु इस समय हम यह देखना चाहिए कि वह निस्संकोच यह स्वीकार करता है कि इस सम्पत्ति के स्वामित्व के साथ लौकिक सत्ता के प्रति कुछ कर्तव्य भी जुड़े हैं जिन्हे चच को पूरा करना चाहिए। वह कहता है चच को नजराना देना चाहिए[12] तथा राजा की और प्रकार की सेवा करनी चाहिए जिनकी प्लसीडस विशेष रूप से व्याख्या नहा करता विशेषतया उन दशाओं म जबकि चच को सम्पत्ति प्रदान करते समय उसके द्वारा कुछ विशेष अधिकार सुरक्षित रख गए हो।[13] वह एक स्थान पर स्वीकार करता है कि यदि राजा अपने अधिकारान्तगत किसी वस्तु को एक बिशप को देना चाहता है तो उचित रीति से वह उसी रूप म प्रतिस्थापित कर सकता है जसे कि वह दूसरे मनुष्यो को करता किन्तु उस मु ा एव दण्ड के द्वारा वसा नहीं करना चाहिए।[14] एक अन्य स्थल पर वह एक निश्चित प्रस्ताव करता है तथा यह आशा व्यक्त करता है कि उसम राज्य तथा याजकीय सत्ता (*sacerdotium*) के बीच पुन शान्ति स्थापित हो सकती है यदि यह व्यवस्था हो जाए कि सद्धान्तिक रूप से बिशप के निर्वाचन प्रतिष्ठा एव अभिषेक के बाद उसे स्वय या अपने किसी प्रतिनिधि के द्वारा सम्राट के पास उपस्थित होकर चच को उसे सौंपी गई सम्पत्ति के बारे म राजकीय निर्देश (praeceptum) प्राप्त करने चाहिए। सम्राट को तब प्रसन्नतापूवक अपने पूवजो द्वारा चच का प्रदत्त वस्तु का उसका प्रदान एव पुष्टि करनी चाहिए तथा बिशप एव चच के प्रति राजकीय सरक्षण की प्रतिज्ञा करनी चाहिए।[1]

यह स्पष्ट है कि प्लसीडस तथा Disputatiovel Defensio Laschalis Papae के लेखक की स्थिति पोप की नीति के समयकों की ओर से समभौते का और वास्तविक प्रगति का प्रतिनिधित्व करती है—वास्तव म यह स्पष्ट है कि वे किसी सीमा तक फरेरा के विडो (Wido of Ferrara) जसे मनुष्यों की मान्यताओं के प्रमुख पक्षो के महत्व को समझते थे।

हम कुछ समय के लिए प्लसीडस द्वारा चच की सम्पत्ति की प्रकृति के सम्पूर्ण निरूपण के बारे म विचार करने के लिए प्रवृत्त होना चाहिए। यह हमे सभव प्रतीत होता है कि मुख्यतया यह पस्कल द्वितीय के पदचिह्नो के समपण सम्बन्धी प्रस्ताव इतने दूरगामी थे कि उन पर प्रकाश डालने वाली कोई भी वस्तु जिसे हम पा सकें बहुत महत्वपूर्ण होगी।

उस ग्रन्थ की भूमिका म जिसका हम वणन कर रहे हैं प्लसीडस कुछ ऐसे लेखकों के वाक्याशो को उद्धृत करता है जो लौकिक सत्ताधारियो के पक्ष से यह कहते हैं कि क्योंकि चच आध्यात्मिक है अत उसकी कोई भौतिक सम्पत्ति वास्तविक चच भवनो के अतिरिक्त नहीं है तथा यदि चच के लोग भौतिक सम्पदा चाहते हैं तो चच के कानूनो से उनको प्राप्त नहीं कर सकते। यदि लौकिक शासकों के उपहारो को छोड़ दें तो पादरी के पास वेदी पर लाई हुई वस्तुएँ दशमाश एव पहली उपज के अतिरिक्त कुछ नहीं होना

चाहिए। अन्य सभी सम्पदा का स्वामित्व राजा का है अत जो उसमे विशप पद या मठाध्यक्ष का पद प्राप्त करना चाहते हैं उनको उससे ही व प्राप्त करने चाहिए अथवा जो उसकी सम्पत्ति है उस पर से अधिकार समाप्त कर देना चाहिए। यदि पादरी दशमांश पत्नी उपज एव बलि से सतुष्ट हो तो मामला उनके ही हाथो म है किन्तु यदि व उस सम्पत्ति को चाहते हैं जो पहले चच को प्रदान की गई थी तो व उस राजा से ही प्राप्त कर सकते हैं।

प्लसीडस इन सभी सिद्धान्तो को सभी सच्चे कैथोलिकों के लिए तिरस्करणीय बताकर उनकी निन्दा करता है क्योकि यह पवित्र आत्मा है जिसने कि चच को केवल आध्यात्मिक ही नहीं भौतिक वस्तुए भी प्रदान की है तथा आग्रह करता है कि विशपो को ईश्वर को समर्पित छोटी एव बडी सभी सम्पत्ति अपने अधिकार मे रखनी चाहिए। जो चच को प्रदत्त है वह ईसा को प्रदत्त है तथा जो उसे लूटते हैं वे देवद्रोह के दोषी हैं। जो चच की सम्पत्ति है वह विशपो के अधिकार म रहनी चाहिए जो कि किसी भौतिक सत्ता द्वारा नही अपितु धम क्षेत्र के पादरियो एव जनता द्वारा निर्वाचित एव दूसरे विशपों द्वारा पुष्टीकृत है। चच नजराने के अलावा राजा को किसी भी वस्तु का देनदार नही है।[16]

य मान्यताए ग्रन्थ के मुख्य भाग म और अधिक विस्तृत की गई हैं। जो एक बार चच को दिया गया है वह स्थायी रूप से ईसा का है।[17] चच की भौतिक वस्तुओ को आध्यात्मिक वस्तुओ से उसके दो टुकडे किए बिना पृथक नहीं किया जा सकता क्योंकि जसे कोई भी मनुष्य शरीर के बिना जीवित नहीं रह सकता उसी प्रकार चच का भी भौतिक वस्तुओ के बिना ससार म अस्तित्व नहीं है।[18] वह कहता है कि कुछ लोग यह मानते हैं कि चच पूर्ण शान्ति सय म केवल दशमांश पत्नी उपज एव बलि का ही स्वामी है तथा दुर्ग जागीर आदि जसी अचल सम्पत्ति उसी सीमा तक उसकी हैं जहाँ तक कि विशप ने उसको सम्राट के हाथो से प्राप्त किया है। प्लसीडस की मान्यता है कि यह मिथ्या है क्योंकि जो चीज एक बार ईश्वर को सौंप दी जाए वह सदा के लिए उसी की सम्पत्ति है।[19] वह पुन इस तक का उल्लख करता है जबकि चच ईश्वर के लिए स्वय रक्षित है तथा ईश्वर एव उसके पुरोहितो की ही सम्पत्ति है व वस्तुए जो सम्प्रति गौरवाण चच के स्वत्व म हैं जसे कि डची काउन्टशिप जागीर नगर इस अथ मे सम्राट की सम्पत्ति है कि जब तक प्रत्येक विशप के पदारोहण के समय उसको उनके प्रदान का नवीकरण न किया जाए तबतक वह उन्हे नही पा सकता तथा इससे यह भी परिणाम निकलता है कि उसके द्वारा ही प्रतिष्ठापन प्रदान किया जा सकता है।[20]

प्लसीडस इन मान्यताओ का बलपूवक खण्डन करता है तथा यह प्रतिपादन करता है कि कान्सटेन्टाइन के पूव चच के अधिकारान्तगत स्वत्प सम्पत्ति हो न हो किन्तु उसके समय स चच द्वारा प्राप्त सभी महान् सम्पत्ति पर चच का स्वत्व है क्योंकि वे सभी ईश्वर को समर्पित हैं[21] तथा वह अभिषेककर्ता आचविशप द्वारा धर्म-दण्ड को विशप या मठाध्यक्ष को प्रदान करने के नियम की इसी रूप म व्याख्या करता है कि उसम न केवल जनता पर शासन के ही अधिकार की अपितु ईश्वर द्वारा स्वय चच के भौतिक सम्पत्ति

सप्तम अध्याय

वॉर्म्स का समझौता

प्रतिष्ठापन के प्रश्न पर समझौते का पहला प्रयत्न असफल हो गया था तथा कुछ वर्षों के लिए ऐसा प्रतीत होने लगा कि मामले का भी प्रगति नहीं हुई है। मार्च 1112 ई में लटरन की परिषद् में पस्कल ने उन परिस्थितियों का वर्णन किया जिनके कारण विवश होकर वह हेनरी पंचम को रियायत देने को विवश हुआ था तथा इसका स्पष्ट करते हुए कि वह उसे धर्म-बहिष्कृत नहीं करेगा उसने यह परिषद् पर छोड़ दिया कि यह किस प्रकार निरस्त की जा सकती है। परिषद् के अन्तिम दिन उसने ग्रेगरी सप्तम तथा अरबन द्वितीय की घोषणाओं की परिपुष्टि की तथा परिषद् ने औपचारिक रूप से विशेषाधिकार (Privilegium) को निन्दा की किन्तु अधिक कट्टरपन्थी चर्च के सदस्य इससे सन्तुष्ट नहीं थे तथा सितम्बर 1113 ई में वियन के आर्चबिशप गाइडो (Guido) ने जो कि बाद में पोप कैलीक्सटस द्वितीय बना (Calixtus II) वियन (Vienne) में एक परिषद् बुलाई जिसने यह घोषणा की कि अयाजक प्रतिष्ठापन अधर्म था तथा औपचारिक रूप से हेनरी पंचम को धर्म-बहिष्कृत कर दिया। तदनन्तर पस्कल को पत्र लिखकर उससे इच्छापूर्वक अनुरोध किया कि इन कार्यों की पुष्टि करे तथा सूचना दी कि ऐसा न करने पर वे उसकी आज्ञा न पालन करने को बाध्य होंगे।[2] स्पष्टतः पस्कल ने इसे स्वीकार करने के लिए अपने को विवश पाया तथा गाइडो को अपने उत्तर में उसने वियेने की परिषद् की कार्यवाही की संपुष्टि कर दी।[3] 1116 ई में लटरन की परिषद् में पस्कल ने पुनः घोषणा की कि हेनरी के प्रदत्त विशेषाधिकार अमान्य हैं तथा उनको धर्म बहिष्कृत कर दिया जो अयाजक प्रतिष्ठापन ग्रहण अथवा प्रदान करते थे। कार्डीनल कूनो (Cardinal Kuno) ने सूचना दी कि उसने हेनरी पंचम को हंगरी लारेन सक्सोनी तथा फ्रांस की पाँच परिषदों में धर्म-बहिष्कृत कर दिया है।[4] एक्हार्ड के विवरण से स्पष्ट है कि पोपवादी दल पुनः जर्मनी के बिशपों में सर्वोच्च हो गया था तथा जर्मनी में राजनैतिक अव्यवस्था पुनः द्रुतगति से बढ़ रही थी।[5]

21 जनवरी 1118 ई को पस्कल द्वितीय का देहावसान हो गया तथा यह स्पष्ट हो गया था कि रोम में हेनरी की 1111 ई की सफलता केवल दिखावटी थी तथा

धार्मिक वस्तुओं से सम्बन्धित हो तो धार्मिक नियमों के द्वारा या लौकिक हो तो लौकिक नियमों द्वारा निश्चित होना था। पोप ने भी सम्राट की ही भाँति हेनरी एवं उसके समर्थकों से शांति रखने एवं उनकी सम्पत्ति उन्हीं शर्तों के अन्तर्गत जैसी सम्राट ने मानी थीं लौटाने की प्रतिज्ञा की।[1] एक क्षण के लिए ऐसा प्रतीत होने लगा कि समझौता हो गया है किन्तु यह स्पष्ट है कि या तो प्रयोग किए गए शब्दों के अभिप्राय के बारे में कोई भ्रम था या विचार करने पर सम्राट का विश्वास हो गया कि वह बहुत अधिक समर्पण कर रहा है।

कलीक्सटस द्वितीय 18 अक्टूबर को रीम्स पहुँचा तथा उसने अस्थायी रूप से परिषद् का उद्घाटन किया जिसमें फ्रांस का राजा और महाध्यक्षों के अतिरिक्त दो सौ पन्द्रह बिशप एवं महाबिशप उपस्थित थे। वह 23 अक्टूबर को माउजों के लिए रवाना हो गया तथा हेनरी पंचम ने भी निकट ही शिविर स्थापित किया। उनकी भेंट से पूर्व ही पोप के दल में हेनरी द्वारा स्वीकार की जाने वाली शब्दावली के बारे में सदेह उठ चुके थे। इनमें कहा गया था कि हेनरी को सभी चर्चों के सभी प्रतिष्ठापनों को त्याग देना था किन्तु यह सुझाया गया कि यह शब्दावली द्वयर्थक है तथा इसकी व्याख्या की आवश्यकता है ताकि इसका आश्रय लेकर वह चर्चों की सम्पत्ति पर दावा न कर सके अथवा इस प्रकार की सम्पत्ति द्वारा प्रतिष्ठापित करने के अधिकार का दावा न कर सके। यह भी आग्रह किया गया कि पोप की प्रतिज्ञा का अभिप्राय यह समझा जा सकता है कि वह साम्राज्यिक दल के उन सभी बिशपों को मान्यता देता है जो उन बिशप पदों पर भी थोपे गए थे जिन पर पहले से ही वैधानिक बिशप आसीन थे या जिनको धर्मविधि के अनुसार पदच्युत किया जा चुका था। शाम्पू का विलियम कलूनी के महाध्यक्ष आस्टिया के कार्डीनल बिशप (Cardinal Bishop of Ostia) वीवियें के बिशप (Bishop of Viviers) तथा दूसरे पोप के दूत सम्राट के पास भेजे गए तथा उन्होंने समझौते का प्रारूप का अर्थ पोप के समर्थकों ने जिस रूप में समझा था उस प्रकार प्रस्तुत करने का कार्यारम्भ किया। सम्राट ने पहले तो साफ मना कर दिया कि उसने इनमें से किसी भी चीज की प्रतिज्ञा की थी। शाम्पू के विलियम ने घोषणा की कि वह शपथ लेकर कह सकता है कि सम्राट ने इन सब बातों को स्वीकार किया था तथा उसने सम्राट के कथन का यही अभिप्राय समझा था। अन्त जब सम्राट यह स्वीकार करने को विवश हो गया कि यह सत्य है तो उसने शिकायत की कि उसने उनकी राय से जो प्रतिज्ञाएं की हैं उनका पालन साम्राज्य को गम्भीर हानि पहुँचाए बिना नहीं किया जा सकता। शाम्पू के विलियम ने उत्तर देते हुए उसे विश्वास दिलाया कि पोप साम्राज्य की सत्ता को कम नहीं करना चाहता तथा उसने स्पष्ट रूप से घोषणा की कि बिशप सम्राट की सैनिक एवं अन्य सेवाएं उसी प्रकार करते रहेंगे जैसे कि वे करते आए हैं।[13] हेनरी ने तब एक दिन की अवधि माँगी ताकि वह राजाओं से राय ले ले किन्तु जब पोप के दूत दूसरे दिन पहुँचे तो उसने निर्णय उस समय तक के लिए फिर निलम्बित करने की प्रार्थना की जबतक कि वह साम्राज्य के राजाओं से सामान्य राय ले सके जिनकी स्वीकृति के बिना वह प्रतिष्ठापन का अधिकार समर्पित नहीं कर सकता। शाम्पू के विलियम ने रोष

पूर्वक समझौते की वार्ता भंग कर दी तथा पोप रान्म्स को लौट आया तथा कुछ दिनों बाद 29 अक्टूबर को उसने कुछ आज्ञप्तियाँ घोषित कीं जिनके लिए वह परिषद् की स्वीकृति चाहता था।

किन्तु परिषद् में तुरन्त इस पर गंभीर मतभेद हो गया। पोप के द्वारा प्रस्तावित द्वितीय घोषणा की शब्दावली इस प्रकार थी। Investituram omnium ecclesiarum et ecclesiasticarum possessionum per manum laicam fieri modis omnibus prohibemus

किन्तु जनसाधारण की ओर से और यहाँ तक कि कुछ पादरियों की ओर से भी इसका इतना अधिक विरोध किया गया कि सारे दिन बहस चलती रही। यह माना गया कि इन शर्तों के अन्तर्गत पोप दशमांश एवं दूसरे गिरजे से सम्बन्धित लाभों को समाप्त करना चाहता है जो कि अयाजक वर्ग के पास प्राचीनकाल में थे। इसका विरोध इतना दृढ़ था कि दूसरे दिन पोप ने इस घोषणा को दूसरे रूप में प्रस्तुत किया। Episcopatuum et abbatiarum investituram per manum laicam fieri penitus prohibemus Quicunque igitur laicorum deinceps investire presumpserit anathematis ultioni subiaceat Porro qui investitus fuerit honore quo investitus est absque ulla recuperationis spe omnimodis careat

इस रूप में आज्ञप्ति एकमत से स्वीकृत हो गई तथा एक अन्य आज्ञप्ति के द्वारा गिरजाघरों का उन सब सम्पत्तियों पर अधिकार पुष्ट कर दिया गया जो राजाओं एवं दूसरे ईसाई लोगों ने उनको प्रदान की थीं तथा जो भी उनको छीनने का प्रयत्न करेगे उन्हें अभिशप्त कर दिया गया।[14]

कुछ समय के लिए समझौते का प्रयास विफल हो गया किन्तु यह देखना महत्त्वपूर्ण होगा कि हैसो के वर्णन से विदित होने वाली विफलता के कारण एवं परिस्थितियाँ क्या थीं। शाम्पू के विलियम तथा क्लूनी के मठाध्यक्ष ने प्रतिष्ठापन के अधिकार के पूर्ण समर्पण का प्रस्ताव किया तथा सम्राट को विश्वास दिलाया था कि इससे बिशपों या मठाध्यक्षों के राजनैतिक दायित्वों में कोई अन्तर नहीं आएगा। हेनरी ने प्रस्ताव को इस रूप में स्वीकार कर लिया कि वह गिरजाघरों से प्रतिष्ठापित करने के अधिकार को समर्पित करता है। पोप के सलाहकारों को इस पर सदेह हुआ कि उसका अभिप्राय यह भी हो सकता है कि चर्च की लौकिक सम्पत्ति एवं उसके प्रदान के बारे में सम्राट ने अपना स्वत्व सुरक्षित रखा है तथा इस वाक्य की व्याख्या की आवश्यकता पर बल दिया। हैसो यह नहीं बताता कि शाम्पू के विलियम तथा उसके सहयोगियों ने निश्चित रूप से क्या अर्थ निर्णय हेनरी को बताया वह केवल यही कहता है कि हेनरी ने उसे अस्वीकार कर दिया किन्तु हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि व्यवस्था के अन्तर्गत प्रतिष्ठापित करने के सभी स्वत्वों का यहाँ तक कि लौकिक सम्पदाओं के सम्बन्ध में भी समर्पण था। हेनरी ने इसकी सपुष्टि करना अस्वीकार कर दिया तथा यह तक किया कि ऐसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर उसे सम्पूर्ण राजाओं की सभा की सम्मति लेना आवश्यक है। यदि घटनाओं का यह विवरण सत्य

है तो यह प्रतीत होगा कि यद्यपि समझौता वार्ता असफल हुई तथापि यह तथ्य भी प्रकाश में आया कि सम्राट लौकिक एवं धार्मिक प्रतिष्ठापन में विभेद करने को तैयार है वह विभेद जिस पर इस विषय के ग्रन्थ लेखकों ने, जैसा कि हम देख चुके हैं, बल दिया था। हैसो का विवरण इससे भी आगे बढ़ जाता है क्योंकि वह यह भी बताता है कि पोप के अनुयायियों में गहरा मतभेद था। यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि केलीक्सटस को उस ढाँचे को बदलना पड़ा था जिसमें कि उसने अपनी प्रतिष्ठापन विषयक धारणा को राइम्स की परिषद् में प्रस्ताव किया था। इस प्रस्तावित प्रथम रूप में स्पष्टतया उसका सम्बन्ध केवल चर्चों के ही प्रयाजक प्रतिष्ठापन से नहीं अपितु चर्चों की सम्पत्ति से भी था किन्तु उसके विरुद्ध पादरियों एवं प्रयाजक वर्ग की भी भावना इतनी प्रबल थी कि उसे वापस लेना पड़ा तथा घोषणा ऐसे रूप में स्वीकार करनी पड़ी थी कि प्रश्न अनिश्चित ही बना रहा। सम्भवतः हमारा निश्चय ठीक ही है कि पोप के क्षेत्र में भी लौकिक एवं धार्मिक प्रतिष्ठापन में विभेद के महत्त्व को स्वीकार किया जाने लगा था।

कुछ समय के लिए यद्यपि समझौते का प्रयास विफल हो गया था तथापि विफलता की परिस्थितियाँ इस प्रकार की थीं कि जैसा हम देख सकते हैं जो उन शर्तों पर समझौते की सम्भावना की ओर संकेत करती थीं जो तीन वर्ष बाद वार्म्स में वास्तव में स्वीकार कर ली गई। निस्सन्देह औपचारिक रूप से तो वार्ता भंग पूर्णतः थी क्योंकि केलीक्सटस ने न केवल हेनरी एवं विरोधी पोप को धर्म बहिष्कृत ही किया अपितु हेनरी की प्रजाओं को निष्ठा की शपथ से भी मुक्त कर दिया जबतक कि वह प्रायश्चित्त न करे एवं चर्च को सन्तुष्ट न करे।[15] इस प्रकार केलीक्सटस ने पुनः उस स्कन्ध पर बल दिया जो हेनरी चतुर्थ के युग से स्पष्टतया प्रस्तुत नहीं किया गया था किन्तु यह देखना महत्त्वपूर्ण होगा कि यह ऐसे सम्राट के विरुद्ध किया गया था जिसने एक विरोधी पोप को स्थापित करके स्वयं पोप पद के सम्बन्ध में वैसे ही अधिकार का दावा किया था।

सौभाग्यवश हम कुछ समकालीन रचनाओं द्वारा केलीक्सटस के प्रथम वर्षों में एवं पस्कल द्वितीय के पोपकाल के अंतिम वर्षों में मतप्रवाह को जान सकते हैं। हम पहले ही वेनडोम के एबट ज्याफ्री द्वारा पस्कल द्वितीय को सम्बोधित कटु तथा आक्रामक शब्दावली को उद्धृत कर चुके हैं जबकि उसने हेनरी पंचम के सामने आत्मसमर्पण किया था तथा वह 1119 ई. के पूर्व तक प्रयाजक प्रतिष्ठापन की निन्दा कटुतम शब्दों में करता रहा। 1116 ई. से 1118 ई. के बीच उसने रेनाल्ड को जिसने एंगर्स के बिशप चुने जाने का दावा किया था पत्र लिखा जिसमें उसने सर्वप्रथम पादरी के निर्वाचन के बारे में तथा बाद में प्रयाजक प्रतिष्ठापन के विषय में विचार प्रकट किए। ज्याफ्री कहता है कि रेनाल्ड का निर्वाचन अनियमित एवं अवैध था उसे सूचना दी गई थी कि रेनाल्ड का निर्वाचन जन साधारण द्वारा अव्यवस्थित रूप से किया गया था जिन्होंने तत्पश्चात् पादरियों को स्वीकृति देने के लिए भयभीत तथा विवश करने का प्रयत्न किया था। इसके बाद उन सिद्धान्तों का विवेचन है जिनके आधार पर किसी निर्वाचन को उचित माना जा सकता है। ज्याफ्री कहता है बिशप पद की सम्पूर्ण नियुक्ति निर्वाचन एवं अभिषेक पर निर्भर है क्योंकि अभिषेक से पूर्व न्यायोचित निर्वाचन होना चाहिए। प्रतिनिधियों का चयन एवं अभिषेक स्वयं

ईसा द्वारा किया गया था। अब यह काय ईसा के पादरियो द्वारा किया जाना चाहिए। चुनाव में पादरी ईसा के प्रतिनिधि हैं तथा अभिषेक के समय बिशप। दूसरे अर्थात् जन साधारण किसी निेप न्ति को बिशप न्नाने की माँग कर सकते हैं किन्तु न तो उसे चुन सकते हैं न उसका अभिषेक कर सकते हैं।[17] ज्याफ्री की स्पष्ट इच्छा है कि किसी भी न्यायोचित नियुक्ति के निर्वाचन की आवश्यकता पर दृढता से बल दिया जाए तथा निर्वाचन का यथाथ काय पादरी तक ही सीमित रह। अत्यन्त उग्रतापूवक वह अयाजक प्रतिष्ठापन का वणन करता है तथा मानता है कि कथोलिक सिद्धान्त वही था जो ग्रगोरी सप्तम ने घोषित किया था यद्यपि वह अयाजक प्रतिष्ठापन के धम विरोधी काय मे एव विक्रय म विभेद करता है किन्तु वह मानता है कि पहला दूसरे से अधिक शरारत भरा है क्योंकि लौकिक अधिकारी उस अधिकार का दावा इसी कारण करते हैं कि उसके द्वारा वे या तो धमपदो को वेचकर रुपया उगाह सकें अथवा बिशप को अपने अधीनस्थ की श्रेणी मे ले आए। मुद्रा एव धम दण्ड द्वारा प्रतिष्ठापन उसके अनुसार एक संस्कारगत क्रिया थी।[18]

एक दूसरे ग्रन्थ मे जो यह सोचा जाता है कि कुछ बाद मे लिखा गया था ज्याफ्री अपने पूववर्णित विचारो को ही अधिकांशत दोहराता है तथा दृढतापूवक यह भी कहता है कि इस विषय मे चच के कानूनो को बदलने का अधिकार रोम (पोप) को भी नहीं है।[19] वह स्पष्टतया पास्कल द्वितीय के काय का उल्लेख करता है तथा यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वह शात्र के ईवो द्वारा प्रतिनिधित्व की गई स्थिति का भी खण्डन करना चाहता है।

अब तक ज्याफ्री की स्थिति उग्र तथा अनम्य थी किन्तु एक ग्रन्थ मे जिसका रचना काल सभवत 1119 ई है। हमे एक नए स्वर एव भिन्न दृष्टिकोण के दशन होते हैं। माउर्जे तथा राम्स के परिषद् की समझौता वार्ताओं से इस ग्रन्थ के सम्बन्ध का निर्धारण आसान नहीं है क्योंकि कुछ सीमाओं तक उसके सिद्धान्त एव प्रस्ताव उनसे कहीं आगे चले जाते हैं जो सम्भवत केलीक्सटस स्वीकार करने को प्रस्तुत था तथा वह स्पष्टतया सम्राट के विरुद्ध किसी भी कठोर कदम की निन्दा करता है। ग्रन्थ दो पाठो मे उपलब्ध है[20]—एक संक्षिप्त रूप जिसमे केलीक्सटस को मुद्रा एव दड द्वारा अयाजक प्रतिष्ठापन रूपी धम विरोध मे *दृढता से डटे रहने के लिए प्रेरित किया गया है तथा* दूसरा वृहद् रूप जिसमे *ज्याफ्री यह* तक करता है कि एक दूसरे ग्रथ म प्रतिष्ठापन को स्वीकार किया जा सकता है। वह बलपूवक कहता है कि गिर्जों की सम्पत्ति के विषय म अयाजक प्रतिष्ठापन के पक्ष मे कोई भी वधानिक या धम विधि-सम्मत अधिकार नहीं है तथा वह यह सिद्ध करना प्रतीत होता है कि यह तकसगत नहीं है कि जो वस्तुए चच को एक बार दे दी गई हैं पुन प्रदान की जाए किन्तु वह यह स्वीकार करता है कि सभी सम्पत्ति पर अधिकार मानवीय कानूनों के अन्तगत है। दवी कानूनो से मनुष्य राजाओं तथा सम्राटों के अधीन है तथा मानवीय कानूनो को छोडकर अय किसी कानून स चच सम्पत्ति को नहीं रख सकता तथा वह सत आगस्टीन के द्वारा व्यक्तिगत सपत्ति के स्वरूप के विषय म कथित उन प्रसिद्ध सूक्तियों को उद्धत करता है जिनका हमने कई वार उल्लेख किया है।[21] अत वह मानता है कि इसके विरुद्ध कोई तक नहीं है कि यथोचित धमविधि के अनुसार निर्वाचन एव अभिषेक के

पश्चात् राजा किसी रूप मे चच की सपत्ति क्यो न प्रदान करे ।[23] तथा यह भी तर्क देता है की इस सविधा के द्वारा चच और राज्य म शाति पुन स्थापित हो सकती है । यह बिना सोचे धम-बहिष्कार के उपयोग के विरुद्ध चेतावनी से इसे समाप्त करता है जिसका स्पष्टत आशय इस विषय मे सदेह प्रकट करना था कि क्या सम्राट को धम-बहिष्कृत करना उस दशा म भी बुद्धिमत्तापूण है जबकि वह चच से समझौता करना अस्वीकार कर दे तथा वह सत पीटर और सत पाल के यहूदियो के पूर्वाग्रहों को अनुमोदित करने के काय का उल्लेख करता है । [24]

इस ग्रन्थ द्वारा प्रतिनिहित स्थिति बहुत महत्वपूण है । यह शास्त्र के ईवो द्वारा अपने पत्रो मे *प्रतिष्ठापन के विषय म भौतिक सम्पत्ति के लौकिक सत्ता स सम्बन्ध पर तथा किसी रूप म भौतिक सम्पत्तिओ सहित प्रतिष्ठापन को स्वीकार करने की सम्भावनाओं के विवरण का स्मरण कराता है ।* [4] तथा मानातुला के प्लसीडस के कुछ सुझावो मे भी उसकी स्थिति सगत है किन्तु उसका ऐतिहासिक महत्त्व और अधिक बढ जाता है जबकि हम स्वाफी द्वारा अपने पहले ग्रन्थो म अगीकृत उग्र स्थिति का स्मरण करते हैं । जसा हम कह चुके हैं कि हमें इस बात का ज्ञान नहीं है कि माउज तथा राइम्स मे हुए विचारविमश से ग्रन्थ का ठीक सम्बन्ध क्या था किन्तु निश्चित रूप से वह इस तथ्य को प्रकट करता है कि पोप के दल में भी समझौते की दिशा मे एक पक्ष उदित हो गया था तथा इसके द्वारा इसको समझाने म भी सहायता मिलती है कि किस प्रकार कैलिक्सटस केवल चच ही नहीं वरन् चच की सम्पत्ति के बारे म भी अयाजक प्रतिष्ठापन की निन्दा करने अपने प्रस्तावो को वापिस लेने के लिए तथा बिशप पदों एव मठो के प्रतिष्ठापन की अस्पष्ट निन्दा के प्रति *कथन के लिए विवश हुआ ।*

दो और सक्षिप्त ग्रन्थ जो *एक हस्तलिखित प्रति के अनुसार स्वाफी द्वारा पोप कैलीक्सटस* को सबोधित थे उसी समय की अथवा कम से कम 1119 ई एव 1122 ई के बीच की रचनाए हैं तथा यह युक्तिसगत प्रतीत होता है कि वे उस मध्यस्थवादी स्थिति का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसे स्वाफी ने उस समय अगीकार कर लिया था । इनम से पहले मे वह मानता है कि कभी-कभी चच के अधिकारियो को ऐसे विधान भी देनी चाहिए जिसके अन्तगत ऐसा काय किया जाए अथवा उसका अनुमोदन किया जा सके जो पूणतया अनिन्द्य न हो ताकि ईसाई सम्प्रदाय पर आने वाले किसी गम्भीर खतरे को टाला जा सके तथा दृष्टान्तस्वरूप सत पाल द्वारा टिमोथी (Timothy) के शुद्धिकरण (Circumcising) को तथा सतपीटर द्वारा कुछ गैर यहूदियो (*Gentile*) को *यहूदी कानूनो के पालन की अनुमति को प्रस्तुत करता है । इस प्रकार के विधान चर्चो एव मठो की प्रथाओ को भी* बदल सकते हैं । *वह कहता है कि यह सत्य है कि इनके द्वारा उसकी स्वीकृति नहीं देनी* चाहिए जो वास्तव म बुरा है तथा यदि पोप भी ऐसा करे तो वह अक्षेपेनेवनीयमाना पथापा वाली बात होगी किन्तु यह उचित रूप से स्पष्ट होता है कि वह अपने पूव ग्रन्थो मे वर्णित निणय का खण्डन या कम से कम सशोधन कर रहा है ।[25]

इनमें से दूसरे ग्रन्थ म स्वाफी चच के जीवन के लिए आवश्यक प्रमुख परिस्थितियों का सक्षेप से वणन करता है । वह कहता है कि चच को विश्वजनीन स्वतत्र एव पवित्र होना चाहिए विश्वजनीन इसलिए कि वह न तो खरीदा जाए और न बेचा जाए

स्वतन्त्रता की वह लौकिक सत्ता के अधिकार में न हो शुद्ध क्योंकि उसे घूसखोरी द्वारा विकृत नहीं बनाया जा सके। जब किसी चर्च को खरीदा या बेचा जाता है तो उसके प्रति आस्था विचलित हो जाती है क्योंकि मनुष्य सोचते हैं कि जिसे ईश्वर ने सभी मूल्यों से परे बनाया है उसे भी मनुष्यों द्वारा खरीदा जा सकता है। जब चर्च लौकिक सत्ता के अधिकार में होता है तो वह उस स्वतन्त्रता के अधिकार पत्र को खो बैठता है जो ईसा ने अपने रक्त में आम पर उसके लिए लिखा है। जब चर्च रिश्वत से दूषित हो जाता है तो उसकी पावनता नष्ट हो जाती है।[26] यावो ने अपने पुराने ग्रन्थों में भी इन वाक्यों का प्रयोग किया है तथा इनका यहाँ कोई विशेष महत्व नहीं है किन्तु यह भी सम्भव है कि वे उन आवश्यक बातें वस्तुओं को सम्मिलित करने के लिए प्रयोग किए गए हों जो यावो के मन में किसी भी समझौते में ध्यान में रखने होंगे तथा वह यह सुझाता प्रतीत होता है कि जब तक मूल सिद्धान्त सुरक्षित रहें दूसरे वाद विषयों पर समझौता किया जा सकता है।

अन्त में कार्डीनल पीटर लियोनिस को सम्बोधित एक ग्रन्थ में जिसका काल सम्भवत 1122 ई० हो सकता है यावो अपने पुराने ग्रन्थों का सार प्रस्तुत करता है अर्थात् विशेषत अपने दूसरे एवं तीसरे ग्रन्थों में वर्णित अयाजक प्रतिष्ठापन की निन्दा और यह भी स्वीकार करता है कि जैसा उसने चौथे ग्रन्थ में कहा है कि धर्मविधि के अनुकूल निर्वाचन एवं स्वतन्त्र अभिषेक के बाद भौतिक सम्पत्ति द्वारा अयोजक प्रतिष्ठापन को भी स्वीकार किया जा सकता है।[27] यह ध्यान देने की बात है कि इस ग्रन्थ में दिया गया नवीन विचार केवल यही है कि निर्वाचन एवं अभिषेक दोनों ही स्वतन्त्र होने चाहिए तथा शपथ ग्रहणानन्तर अभिषेक स्वतन्त्र नहीं है। यह निर्णय उचित ही प्रतीत होता है कि इसका वाम्स के समझौते की शर्तों के बाद विकास से सम्बन्ध है।

वेनेडोम के यावो की स्थिति में यह परिवर्तन जो कि इन ग्रन्थों में उपलब्ध होता है बहुत महत्वपूर्ण है तथा स्पष्टता से यह बताता प्रतीत होता है कि माउन्टे की समझौता वार्ता के भंग होने पर भी दोनों ओर से एक समझौते की आशंका की सम्भावना से वाम्स विक प्रगति हुई थी जो कि दोनों सिद्धान्तों को जिनके लिए पोप प्रयत्नशील थे तथा लौकिक सत्ता के उचित स्थान को मान्यता प्रदान करे। यह धारणा इसी युग के दो ग्रन्थों की परीक्षा से पुष्ट होती है—ह्यू गोमेटेलस (Hu_o Metellus) के पोप और राजा के संघर्ष विषयक छन्द तथा ह्यूनाल्ड (Hunald) के मुद्रा और दण्ड विषयक छन्द य लेखक महत्व पूर्ण न थे किन्तु उनका दृष्टिकोण कम महत्वपूर्ण नहीं है।

ह्यू गोमेटलस राजा को इस पर बल देते हुए प्रदर्शित करता है कि पूर्ववर्ती पोपों द्वारा राजकीय प्रतिष्ठापन की प्रथा की स्वीकृति दी गई थी तथा इसका अभिप्राय पद चिह्न के प्रदान से है। राजा पूछता है कि यदि वह इनको धर्मदण्ड के प्रतीकात्मक प्रदान कर तो क्या हानि हो सकती है? पोप उत्तर देता है कि उसके पूर्वाधिकारियों द्वारा वास्तव में अयाजक प्रतिष्ठापन को सहन किया था किन्तु अनिच्छापूर्वक क्योंकि उन दिनों के राजा चर्च के उपकारक थे तथा वह मानता है कि मुद्रा एवं दण्ड पादरी के पद के प्रतीक थे तथा लौकिक सम्पत्ति के प्रतिष्ठापन को सूचित करने के लिए इनका प्रयोग उचित नहीं है। तब राजा पस्कल द्वितीय द्वारा दी गई सुविधा को अपने समर्थन में प्रस्तुत करता

है किन्तु पोप उत्तर देता है यह अवधानिक था क्योंकि दबाव मे आरम्भ किया गया था। तब राजा सुझाव देता है कि यदि चर्च अपने पद चिह्नों को त्यागने को तयार हो प्रतिष्ठापन के अधिकार को छोड़ देगा तो वह भी अपने क्योंकि पुराने काल म चच के पास ये नहीं थ किन्तु पोप उसके प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करता। इस पत्राचार प्रबन्ध की समाप्ति दोनो दलों के मध्य इस समझौते स होती है कि यह विषय तक एव बुद्धि द्वारा विचारणीय है।[28]

ह्यू नाइ पोप की मान्यता का वर्णन करता है कि मुद्रा एव दण्ड धार्मिक कृत्यों के पवित्र चिह्न थे। राजा इस सिद्धान्त स सहमत हो जाता है कि धार्मिक वस्तुए पुरोहित द्वारा ही प्रदान की जानी चाहिए तथा वह केवल भौतिक चिह्न प्रदान करने के अधिकार का ही दावा करता है। ह्यू नाइ का निष्कर्ष है कि पोप और सम्राट दोनो ही व्यर्थ लड रहे हैं क्योंकि दोनो म से कोई भी दूसरे को हानि नहीं पहुँचाना चाहता है।[29]

मान्ज की समझौता वार्ता भग हो चुकी थी किन्तु शीघ्र ही यह स्पष्ट हो गया कि कोई समझौता ढूढने का प्रयत्न फिर से प्रारम्भ करना होगा। सन 1121 ई में जब हेनरी ने मंज पर आक्रमण के लिए प्रस्थान किया तो मेज के आर्चबिशप ने जो जमनी में पोप के दल का प्रधान था सेक्सन राजाओं को सम्मति के लिए आह्वान किया। किन्तु वास्तविक सघर्ष के प्रारम्भ होने के पहले ही दोनो पक्ष के नेता एक दूसरे स समझौते की वार्ता करने लगे तथा हेनरी को यह मानने को राजी कर लिया गया कि झगड़े का निपटारा दोनो ओर के प्रमुख व्यक्तियों के मध्य से हो जाए। यह निश्चित हुआ कि सम्पूर्ण साम्राज्य के राजाओं की एक सभा वर्जबर्ग म माइकेलमास (Michaelmas) नामक स्थान पर इस समझौते का निश्चय करने के लिए हो।[30] सक्सन इतिहासकार इस सभा में लिए गए निर्णयों का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत करते हैं सम्राट को पोप के पद के आगे समर्पण करना था तथा उसके व चर्च के बीच सघर्ष का समझौता राजाओं की राय एव सहायता से इस प्रकार होना था कि चर्च की तथा साम्राज्य की वस्तुए उनके पास रहें तथा चर्च की सम्पत्ति चर्च के पास रहे। जो बिशप धर्मविधि के अनुसार निर्वाचित एव अभिषिक्त हैं वे शांतिपूर्वक पोप की उपस्थिति म होने वाली सभा तक अपने अपने पदों पर बने रहें। राजाओं ने सम्राट के विरुद्ध चर्च की प्रतिष्ठापन विषयक शिकायतों का निपटारा इस प्रकार करने की इच्छा व्यक्त की कि साम्राज्य का गौरव अक्षुण्ण बना रहे। सम्राट किसी के विरुद्ध यदि भविष्य म सघर्ष म भाग लेने के लिए कार्यवाही करें तो राजा इसके लिए राजी हुए कि स्वय सम्राट की स्वीकृति एव अनुमति से वे एकमत होकर यद्यपि अत्यन्त आदरपूवक एव सावधानी से उसे वसा न करने की चेतावनी देंगे। अगर फिर भी सम्राट ने उनकी राय की अवहेलना की तो व एक दूसरे से किए समझौते के अनुसार काय करेंगे।[31]

यह विवरण सबसे अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि यह विशेषत राजाओं के दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता है अर्थात् वे चर्च एव सम्राट दोनो को ही एक तर्कसगत समझौते के लिए विवश करने को दृढ निश्चय थे। एक्कहार्ड इस कार्यवाही का सक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करता है तथा यह महत्वपूर्ण सूचना भी देता है कि इस सभा द्वारा जो कुछ निश्चय हुआ

उसकी सूचना रोम को देने एवं पोप से सामान्य परिषद् का सम्मेलन बुलाने का अनुरोध करने के लिए दूतों को नियुक्त किया गया।[32]

पोप द्वारा दूतों को उत्तर देने में कुछ विलम्ब हुआ किन्तु फरवरी 1122 ई० में उसने हेनरी को ऐसे शब्दों में लिखा जो पूर्णतया शांतिकर तो नहीं थे तथापि समझौते की दिशा में एक नए प्रयत्न के परिचायक थे। कैलीक्सटस ने हेनरी को न केवल सम्राट कहकर ही किन्तु सजातीय के रूप में सम्बोधित किया तथा उससे चर्च को शांति प्रदान करने का अनुरोध किया तथा उसे यह विश्वास दिलाया कि जो भी साम्राज्य की या उसकी सम्पत्ति है ऐसी किसी भी वस्तु को लेने की उसकी इच्छा नहीं है। साथ ही उसने यह चेतावनी भी दी कि यदि वह चर्च को उसकी न्यायोचित वस्तु प्रदान करने को राजी नहीं होता तो वह धार्मिक एवं बुद्धिमान लोगों के द्वारा चर्च के योग क्षेम की व्यवस्था करेगा तथा उससे होने वाली हेनरी की हानि का विचार नहीं करेगा।[33]

बिशपों एवं राजाओं का एक नया प्रतिनिधिमंडल हेनरी पंचम द्वारा भेजा गया जिसमें स्पायर्स का बिशप तथा फुल्डा का मठाध्यक्ष (Abbot of Fulda) सम्मिलित थे जिसने हेनरी की साम्राज्य एवं चर्च के बीच समझौते और शांति की इच्छा यदि यह साम्राज्य के गौरव को क्षति पहुँचाए बिना प्राप्त की जा सके इसके प्रत्युत्तर में कैलीक्सटस ने ओस्टिया के कार्डीनल बिशप लम्बर्ट को दो अन्य कार्डीनल सहित जर्मनी में अपने प्रतिनिधि के रूप में इन निर्देशों सहित भेजा कि वे समझौता करने का प्रयास करें तथा उन्होंने हेनरी को बिशपों की एक परिषद् में भेंट करने के लिए आमंत्रित किया जो प्रस्ताव के अनुसार मारिया के जन्मोत्सव (Nativity of Virgin) मेंज में सम्पन्न होने वाली थी।[34]

परिषद् की बैठक विलम्ब से वार्म्स में हुई तथा विचार विमर्श लगभग 1 मास तक चलता रहा। हम मेंज के आर्चबिशप अल्बर्ट द्वारा पोप कैलीक्सटस को कुछ समय बाद लिखे गए एक पत्र से विदित होता है कि समझौता वार्ता पहले तो बहुत कठिन थी। हेनरी पहले तो मुद्रा एवं दण्ड द्वारा प्रतिष्ठापन के अधिकार को त्यागने को राजी नहीं हुआ क्योंकि वह उसे अपना कुलक्रमागत अधिकार मानता था तथा उपस्थित अग्रजक वृन्द ने भी राजा के स्वत्व का समर्थन किया। अन्त कार्डिनलों से राय लेने के बाद जिसे अल्बर्ट उनका अनिच्छुक सहमति कहता है यह निश्चित हुआ कि जर्मनी में बिशपों का निर्वाचन सम्राट की उपस्थिति में हो तथा हम यह अनुमान कर सकते हैं कि इस समझौते को ध्यान में रखकर हेनरी ने मुद्रा एवं दण्ड से प्रतिष्ठापन के अधिकार को त्यागना स्वीकार कर लिया।[3]

समझौते की सबसे महत्वपूर्ण व्यवस्थाएं जो अन्त स्वीकृत हुईं वे थीं हेनरी ने मुद्रा एवं दण्ड से प्रतिष्ठापन के सभी दावों को समर्पित कर दिया तथा साम्राज्य के सभी चर्चों को स्वतन्त्र चुनाव एवं अभिषेक का अधिकार प्रदान कर दिया। दूसरी ओर पोप ने हेनरी को यह अधिकार प्रदान किया कि जर्मन साम्राज्य में साम्राज्य के जितने भी बिशप पद एवं मठ हैं उनका चुनाव उसकी उपस्थिति में किन्तु हिंसा एवं धन विक्रय बिना हो तथा विवाद ग्रस्त चुनाव का दशा में प्रधान चर्च एवं सम्प्रान्तीय बिशपों की राय लेकर वह आर्कबिशप के दावे को अपनी स्वीकृति एवं समर्थन दे। निर्वाचित बिशप अथवा

मठाधीश उसस पद चिह्नों को राज दण्ड सहित प्राप्त करें तथा उसके प्रति न्याय म वाञ्छित वैधानिक कर्त्तव्यों का पालन करें। साम्राज्य के दूसरे भागों म बिशप अथवा मठाधीश अपने अभिषेक के छ मास की अवधि म सम्राट द्वारा अधिकार दण्ड से पद चिह्नों को प्राप्त करे तथा सभी वैधानिक कर्त्तव्यों का पालन करे केवल अपवाद उनके विषय म था जो पूर्णत रोमन चर्च से सम्बन्धित थे।

यदि हम समझौते की प्रमुख शर्तों का मूल्यांकन करने का प्रयास करें जिसने की धार्मिक एव लौकिक सत्ता के पचास वर्षों से चले आ रहे बिशपों एव मठाधीशों की नियुक्ति सम्बन्धी सघर्ष को समाप्त कर दिया तो हम कह सकते हैं कि यह स्पष्ट है कि मुख्यत यह उस मध्यस्थतावादी प्रवृत्ति की विजय का प्रतीक था जिसके विकास को ढूढने का हमने प्रयास किया है तथा इसमें दोनों दलों म से किसी के भी उग्रवादी पक्ष की पूर्ण विजय नहीं थी। जब हम समझौते के सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या करने का प्रयास करें तो हम बहुत सावधान रहना चाहिए तथापि हम सभवत निम्न निष्कर्ष निकाल सकते हैं। सम्राट ने मुद्रा एव दण्ड से प्रतिष्ठापन के अधिकार को सौंपकर तथा स्वतन्त्र निर्वाचन एव अभिषेक के अधिकार को स्वीकार करके यह स्पष्ट कर दिया कि धार्मिक पद एव सत्ता को प्रदान करने का उसे कोई अधिकार नहीं है इस विषय म उसने बिशप क्षेत्र एव प्रान्त के अधिकार को मान लिया। दूसरी ओर चर्च ने सामन्ती सम्पत्ति तथा सत्ता को बिशपों एव मठाधीशों को लौकिक सत्ताधीश के अधिकारों का प्रयोग करते हुए प्रदान करने या न करने के उसके न्यायोचित दावे को स्वीकार कर लिया। इस व्यवस्था द्वारा कि निर्वाचन उसकी उपस्थिति म हो चर्च ने यह स्वीकार किया कि उच्च धार्मिक पदों की नियुक्ति से सम्राट को पूर्णतया पृथक नहीं किया जा सकता जिनमें कि वास्तव म धर्मविधि की व्यवस्था के अनुसार भी प्रयाजक वर्ग का न्यायोचित एव वैधानिक स्थान है। विवादग्रस्त निर्वाचनों के निर्धारण की व्यवस्था द्वारा निस्सदेह सम्राट को अधि धर्माध्यक्ष एव सम्प्रान्तीय बिशपों की राय से निर्देशित होना था किन्तु चर्च ने यह स्वीकार किया कि सम्राट को ऐसे निर्णयों म महत्वपूर्ण योगदान का अधिकार था। सभवत चर्च द्वारा दी गई सबसे महत्वपूर्ण सुविधा इस व्यवस्था म थी कि निर्वाचित बिशप अथवा मठाधीश अपने पद चिह्नों को अभिषेक से पूर्व सम्राट से प्राप्त कर क्योंकि सम्भवतः इसका अभिप्राय यह था कि निर्वाचित व्यक्ति के विषय मे किसी दुस्तर विरोध की स्थिति म सारे मामले पर पुनर्विचार किया जा सके। दूसरी ओर सम्राट की ओर से महत्वपूर्ण सुविधा वह थी जो जर्मन साम्राज्य के बाहर के बिशप पदों एव मठों के बारे म दी गई। यहाँ उसने निर्वाचन म किसी भाग का दावा नहीं किया तथा यह व्यवस्था स्वीकार कर ली कि अभिषेक के पश्चात् अर्थात् कार्यवाही के सम्पूर्ण होने के बाद बिशप या मठाध्यक्ष पद चिह्नों के लिए प्रार्थना करें तथा निस्सदेह वह सम्राट तथा इटली के बिशप पदों के मध्य सम्बन्धों में बहुत बड़ा परिवर्तन था।

हम साम्राज्य तथा पोप पद के बीच महान् सघर्ष के प्रथम पक्ष पर विचारपूर्ण कर चुके हैं किन्तु इस सघर्ष के दौरान दूसरे प्रश्न उठ खड़े हुए तथा दूसरे दावे किए गए जो

कि मध्यकाल म लौकिक सत्ता एव धार्मिक सत्ता के सम्बन्धो क अधिक परिपूर्ण पक्ष का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा हमे अब उनके विचार के लिए उन्मुख होना चाहिए ।

सन्दर्भ

1 Ma Corc ll a xxı 51
Ma s C n ıl a ı 75
3 Id ıd 76
4 Ekkeha d Ch n on ( ) 1116
5 Id d (a) a 1118
6 Id d ( ) 1119
7 Id d ( ) 1119
8 Mon m ta Bamb g a pp 348 352
9 Ekkeha d Chr n con (a) 1119
10 Id ıd
11 Hes o–R lat o
12 Id ıd
13 Id d
14 Id ıd
15 Id d
16 देख भाग 2 अध्याय 6 ।
17 Ge ffr y of Vendome L bellus ı
18 Id ıd
19 Id L bell
20 Cf d t r n L b De L te
21 Cf ol pp 139 142
22 Geoffr y d V dome L bellus ı p 691
3 Cf p 98
24 Cf p 136
25 Id L bell
26 Id L bellus x
27 Id L bellus vı
28 H go Metellus Cert men Pap e et Reg
2) Hu ld C on d Anulo t B culo
30 Ekk h d Chr n con (1121)
31 M G H Legem Sect IV Cons t tut nes vol ı 106
3 Ekk h d Chronıcon (a) 1121
33 Cal t II Epıstolae 168 (Mıgn V 1 163)
34 Mon B mbergens p 383
35 Id d p 519
36 L gem Sect I Constıt tıones ı 107

तृतीय खण्ड

पोप पद एव साम्राज्य का राजनतिक सघष

प्रथम अध्याय

ग्रेगोरी सप्तम की स्थिति तथा दावे

इस ग्रन्थ के प्रथम खण्ड म हमने नवी शता ी मे धार्मिक एव लौकिक सत्ता के सम्ब धो की अपनी दृष्टि स एक युक्ति सगत व्याख्या प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया तथा यह सिद्ध किया कि यह सार रूप म पाचवी शता दी मे पोप जिलेसियस प्रथम द्वारा प्रतिपादित सिद्धातो की स्वीकृति का ही प्रतिनिधित्व करते हैं अर्थात् दोनो सत्ताए दिव्य हैं तथा दोना अपने अपने क्षेत्र म सर्वोच्च हैं तथा अपने निश्चित क्रिया-कलापो के विषयो म एक दूसरे पर अधिकार का दावा नही कर सकता। यह पूणतया सत्य है तथा हमने इसे निस्सकोच स्वीकार करने का प्रयास किया है तथा इसके लिए पर्याप्त दृष्टान्त भी प्रस्तुत किए हैं कि वास्तविक व्यवहार मे नवी शता दी म दोनों सत्ताओं के क्षेत्र पूणतया पृथक नही थे तथा हम पुन पुन प्रत्येक का उन विषयो म हस्तक्षेप दखते हैं जो दूसरे के अधिकार क्षेत्र मे थ। किन्तु हम यह प्रतीत नही होता है कि इसने उस युग म मनुष्यो के मन के सामान्य निणय को अथवा उनके इस विश्वास की वास्तविकता को किसी भी रूप म प्रभावित किया कि धार्मिक एव लौकिक सत्ताए अपने एक दूसरे से सम्बन्धो म पूणतया स्वतत्र हैं।

यद्यपि यह सत्य है तथा इस पर हमने कुछ बल भी दिया है कि नवी शताब्दी म जिलेसियस के सिद्धान्तों की पुनरुक्ति म हम कुछ महत्वपूण परिवतन एव परिवधन पाते है। जिलेसियस ने कहा है कि पुरोहित को सौंपा गया भार राजा को सौप गए भार से अधिक है क्योकि दवी निणय के दिन उस राजा की आत्मा के विषय मे भी लेखा देना होगा। आर्लियन्स का जोनास (Jonas of Orleans) पुरोहित के व्यक्तित्व को उत्कृष्ट बनाता है क्योकि वह यह देखने के लिए उत्तरदायी है कि राजा अपने पद के दायित्व का निर्वाह करने म भी अपना कत्तव्य का पालन कर रहा है तथा रान्हेम्स का हिंकमार (Hincmar of Rheims) कहता है कि विशप का गौरव राजा से अधिक है क्योकि विशप ही राजा का अभिषेक करता है। किन्तु जिलसियन पदावली म मबसे मूलभूत

सशोधन आरलियन्स के जोनास तथा बिशपों ने 829 के रिलेशियो (Relatio) में किया है जहाँ वे कहते हैं पुरोहित तथा राजा के दोनों महान् पद लौकिक नहीं जैसा कि जिलेसियस ने कहा है किन्तु विश्वव्यापी चर्च के पद हैं जो कि ईसा का शरीर है। यह सशोधन कहाँ तक सुविचारित एव सुचिन्तित था हम नहीं कह सकते किन्तु यह क्रम महत्त्वपूर्ण नहीं है। इसकी विषमता उचित प्रकार से मिलेविस के ओप्टाटस (Optatus of Milevis) की सूक्तियों से की जा सकती है जहाँ कि वह डोनटिस्टो (Donatists) को साम्राज्य के प्रति सम्मान के अभाव के लिए फटकारता है। वह कहता है कि चर्च राज्य अर्थात् रोमन साम्राज्य के अन्तर्गत है साम्राज्य चर्च के अन्तर्गत नहीं।[1]

यह अवधारणा निश्चित रूप में व्यापक महत्त्व की है तथा मध्य युग के सम्पूर्ण राजनैतिक एव चर्च सम्बन्धी सिद्धांतों की प्रतीक है। अपनी दूसरी पुस्तक में हमने तूरनाई के स्टीफन (Stephen of Tournai) के जो बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध का प्रसिद्ध धर्म शास्त्री है एक वाक्यांश को उद्धृत किया है जिसमें इस सिद्धान्त को बहुत प्रभावशाली ढग से प्रस्तुत किया गया है। वह कहता है कि एक राज्य में तथा एक राजा के अधीन दो जन-समूह दो जीवन प्रणालियाँ दो सत्ताएँ हैं यह राज्य चर्च है राजा ईसा मसीह है तथा दो जन समूह चर्च की दो व्यवस्थाएँ हैं अर्थात् पादरी एव जन साधारण दो जीवन प्रणालियाँ धार्मिक एव लौकिक हैं दो सत्ताएँ पुरोहित पद एव राजपद हैं द्विविध विधान दैवी तथा मानवीय कानून हैं प्रत्येक को उसका देय प्रदान करो तथा सभी वस्तुओं में सामञ्जस्य बना रहेगा।

राज्य केवल एक है वह है ईसा का चर्च तथा इस राष्ट्रमंडल का ईसा स्वय राजा है किन्तु वह अपनी सत्ता दो व्यक्तियों को सौंपता है पुरोहित को तथा राजा को अकेले एक को नहीं। स्टीफन के मन में अपने अपने क्षेत्र में एक पर दूसरे की सत्ता का कोई प्रश्न नहीं है न ही वह एक की तुलना में दूसरे की प्राथमिकता का कोई प्रश्न ही उठाता है। तथापि यह प्रतीत होता है कि जब राज्य की एक चर्च के रूप में कल्पना की गई तो इस प्रश्न को पूरी तरह से टालना सभव नहीं है। कुछ भी हो नवीं शताब्दी में भी ओरलियन्स के जोनास तथा रीइम्स के हिंक्मार ने किसी सीमा तक उस वास्तविक स्वरूप की पूर्व कल्पना की जो यह प्रश्न वास्तव में ग्रहण करने वाला था। जोनास जैसा कि हम देख चुके हैं पुरोहित के व्यक्तित्व को उत्कृष्ट बताता है क्योंकि उसका दायित्व यह देखना है कि राजा अपना कर्त्तव्यपालन कर रहा है तथा हिंक्मार बिशप के गौरव को सम्राट के गौरव से बढ़कर बताता है क्योंकि बिशप राजा का उसके पद पर अभिषेक करता है। इन दो वाक्यों में ही हम पोप तथा चर्च के उन दावों का प्रथम अकुर देख सकते हैं जिनकी हम अब परीक्षा करनी है।

इस पुस्तक के पहले खण्ड में हमने मनोवृत्ति में लौकिक सत्ता की तुलना में धार्मिक सत्ता की उत्कृष्टता की अवधारणा के तथा लौकिक सत्ता के निर्धारण में उसकी कुछ सत्ता अवश्य है इस धारणा के कुछ दृष्टातों को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। सभवत सबसे महत्त्वपूर्ण वाक्य रोडोल्फस ग्लेबर (Rodolphus Glaber) का है जो ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में लिखते हुए कहता है कि कोई भी तब तक सम्राट स्वीकार नहीं

किया जा सकता जनतक पाप उसके चरित्र का उपयुक्त स्वाकार न कर तथा वह उसम साम्राज्य के प्रतीको को प्राप्त न कर ले।[4] कुछ समय बाद हम पाते हैं कि सशासनवादी पोप तथा उसके मित्र उन वाक्यो का प्रयोग कर रह थे जिनका यथार्थ ग्रथ तो निर्धारित करना कठिन है किन्तु जो कम स कम बहुत महत्वपूर्ण है। पोप लियो नवम[5] ने कुस्तुन्तुनिया क अधिधर्माध्यक्ष को प्रधान धर्माध्यक्ष को सबोधित एक पत्र म जिसम उसने रोम के धर्मपीठ का सभी चर्चो पर अधिकार का दावा किया है यह भी कहा है कि रोम क धर्मपीठ का साम्राज्य भौतिक भी है तथा स्वर्गिक भी रोम क धर्मपीठ का राजकीय पौरोहित्य है तथा वह इसकी पुष्टि कान्सटन्टाइन क दान के प्रमाण म करता है। दुर्भाग्यवश वह उस ग्रथ की स्पष्ट व्याख्या नहीं करता जिसम उसन इस वाक्य म सम्बद्ध किया है। प्रथम पुस्तक म हमन उन तर्कों को प्रस्तुत किया है जिनके आधार पर हम आश्वस्त हुए है कि मूल रूप म तथा नवी शता । मे जिस राजनतिक सत्ता का उल्लख है उससे अभिप्राय केवल रेवेन्ना के विशष प्रदश तथा इटली म अन्य बाइजन्टाइन क्षेत्रो क बार म पाप के दावे स था। क्या पोप लियो नवम न इस दान पत्र क वाक्यो का इसी ग्रथ म अथवा अधिक सामान्य ग्रथ म ग्रहण किया था यह स्पष्ट नहीं है।

कुछ वर्षो के बाद पुन हम पाते हैं कि पीटर डेमियन जसा कि हम देख चुके हैं एस वाक्यो का प्रयोग करता है जिनका कि अभिप्राय निश्चित करना बडा कठिन है। वास्तव म वह अन्त स्पष्टता से स्वाकार करता है कि राजकीय सत्ता को स्वय ईश्वर स अधिकार प्राप्त हुए हैं तथा वह अन्यत्र आग्रहपूर्वक राजा एव पुरोहित क कार्यो की प्रकृति म विभेद करता है तथा जब वह दो तलवारो की चर्चा करता है तो उनम स एक पर राजा का और दूसरी पर पुरोहित का अधिकार बताता है तथा कुछ समय पश्चात् प्रचलित इस सिद्धान्त का प्रतिपादन नहीं करता कि दोनो पर ही वास्तव मे पुरोहित का अधिकार है।[6] दूसरी ओर हेनरी पचम को लिखे गए एक पत्र म विरोधी पोप कडेलियस क विरुद्ध रोमन धर्मपीठ की सहायता की माँग करते हुए वह कहता है कि राजा का तभी सम्मान होना चाहिए जबकि वह सृष्टिकर्ता की आज्ञा मानता है किन्तु जब वह दवी आदशो का उल्लघन करता है तो प्रजा द्वारा उसकी अवमानना विधिसम्मत है। दूसर स्थान पर वह पोप को राजाओ का राजा तथा सम्राटो का राजा कहता है जो कि गौरव और सम्मान म सभी प्राणियो स उच्चतर है एक अन्य स्थान पर वह रोम के चर्च की स्थापना ईसा द्वारा बताता है जिसने पीटर को पार्थिव एव स्वर्गिक साम्राज्य क कानून सौंप तथा इसका पुनरावृत्ति वह दूसरे ग्रन्थ म करता है जहा वह ईसा द्वारा पीटर को स्वर्ग एव पृथ्वी दोनो के कानून सौपता हुआ बताता है।[7] इस पुस्तक क प्रथम खण्ड मे हम इन वाक्यो पर पहल ही विचार कर आये हैं द्वितीय पुस्तक म इनम से कुछ की बारहवी शताब्दी के धर्म विधियो द्वारा व्याख्या का भी हमने वर्णन किया है[8] तथा हम केवल इसी बात को दोहरा सकते हैं कि यह कहना अत्यन्त कठिन है कि पीटर डेमियन का इनसे क्या अभिप्राय था।

इस युग के सर्वाधिक प्रख्यात सुधारवादी पादरियो म स अन्य के द्वारा ऐस वाक्यो का प्रयोग किया गया है जो इस कारण ध्यान देने योग्य हैं क्योंकि व धार्मिक सत्ता के उत्तर कालीन दावो का सर्वाधार इगित करते हुए प्रतीत होते हैं। कार्डीनल हम्बर्ट दोनो

व्यवस्थाओं के साथ दोनों म विभेद करता ह पादरी लौकिक विषयों म उसी प्रकार हस्तक्षेप नहीं कर सकता जिस प्रकार अधाजर वृन्द धार्मिक म मला म हस्तक्षेप नहीं कर सकता है। यद्यपि एक अन्य स्थल पर वह कहता है कि यदि हम पादरी एव राजा के गौरव की यथार्थ रूप म तुलना कर तो हम कह सकते है कि पौरोहित्य आत्मा क तुल्य है तथा राज्य शरीर क तुल्य क्योंकि वे दोनो एक दूसरे म प्रेम करते हैं तथा दोनो को एक दूसरे की आवश्यकता है। जिस प्रकार आत्मा शरीर की तुलना म महान् है तथा शरीर पर नियत्रण रखती है उसी प्रकार पौरोहित्य का सम्बन्ध राज्य से है क्योंकि सभी वस्तुओं का इसी प्रकार ठीक रखा जा सकता है इसलिए आत्मा की तरह पुरोहित भी मनुष्यों को जो काय करने चाहिए उनके विषय म चेतावनी देता है जिस प्रकार राजा को पुरोहित की आज्ञा माननी चाहिए वसे ही जनसाधारण को राजा की आज्ञा माननी चाहिए पुरोहित को जनता को शिक्षा देनी चाहिए तथा राजा को उन पर शासन करना चाहिए।[9]

हम नहीं सोचते कि यह ठीक ठीक कहना सम्भव है कि पीटर डेमियन तथा हम्बट और दूसरे सुधारवादी चच के सदस्यों का इस प्रकार के वाक्यों स क्या अभिप्राय था हम इसम भी सदेह है कि उनका वास्तव मे इनसे कोई सुनिश्चित अथ था। तथापि इनको महत्वहीन तथा उपेक्षणीय नहीं समझा जा सकता इनके महत्व के बोध के लिए किसी नवीन परिस्थिति की आवश्यकता थी सम्भवत हमको कहना चाहिए कि एक नवीन परिस्थिति तथा एक कृतसकल्प स्वभाव की।

इस पुस्तक के पिछले खण्ड म हमारे द्वारा विवेचित महान् परिवतन के साथ साथ नई परिस्थितियाँ विकसित हुई थी। हनरी तृतीय के देहावसान तक यह स्पष्ट है कि चच के सुधारवादी दल को मुख्यतया राजकीय सत्ता का सामान्य तथा सम्पूर्ण समथन प्राप्त था किन्तु उसकी मृत्यु के साथ इसम परिवतन आ गया। हनरी चतुथ की अवयस्कता के काल म सम्राट की सत्ता का घोर दुरुपयोग हुआ तथा जब हनरी चतुथ न स्वय शासन सम्भाला तो इसकी केवल पुष्टि (पुष्टि मात्र) ही हुई।

हम यहाँ हनरी के व्यक्तिगत चरित्र के विरुद्ध लगाए गए आरोपों की सत्यता पर विचार नहीं करना है—उसक राजनतिक एव धार्मिक शत्रुओं क वक्तव्यों को हम सावधानी से ग्रहण करना चाहिए। किन्तु यह निर्विवाद है कि व्यक्तिगत आचरण एव चच से सम्बन्धित कृत्यों के द्वारा उसने अप्रसन्नता के गम्भीर कारणों को जन्म दिया। यहा केवल उस महान् लोकापवाद का उल्लेख करना पर्याप्त होगा जो तब फला जब 1069 ई म हनरी ने अपनी पत्नी को तलाक देने की इच्छा सावजनिक रूप से व्यक्त की। मन्ज का आचबिशप सीगफ्रिड के पोप एलेक्जेण्डर द्वितीय को लिखे गए एक पत्र म उस रोष का वणन करता है जो इस समाचार के कारण फला।[10] उसी आचबिशप के दूसरे पत्र म हम उस समय पादरियों स सम्बन्धित अपवादों स हेनरी के सम्बन्ध का अच्छा उदाहरण पाते हैं। एलेक्जेण्डर द्वितीय न धम विक्रय के आरोप के आधार पर सीगफ्रिड को कान्सटन्स के निर्वाचित बिशप का अभिषेक करने का निषेध कर दिया था तथा सीगफ्रिड सूचित करता है कि हनरी उस पर इस कारण बहुत क्रुद्ध था तथा उसे भय था कि यदि पोप

ने उसे राजकीय क्रोध से नहीं बचाया तो हेनरी उसके विरुद्ध और भी कार्यवाही करेगा।[11] वास्तव में यदि हम हेनरी चतुर्थ के ग्रेगोरी सप्तम को 1073 ई. में स्वयं लिखित पत्र के वक्तव्यों को स्वीकार करें तो यह स्पष्ट प्रतीत होगा कि वह व्यक्तिगत एवं धार्मिक दोनों प्रकार के गंभीर दोषों से अनभिज्ञ था अथवा अभिन्न रूप में चित्रित कराना उसे स्वीकार्य था।[1]

जब 1073 ई. में हिल्डब्रांड ग्रेगोरी सप्तम के रूप में पोप निर्वाचित हुआ तो चर्च के सुधारवादी दल एवं साम्राज्य में तथा फ्रांस में भी राज्याधिकारियों के मध्य मतभेद बहुत बढ़ चुके थे तथा यद्यपि यह सत्य है कि काफी समय तक हिल्डेब्रण्ड ने पोप पद की नीतियों के निर्धारण में महत्त्वपूर्ण योगदान किया था, यह कहना भी सत्य है कि उसकी नीति पोप पद पर उसके अभिषिक्त होने के बाद से स्पष्ट एवं अधिक दृढ़ हो गई। सुत्री की परिषद् के समय से पोप ने स्थिरतापूर्वक सुधार की नीति अपनाई थी, विशेषतः दो प्रश्नों के विषय में—एक तो वह जिसके साथ यहाँ हमारा प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है पादरियों का विवाह तथा दूसरा चर्च के पदों का क्रय या विक्रय अर्थात् धर्म विक्रय। अबतक यह मुख्यतः उन पादरियों के विरुद्ध जो कि धर्म विक्रय के अपराधी थे कठोर कार्यवाही के रूप में अभिव्यक्त किया जाता रहा, किन्तु ग्रेगोरी सप्तम के पदारोहण काल से पोप ने अपने आक्रमण का लक्ष्य लौकिक सत्ताधारियों को बनाया जो उसके निर्णयानुसार मुख्यतः इस प्रकार की परिस्थितियों के लिए उत्तरदायी थे।

कभी-कभी यह भी माना गया है अथवा सुझाव दिया गया है कि यह न्यूनाधिक रूप में लौकिक सत्ता के ऊपर धार्मिक सत्ता की श्रेष्ठता को बनाए रखने के निश्चित एवं सुविचारित उद्देश्य के कारण था, हमें इसमें सन्देह है कि इसका कोई न्यायोचित आधार है जिस पर यह निर्णय आधारित हो तथा हमारे विचार में इतिहासकार के लिए अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण यह होगा कि वह पोप की नवीन नीति के वास्तविक विकास के निरीक्षण तक अपने को सीमित रखे। यद्यपि यह सत्य है कि नयी नीति का विकास द्रुत गति से हुआ तथा वास्तव में पदारोहण के प्रथम वर्ष में ही ग्रेगोरी सप्तम ने यह प्रदर्शित कर दिया कि वह पोप पद के द्वारा कभी भी दावा की गई या प्रयोग की गई प्रत्येक शक्ति का उपयोग सुधार के लिए करने को कटिबद्ध था।

नई नीति का यदि हम इसे यह संज्ञा प्रदान कर सकते हैं सर्वप्रथम फ्रांसीसी राजतंत्र के सम्बन्ध में रूप निश्चित हुआ तथा 1076 ई. तक हेनरी चतुर्थ के साथ पूर्ण विच्छेद नहीं हुआ था। अतः हमें ग्रेगोरी सप्तम के पोप पद के प्रारम्भिक वर्षों में फ्रांस से उसके सम्बन्धों के निरीक्षण से अध्ययन प्रारम्भ करना चाहिए।

एक पिछले अध्याय में हम उस कठोर कार्यवाही का वर्णन कर चुके हैं जो पोप लियो नवम ने फ्रांसीसी चर्च में धर्म विक्रय के विरुद्ध की थी।[13] जब हिल्डेब्रण्ड पोप बना तो उसने इस दोष को फ्रांस में प्रचलित पाया तथा उसके निर्णय के अनुसार स्वयं राजा फिलिप प्रथम ही इस दोष का मूल कारण था। अपने पदारोहण के वर्ष 1073 ई. में ग्रेगोरी सप्तम ने शालों के बिशप को एक पत्र लिखा जिसमें उसने फिलिप को अपने काल के सभी राजाओं में से सबसे अधिक दोषी तथा चर्चों की स्वतन्त्रता का सबसे बड़ा विनाशक

तथा इससे पहिले हेनरिक धर्म विक्रय का विशेषत दोषी बताकर निन्दा की थी। वह स्पष्टत इसका अपराध उस पर आरोपित करता है क्योंकि वह फ्रेंच राज्य को रोमन चर्च के प्रति निष्ठा एवं वस्तुतः द्वितीय बनाता है। वह राजा की निन्दा करने मात्र तक ही सीमित न रह कर उसे स्पष्ट शब्दों में धमकी देता है कि यदि फिलिप न अपने गलत तरीकों में सुधार नहीं किया तो वह राज्य का सामान्य धर्म बहिष्कार कर देगा तथा इस प्रकार फ्रांसीसी जनता को विवश कर देगा[14] कि वह राजा के प्रति आज्ञा पालन को समाप्त कर दे।

हम वास्तव में एक नई नीति के आश्चर्यजनक प्रमाण उपलब्ध होते हैं कि रोमन धर्मपीठ अब एक पोप के अधीन है जो अपने अधिकार में विद्यमान सभी साधनों को अपनाकर चर्च की परिस्थितियों में सुधार लाने को कृतनिश्चय है। इस पत्र में प्रकट नीति और संकल्प आगामी वर्षों में और विकसित हो गए। सितम्बर 1074 ई में ग्रेगोरी सप्तम ने राइम्स मेंज व बोडय के आर्चबिशपों शाश्र के बिशप तथा फ्रांस के अन्य बिशपों को पत्र लिखकर राजा की दुष्टता को रोक सकने की असफलता के लिए उनको फटकारा और उनको आज्ञा दी कि एकमत होकर उसका प्रतिवाद करें तथा उसके समक्ष उसके कार्यों की दुष्टता की निन्दा करें। यदि वह उनकी बात पर ध्यान न दे तो उसे चेतावनी दे दें कि वह पादरी की तलवार से नहीं बच सकेगा तथा वे रोम का आज्ञा पालन करते हुए अपने को उसकी आज्ञा पालन तथा धार्मिक सभा से पृथक कर लें तथा सारे फ्रांस में दैवी उपासना के सार्वजनिक कार्यों को निषिद्ध कर दें और अंत में फिर भी यदि फिलिप पश्चात्ताप न करे तो उसने अपना निश्चय प्रकट किया कि वह उसे फ्रांस के राजत्व से वंचित करने के लिए अपनी शक्ति भर कोई उपाय उठा नहीं रखेगा।[15]

उसी वर्ष के नवम्बर में ग्रेगोरी ने प्वातू के सामन्त (Poitou) विलियम को लिखा तथा उसे फिलिप से मिलकर उसके अन्यायों के विशेषतया फ्रांस में इटली के व्यापारियों को लूटने के सम्बन्ध में उसके आचरण के विषय में प्रतिवाद करने को कहा और उसे निर्देश दिया कि यद्यपि इस समय वह उसके पश्चात्ताप को स्वीकार करने के लिए प्रस्तुत है किन्तु यदि उसने अपने बुरे तौर-तरीकों को नहीं सुधारा तो उसको तथा उसकी आज्ञा का पालन करने वाले सभी को वह धर्म बहिष्कृत कर देगा। पुनः उसी वर्ष 1074 ई के दिसम्बर में उसने राइम्स के आर्चबिशप मेनेसस (Manasses) को उसी विषय में पत्र लिखकर राजा के नए एवं अभूतपूर्व अपराध की कि उसने इटली एवं दूसरे देशों के व्यापारियों को लूटा है निन्दा की तथा उसे चेतावनी दी कि यदि वह ऐसे अपराध करता रहा तो वह पोप और रोमन चर्च को सदैव कट्टर शत्रु के रूप में पाएगा। फरवरी 1075 ई में रोम की परिषद् में उसने आदेश दिया कि जबतक फिलिप अपने संशोधित व्यवहार के बारे में पोप के दूतों को जमानत नहीं देता जो कि फ्रांस को भेजे जाने वाले थे वह धर्म बहिष्कृत रहेगा।[16]

ग्रेगोरी सप्तम के इस पत्र की शब्दावली में लौकिक सत्ताओं के प्रति पोप के एक नए दृष्टिकोण धर्म विक्रय के अपराधी केवल पादरियों के प्रति ही नहीं किन्तु यदि उसके लिए उत्तरदायी हों तो लौकिक सत्ताधारियों से भी निपटने और राजाओं को धर्म-बहिष्कृत

एव पद-युत करने के पोप के अधिकार के आरोपण के दर्शन होते हैं। बहुत बाद तक इन दावों का तर्कसंगत स्पष्टीकरण ग्रेगोरी के द्वारा नहीं किया गया किन्तु यह उल्लेखनीय है कि 1074 ई० में ग्रगमोन क राजा सकी को लिखे गए एक पत्र में वह इस पर बल देता है कि ईसा ने पीटर को दुनिया के समस्त राज्यों का राजा बनाया था तथा एक प्रोत्स म जिस पर 1075 ई० की तारीख पड़ी है तथा जिसमें पोप की सत्ता की प्रकृति के बारे म सार रूपेण एक वक्तव्य है हम इस सिद्धान्त का प्रबल समर्थन पाते हैं कि पोप शासकों को पद-युत कर सकता है तथा कर शासकों की प्रजाओं को उनके प्रति राजभक्ति से मुक्त कर सकता है।[17] वास्तव मे इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि बच निरन्तर ही राजाओं पर भी अपने आध्यात्मिक अधिकार का वैसा ही दावा करता आया था जैसा साधारण मनुष्यों पर किन्तु यह अवधारणा कि इसके अन्तर्गत राजाओं को पदच्युत करने का अधिकार भी आता है पूर्णतया भिन्न थी। हमारी प्रथम पुस्तक मे हमने कुछ लेखकों को उद्धृत किया है जो यह सिद्ध करते हैं कि यह परिकल्पना अपरिचित नहीं थी तथा कम से कम कभी कभी नवी शताब्दी में स्वीकार भी की जाती रही थी किन्तु ग्रेगोरी सप्तम की क्रमबद्ध शब्दावली निश्चित रूप से एक नवीन विश्वास एवं नई नीति की परिचायक प्रतीत होती है।[18]

यदि नई नीति सबसे पहले पोप एवं फ्रांसीसी राजतन्त्र के सम्बन्धों में दिखाई दी तो उसका विकास साम्राज्य के सम्बन्धों के विषय में हुआ। हम यहाँ ग्रेगोरी सप्तम एवं हेनरी चतुर्थ के बीच महान संघर्ष के विस्तृत इतिहास को प्रस्तुत करने का दावा नहीं करते किन्तु हमें उसकी दिशा का उस सीमा तक अनुसरण करना चाहिए जहाँ तक कि वह संघर्ष के आधारभूत सिद्धान्तों को समझने के लिए अनिवार्य हो। हम 1069 ई० में अपनी पत्नी को तलाक देने के हेनरी चतुर्थ के प्रस्ताव तथा धर्म-पद विक्रय में उसके सम्पर्क से उत्पन्न वाली गम्भीर रोकथाम का पहले उल्लेख कर चुके हैं। जब 1073 ई० में हिल्डेब्रैण्ड का पोप पद पर अभिषेक हुआ तब तक हेनरी चतुर्थ व्यक्तिगत रूप से एवं स्पष्ट शब्दों में धर्म बहिष्कृत नहीं हुआ था किन्तु उसने धर्म-बहिष्कृत लोगों के सम्पर्क से अपने को पृथक करने को अस्वीकार कर दिया था उसकी अवहेलना की इसलिए वह अप्रत्यक्षत चर्च के निषेधाधीन था। तथापि यह ध्यान देने योग्य है कि हिल्डेब्रैण्ड ने यह सावधानी बरती कि हेनरी चतुर्थ के स्पष्ट का कोई कारण न दे तथा ऐसा प्रतीत होता है कि उसके वास्तविक अभिषेक से पूर्व उसके राय लिए जाने के दावे को स्वीकार कर लिया।[19]

पोप की गद्दी पर पदारोहण के समय हेनरी के प्रति ग्रेगोरी का दृष्टिकोण लारेन के ड्यूक गाडफ्रे को लिखे गए पत्र मे भलीभाँति प्रकट होता है। वह उसे विश्वास दिलाता है कि हेनरी का हित उससे अधिक कोई नहीं चाहता तथा उसे बड़ी प्रसन्नता होगी यदि हेनरी न्यायपालन मे उसकी राय एवं प्रार्थना का ध्यान रखे किन्तु वह स्पष्टतया यह भी कहता है कि किसी भी व्यक्ति के प्रति सम्मान की भावना उसे उनका न्याय करने से ईश्वर से जो घृणा करते थे विमुख नहीं कर सकती।[20] पुन ल्यूका के निर्वाचित बिशप एंसलम को 1073 ई० के सितम्बर में लिखे गए पत्र में वह उसे तब तक हेनरी से प्रतिष्ठापन प्राप्त करने का निषेध करता है जब तक कि उसने धर्म-बहिष्कृत लोगों के साथ सहभागिता के

लिए ईश्वर के प्रति प्रायश्चित न कर लिया हो तथा पोप से शांति न कर ली हो।[21]

ग्रेगोरी का सत्तारोहण हेनरी चतुर्थ के विरुद्ध सेक्सनों के महान् विद्रोह के भड़क उठने के साथ ही साथ हुआ। इस ग्रन्थ की तीसरी पुस्तक में हमने राजनीतिक विचारों के विकास व इतिहास के सम्बन्ध में उसका महत्त्व प्रदर्शित किया है। हम यहाँ पहले कही हुई बात की पुनरुक्ति नहीं कर सकते न हम परिस्थितियों का विस्तृत विवेचन कर सकते हैं किन्तु जर्मनी की राजनीतिक परिस्थितियों को भी ध्यान में रखना आवश्यक है क्योंकि निस्सन्देह पोप की स्थिति के विकास में उनका बहुत बड़ा योगदान था। निस्सन्देह चाहे वह आंशिक रूप में ही रहा हो विद्रोह के भय ने ही उसे इतनी विनम्रता से तथा पश्चात्ताप-पूर्वक अपने को 1073 ई० के उस पत्र द्वारा अभिव्यक्त करने को विवश किया जिसे हम पहले उद्धृत कर आए हैं। वह अत्यन्त नम्रता से यह स्वीकार करता है कि उसने सत्ता का दुरुपयोग किया है तथा वह धर्म विक्रय का अपराधी है उसने ग्रेगोरी से मन्त्रणा देने की प्रार्थना की तथा आज्ञापालन की प्रतिज्ञा की।[2] एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पत्र में जो सितम्बर 1073 ई० में मेग्डेबर्ग के आर्चबिशप तथा दूसरे सेक्सन राजाओं को जो हेनरी के विरुद्ध विद्रोह कर रहे थे लिखा गया था हेनरी तथा उसकी प्रजाओं के बीच ग्रेगोरी के हस्तक्षेप का सर्वप्रथम महत्त्वपूर्ण दृष्टान्त है। वह उनमें उत्पन्न हुए संघर्ष तथा परिणामस्वरूप होने वाली जर्मनी की बर्बादी पर शोक प्रकट करता है तथा स्पष्टतया पुनः शांति स्थापित करने के लिए वास्तविक रूप में अभिलाषी है किन्तु यह उल्लेखनीय है कि उसने प्रारम्भ से ही उनके तथा राजा के प्रति मध्यस्थ की स्थिति अंगीकार की है। वह उनसे कहता है कि उसने राजा से प्रार्थना की है तथा चेतावनी दी है कि पीटर तथा पाल नामक प्रतिनिधियों के नाम पर वह तबतक संघर्ष से विरत रहे जबतक कि वह संघर्ष के कारण को जानने के लिए दूतों को भेजकर शांति स्थापित नहीं कर देता है तथा वह उसी शांति को वह उनको पालन करने के लिए उनको भी प्रनादिष्ट करता है वह उनको विश्वास दिलाता है कि वह न्याय को स्थापित करने का प्रयास करेगा तथा किसी भी व्यक्ति के भय या आदर से ऊपर उठकर धर्मोचित सत्ता का संरक्षण उस पक्ष को देगा जिसके साथ अन्याय हुआ है तथा जिसकी हानि हुई है।[23] इस पत्र का स्वर शिष्ट किन्तु अधिकारपूर्ण है।

यह प्रतीत होगा कि हेनरी ने चर्च से कोई समझौता नहीं किया था किन्तु जून 1074ई० में हेनरी चतुर्थ की माता साम्राज्ञी एग्नेस को ग्रेगोरी द्वारा लिखे गए एक पत्र से यह स्पष्ट होता है कि इस समय तक हेनरी को चर्च की सहभागिता में पुनः स्वीकार कर लिया गया था तथा इस प्रकार जैसा ग्रेगोरी कहता है उसके साम्राज्य का एक बड़ा भारी खतरा टल चुका था क्योंकि हेनरी जबतक उस धर्म सहभागिता से बहिष्कृत था ग्रेगोरी उससे भेंट नहीं कर सकता था तथा प्रजाओं से उसके सम्बन्ध अत्यन्त कठिन थे।[24] दिसम्बर 1074 ई० में हेनरी को लिखे गए उसके एक पत्र में हमारे पास एक बयान है जो कि मित्रतापूर्ण है परन्तु साथ ही कठोर भी जिसमें वह उसे चेतावनी देता है कि वह न्याय पूर्वक अपने राज्य को तभी स्थिर बनाए रख सकता है जबतक कि वह ईसा के चर्च की सुरक्षा एवं पुनरुद्धार के लिए अपने अधिकारों का उपयोग करे।[5] उसी समय के एक दूसरे पत्र में हम ग्रेगोरी की हेनरी के प्रति जब कि उसने पश्चात्ताप तथा सुधार का पूर्ण

आश्वासन मिल गया था भावनाओं की अभिव्यक्ति प्राप्त होती है। वह हेनरी के प्रति अविरत स्नेह की अभिव्यक्ति करता है तथा इस पर खेद प्रकट करता है कि मनुष्य उनमें फूट के बीज बो रहे हैं तथा उससे अनुरोध करता है कि उसकी स्वय की इच्छा ईसा की समाधि तक एक सेना के साथ जाने एव पूर्वीय ईसाइयो की सहायता करने की है तथा यदि ईश्वर की कृपा से वह वहा जा सका तो चर्च को हेनरी के संरक्षण मे छोड़ देने का इच्छुक है ताकि वह माता की भांति उसका संरक्षण करे तथा उसके गौरव की सुरक्षा करे। वह इस प्रार्थना से समाप्त करता है कि ईश्वर उसे सभी पापो से मुक्त करे तथा उसके आदेशो के अनुरूप जीवन-यापन की उसे प्रेरणा दे तथा उस शाश्वत जीवन की ओर लाए।[26] अनस्ट्रट (Unstrut) मे हेनरी की सैक्सनो पर विजय के उपलक्ष्य मे लिखे गए पत्र मे वह प्रसन्नता व्यक्त करता है कि दैवी निर्णय ने उसे सैक्सनो पर जो अन्यायपूर्वक उसका प्रतिरोध कर रहे थे यह विजय प्रदान की है साथ ही वह इस पर खेद भी प्रकट करता है कि इतना अधिक ईसाई रक्त बहा है तथा उसे विश्वास दिलाता है कि वह उसके प्रवेशार्थ चर्च को खोलने तथा ऐसे व्यक्ति के रूप मे उसका स्वागत करने को तैयार है जो एक ही साथ चर्च का स्वामी तथा पुत्र है यदि वह अपनी स्वय की मुक्ति का विचार करने तथा ईश्वर को सम्मान एव गौरव प्रदान करने को तैयार हो।[27]

किन्तु जनवरी 1076 ई मे हम देखते हैं कि ग्रेगोरी एव हेनरी के बीच सम्बन्धो मे गम्भीर तनाव आ गया था। इसी मास की आठवीं तारीख को उसने पुन धर्म-बहिष्कृत लोगो से उसे पृथक रहने का उपदेश दिया तथा फर्मो एव स्पोलेटो (Fermo and Spoleto) के बिशप पद ऐसे व्यक्तियों को प्रदान करने के लिए उसकी शिकायत की जिनको ग्रेगोरी पहचानता भी नही था।[28] कुछ सप्ताहों के बाद अन्तिम विस्फोट हुआ तथा ग्रेगोरी सप्तम एव हेनरी चतुर्थ एक दूसरे के विरुद्ध खुली लड़ाई को तत्पर हो गए। इन परिस्थितियों का विवरण हसफील्ड के लैम्बर्ट ग्रेगोरी सप्तम एव ब्रनो ने दिया है। लैम्बर्ट के अनुसार पोप के दूत जर्मनी मे आए तथा हेनरी को उन पर लगाए गए आरोपो का उत्तर देने के लिए लेन्ट (Lent) के दूसरे सप्ताह में रोम मे होने वाली परिषद् मे उपस्थित होने को निमन्त्रित किया तथा घोषणा की कि यदि वह ऐसा नही करेगा तो चर्च निर्णय द्वारा उसे चर्च से निकाल दिया जाएगा। हेनरी इस घोषणा से बहुत विचलित हो गया तथा उसने दूतों को तुरन्त ही धृष्टतापूर्वक विदा करके अपने साम्राज्य के सभी बिशपो तथा मठाध्यक्षों को सेप्टुआजेसिमा (Septuagesima) रविवार को वर्म्स नामक स्थान पर बुलाया जहाँ वे ग्रेगोरी की पदच्युति पर विचार कर सकें क्योकि यह उसकी एव साम्राज्य की सुरक्षा के लिए आवश्यक हो गया था। ग्रेगोरी ने 1 अगस्त 1076 को जर्मनी के श्रद्धालुओ को लिखे गए पत्र मे हेनरी चतुर्थ से सम्बन्धो का एक विस्तृत विवरण प्रस्तुत करके यह बताया है कि उसने हेनरी को चेतावनी देते हुए लिख दिया है कि यदि वह अपने को धर्म-बहिष्कृत लोगो के सम्पर्क मे अलग नही रखता तो उसे चर्च से पृथक मान लिया जाएगा तथा भर्त्सना के कारण क्रुद्ध हेनरी ने जर्मनी व लम्बार्डी के कई बिशपो को इसके लिए फुसला लिया है कि वे पोप की गद्दी का आज्ञा पालन छोड़ दें।[29]

परिषद् निश्चित दिन हुई तथा उसकी कार्यवाही का सबसे अच्छा ज्ञान उन पत्रो पर

विचार करने से होगा जो कि स्वय बिशपों एव हेनरी चतुर्थ ने निर्णयों की घोषणा करते हुए लिखे थे। हम बिशपो के पत्रो म वर्णित सभी विषया पर विचार नहीं कर सकते किन्तु उनमे सबसे महत्वपूर्ण निम्न थ। इन पत्रो मे उनके द्वारा आरोप लगाया गया कि उसने (ग्रेगोरी ने) सभी चर्चों म उपद्रव खडा कर दिया है जनता को बिशपो एव पादरियों के विरुद्ध कर दिया है तथा बिशपा की नियुक्ति को स्वीकार करने अथवा अस्वीकार करने का अधिकार हथिया लिया है तथा किसी भी व्यक्ति को जिसके अपराध के प्रति उनका ध्यान आकर्षित किया गया हो बांधन या मुक्त करने के अधिकार का भी उन्हें निषेध कर दिया है। उनके द्वारा सुझाव दिया गया कि पोप पद पर उसका निर्वाचन अनियमित है तथा पोप निकोलस द्वितीय के घोषणा पत्र के बिलकुल विरुद्ध है उस पर किसी स्त्री से अपवादपूर्ण सम्बन्ध एव उसे धार्मिक मामला म हस्तक्षेप करने की छूट देने का आरोप लगाया गया। अत उन्होंने निश्चय किया कि वे उस पोप के रूप मे मान्यता नहीं देंगे।[30]

हेनरी ने ग्रेगोरी के लिख गए पत्र मे कहा कि पहले उसने उन बिशपो पर आक्रमण किया है जो उसके मित्र हैं और इसके बाद स्वय उस पर (हेनरी पर) आक्रमण के लिए तैयार हो गया है तथा उसकी आत्मा और साम्राज्य को छीनने की धमकी दे रहा है। परिणामस्वरूप उसने साम्राज्य के सभी प्रमुख लोगो की एक सभा बुलाई है और उनके द्वारा यह निश्चय किया गया है कि ग्रेगोरी को पोप नहीं स्वीकार किया जाए। हेनरी ने ने उनके निर्णय की पुष्टि कर दी है तथा ग्रेगोरी के पोप-पद पर दावे को अस्वीकार कर दिया है तथा उसे आदेश देता है कि उस रोम नगर के धर्मपीठ को छोड दे जिसका कि वह ईश्वरीय प्रदान द्वारा तथा रोमन जनता की शपथपूर्ण सहमति द्वारा साम्राज्यिक प्रतिनिधि है।[31] रोमन जनता को सम्बोधित अपने पत्र मे हेनरी न अपने पूर्व पत्र का उल्लेख किया है तथा उनका ग्रेगोरी के विरुद्ध विद्रोह करने एव उसे पोप पद से उतारने के लिए आह्वान किया है ताकि हेनरी द्वारा सभी बिशपो एव रोमन नागरिको की सहमति से नया पोप नियुक्त किया जा सके जो चर्च के घावो को भर सके।[32]

सम्भवत यह उल्लेखनीय है कि बिशपों का पत्र मुख्यत धार्मिक शिकायतो तथा ग्रेगोरी के चुनाव की तथाकथित अनियमितताओ पर बल देता है जबकि हेनरी का मुख्यत पोप द्वारा उसे धर्म बहिष्कृत करने की धमकी तथा उसे पदच्युत करने की आरोपित धमकी का वर्णन करता है। हम नहीं कह सकते हैं कि क्या उसका यह अभिप्राय धर्म बहिष्कृत करने की धमकी मे छिपा था केवल मात्र जिसका वर्णन लेम्बर्ट ने किया है अथवा ग्रेगोरी का कोई इस प्रकार का वक्तव्य था जैसा कि हेनरी के पत्र म उसके शब्दों से विदित होता है (Scillicet ut tuisverbis utar)। हेनरी न स्पष्टतया आरोप लगाया है कि ग्रेगोरी ने उसे पदच्युत करने की धमकी दी थी। यह इस ग्रन्थ की विषय-वस्तु के बाहर की बात है कि इस प्रश्न पर विचार किया जाए कि कहाँ तक बिशपों की यह मान्यता तर्कसगत थी या नहीं कि ग्रेगोरी उन पर नए अधिकारो का दावा कर रहा है। निस्सन्देह यह सत्य है कि पोप उत्तरी चर्च की दशाओं को सुधारने के प्रयत्नों में अपना गतिविधि को एक बड़ी सीमा तक बढ़ा रहा था किन्तु सैद्धान्तिक रूप मे यह कितनी नवीन वृद्धि की परिचायक थी यह दूसरी बात है।

हमारा सम्बन्ध यहाँ लौकिक एवं धार्मिक सत्ता के सम्बन्धों से है तथा अब वोम्स की परिषद् की कार्यवाही से हट कर रोम में फरवरी में हुई ग्रगोरी की परिषद् की ओर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं। इस परिषद् में सत पीटर को सम्बोधित एक स्तुति की पदावली का प्रयोग करके ग्रेगोरी ने गम्भीरता से हेनरी को धर्म बहिष्कृत कर दिया उसे जर्मनी व इटली के सम्राट पद से पदच्युत कर दिया तथा सभी प्रजाजनों को उनकी निष्ठा की शपथ से मुक्त कर दिया। उसने यह इन आधारों पर किया कि हेनरी ने ईश्वर की आज्ञा मानने से अस्वीकार कर दिया है उन लोगों में सम्मिलित हो गया है जो धर्म बहिष्कृत हैं तथा उसने चर्च के विभाजन का प्रयत्न किया है उसने इस अधिकार का दावा सत पीटर के नाम पर किया जिसे ईसा ने स्वर्ग और धरती पर बाँधने या मुक्ति की शक्ति सौंप दी है।[33]

अनत संघर्ष एक खुला युद्ध हो गया तथा यूरोप की सबसे महान् लौकिक सत्ता रोम की धार्मिक सत्ता के विरुद्ध हो गई। अब हम उन प्रलेखों की परीक्षा करनी है जिनमें हेनरी तथा ग्रेगोरी ने अपने कार्यों का औचित्य सिद्ध किया है। सबसे पहला महत्वपूर्ण वक्तव्य जिस पर हमें विचार करना चाहिए ग्रगोरी को 27 मार्च 1076 को लिखा गया हेनरी का पत्र है जो उसने सम्भवत फरवरी में रोम की परिषद् द्वारा अपने धर्म बहिष्कृत एवं पदच्युति के बारे में सुनकर लिखा था। वह इस पत्र में उस पोप के रूप में नहीं किन्तु भूठे साधु हिल्डेब्राण्ड के रूप में सम्बोधित करता है तथा वह उस पर चर्च की सभी न्यायोचित व्यवस्था को भंग करने तथा बिशपों से अपने गुलाम की भाँति व्यवहार करने का आरोप लगाता है वह कहता है कि उसने इन सबको सहन किया किन्तु हिल्डेब्राण्ड ने उसकी नम्रता को कायरता समझ लिया है तथा अन्त में राजकीय सत्ता पर आक्रमण किया है जो उसे ईश्वर द्वारा प्रदत है तथा उससे उसे छीनने की धमकी दी है मानो हेनरी को राजगद्दी उसी ने दी हो। पवित्र धर्माचार्यों की परम्परा ने यह सिखाया है कि अभिषिक्त राजा का न्याय केवल ईश्वर द्वारा होता है तथा उसे धर्मच्युत के अतिरिक्त किसी भी अन्य अपराध के कारण पदच्युत नहीं किया जा सकता। इसलिए वह तथा सभी बिशप आज्ञा देते हैं कि हिल्डेब्राण्ड पोप की गद्दी से उतरे तथा दूसरे के लिए जगह खाली करे।[34] यह पत्र दो महत्त्वपूर्ण दावे या सिद्धान्त प्रस्तुत करता है। पहला हेनरी की नियुक्ति ईश्वर द्वारा हुई है और वह केवल ईश्वरीय न्याय के अधीन है तथा यदि वह धर्म त्याग करे तभी उसे पदच्युत किया जा सकता है दूसरा यह कि राजा और बिशपों को पोप का न्याय करने एवं उसे पदच्युत करने का अधिकार है। किन्तु यह अधिकार अस्पष्ट रूप में ही प्रस्तुत किया गया है तथा इन दावों के आधार एवं परिस्थितियों को स्पष्टतया नहीं बताया गया है।

हेनरी की स्थिति एक दूसरे लेख में अधिक सावधानी से प्रस्तुत की गई है जो वास्तव में विटसनटाइड (Whitsuntid) पर होने वाली परिषद् के लिए बिशपों को सम्बोधित निमन्त्रण समझा जाता है। इसमें वह कुछ सावधानी से दोनों सत्ताओं राजकीय तथा धार्मिक के विभिन्न सिद्धान्तों का वर्णन करता है जिन्हें ईसा ने अपने चर्च में दो तलवारों के रूप में स्थापित किया और वह इनके पृथक्-पृथक् कार्यों का वर्णन करता है। धार्मिक

सत्ता को ईश्वर के पश्चात् राजा के प्रति आज्ञापालन प्राप्त कराता है तथा राजकीय सत्ता को ईसा के शत्रुओं को जीतना है तथा चर्च के आगत मनुष्यों को धार्मिक सत्ता की आज्ञापालन के लिए विवश कराता है। हिल्डब्राण्ड इस व्यवस्था को नष्ट करने का प्रयत्न कर रहा था तथा ऐसा करते हुए वास्तव में दोनों सत्ताओं की स्थिति एवं शक्ति को नष्ट कर रहा था। प्रासंगिक रूप से वह इसे भी अस्वीकार कर देता है कि ईश्वर ने हिल्डेब्राड को धार्मिक सत्ता सौंपी है।[35]

हिल्डेब्राण्ड ने अपनी स्थिति को तर्कपूर्ण शब्दों में मेटस के बिशप हरमन को अगस्त 1076 ई० में भेजे गए एक पत्र में व्यक्त किया। प्रमुख रूप से वह उन लोगों के तर्कों को सम्बोधित कर रहा है जो यह मानते थे कि एक राजा को धर्म बहिष्कृत करना उचित नहीं है। वह अनेक अधिकृत मतों एवं ऐतिहासिक दृष्टान्तों को प्रस्तुत करके सिद्ध करता है कि यह विधि सम्मत था तथा ऐसा पहले किया भी गया है। वह तर्क देता है कि यह धारणा कि कोई भी व्यक्ति धार्मिक अधिकार क्षेत्र से मुक्त हो सकता है वास्तविक दृष्टि से मूर्खतापूर्ण है क्योंकि इसका अभिप्राय होगा कि वह चर्च से बाहर है तथा ईसा से परे है। राजा को धर्म-बहिष्कृत करना न्यायोचित सिद्ध करने के लिए वह पोप ज़कारियास अभिकथित द्वारा फ्रांस के अन्तिम मेरोविन्जियन (*Merovingian*) राजा की अभिकथित पदच्युति का दृष्टान्त देता है तथा ग्रेगोरी महान् के पत्र के शब्दों को प्रस्तुत करता है जिसमें उसने अपना निर्णय न मानने वाले राजाओं को न केवल धर्म बहिष्कार अपितु पद हानि की भी धमकी दी थी। सम्भवतः जब वह कहता है कि पोप का धर्मासन जो ईश्वर द्वारा प्रदत्त सत्ता के कारण धार्मिक मामलों का निर्णय करता है लौकिक विषयों में भी क्यों न निर्णय करे तो उसका यही अभिप्राय है। कुछ लोग मानते हैं कि राजकीय गौरव बिशप के गौरव से बढ़कर है वह उसका विरोध करते हुए कहता है कि सत्य इससे ठीक विपरीत है तथा यह इसकी उत्पत्ति से ही स्पष्ट है। राजत्व का मूल मनुष्य का अहंकार है जबकि बिशप का पद ईश्वर निर्मित है। अन्त में वह हेनरी को पाप मुक्त करने का प्रत्येक व्यक्ति को कठोरता से निषेध करता है क्योंकि यह पोप के निर्णय के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए।[36]

जर्मनी के श्रद्धालुओं को सम्बोधित तीन सितम्बर के पत्र में ग्रेगोरी ने अपनी स्थिति तथा दावा किए गए अधिकारों को कुछ महत्वपूर्ण परिवर्धनों सहित प्रस्तुत किया। उसने हेनरी को धर्म बहिष्कृत करने वाली घोषणा की ओर उनको निर्देशित किया जो कि उस कार्य को करने के आधारों के बारे में एक वक्तव्य चाहते थे तथा उनको यह समझाने का प्रयत्न किया कि हेनरी का धर्म बहिष्कार ही नहीं हुआ है अपितु उसे पदच्युत भी कर दिया गया है तथा सभी व्यक्तियों को उनकी निष्ठा की शपथ से मुक्त कर दिया गया है। वह चाहता है यदि वह (हेनरी) पश्चात्ताप करे तो विशेषतया उसके पिता व माता के कारण उस पर दया की जाए किन्तु हेनरी को यह जान लेना चाहिए कि चर्च उसके हाथों का खिलौना नहीं किन्तु उसके ऊपर स्थापित है। यदि वह पश्चात्ताप नहीं करेगा तो दूसरा राजा चुना जाएगा जो ग्रेगोरी के आदेशों का पालन करने की प्रतिज्ञा करेगा तथा ईसाई धर्म और सम्पूर्ण साम्राज्य के हित में जो जो कार्य आवश्यक प्रतीत हो करेगा।

यह चाहता है कि जिसे वे चुनें उस व्यक्ति तथा उसके चरित्र के बारे में व उसे सूचना दें ताकि व० उनके चुनाव और नई व्यवस्था की पुष्टि करे जसा कि पवित्र धर्माचार्यों ने पहले भी किया है। अन्तत वह साम्राज्ञी एग्नेस की की गई किसी शपथ का उल्लंघन करता है तथा यदि उन्होंने उसके पुत्र को सम्राट पद से हटाने का निश्चय कर लिया हो तो साम्राज्ञी से और स्वय (पोप) से उसके उत्तराधिकारी के रूप में चुन गए व्यक्तियों के बारे मे राय लेने का आदेश देता है।[37]

यदि हम इन प्रलेखों मे विद्यमान सिद्धान्तों एव दावों को सक्षिप्त करने का प्रयत्न करें तो हम प्रतीत होगा कि ग्रेगोरी द्वारा राजा के ऊपर भी आध्यात्मिक-क्षेत्राधिकार प्रयुक्त करने के दावे से तत्काल एव प्रत्यक्ष रूप से सघर्ष उत्पन्न हुआ। हेनरी के अभिकथित धार्मिक अपराधों का स्पष्टीकरण देने के लिए रोम आने की आज्ञा ही इसके सघर्ष का तात्कालिक कारण थी। ग्रेगोरी की मूलभूत एव प्रथम मान्यता यह थी कि राजा भी चर्च की धार्मिक गर्हा का पात्र है तथा यदि आवश्यकता हो तो उसे भी धर्म-बहिष्कृत किया जा सकता है। यह स्पष्ट नहीं है कि क्या ग्रेगोरी ने हेनरी को औपचारिक रूप से पदच्युत करने की धमकी दी थी किन्तु हेनरी ने समझा कि उसने वैसा किया है चाहे स्पष्ट रूप से हो या अस्पष्ट रूप से। इसीलिए उसने विरोध मे दावा किया कि उसे तथा बिशपों को पोप का न्याय करने के लिए बैठने का अधिकार है तथा इस दावे के अनुसार काम करते हुए उनके द्वारा वाम्स मे ग्रेगोरी को पदच्युत करने की घोषणा की गई। ग्रेगोरी ने इसका उत्तर हेनरी को धर्म बहिष्कृत तथा ईश्वर तथा स्वय चर्च के विरोधी के रूप में औपचारिक रूप से पदच्युत करके दिया तथा विभिन्न तर्कों एव दृष्टान्तों से अपने कार्यों का औचित्य सिद्ध किया। हेनरी ने इसका उत्तर दो प्रकार से दिया पहला तो इस दावे के रूप म कि राजा केवल ईश्वर के निर्णय के अधीन है तथा उसे अपधर्म के अतिरिक्त अन्य किसी कारण से पदच्युत नहीं किया जा सकता तथा दूसरे उसने अपने समर्थन म दोनों सत्ताओं की विभिन्नता एव स्वतन्त्रता की गलेसियन परम्परा को उद्धृत किया। यह ध्यान देना चाहिए कि मेत्ज के बिशप हरमन को लिखे गए पत्र म ग्रेगोरी ने स्पष्ट रूप से इसे अस्वीकार नहीं किया किन्तु राजा पर धार्मिक सत्ता के दावे की पुष्टि की तथा सम्भवतया यह माना कि उसके अन्तर्गत पदच्युत करने का अधिकार भी सम्मिलित है उसने स्पष्ट किन्तु महत्वपूर्ण शब्दों मे यह मान्यता प्रस्तुत की कि पवित्र पोप यदि धार्मिक मामलों का निर्णय कर सकता है तो वह लौकिक वस्तुओं का भी निर्णय कर सकता है। वास्तविक परिस्थिति के विशेष सन्दर्भ मे उसने उस व्यक्ति के बारे मे विचार करने एव स्वीकृति प्रदान करने का भी दावा किया जिसे जर्मन जनता हेनरी के स्थान पर चुने।

इस प्रकार महान् सघर्ष की यह प्रथम सीढ़ी थी तथा दोनों दलों द्वारा प्रस्तुत किए गए दावों का यह स्वरूप था। अब हमे ऐतिहासिक परिस्थिति में विकास तथा प्रस्तुत किए गए सिद्धान्तों के उत्तरकालीन विकास का सक्षिप्त विवेचन करना चाहिए।

ऐसा प्रतीत हुआ होगा कि ग्रेगरी से सघर्ष में हेनरी जर्मनी एव यहाँ तक जर्मन बिशपों का भी समर्थन प्राप्त कर सका था किन्तु थोड़े ही समय म स्पष्ट हो गया कि

यह सत्य नही था। ग्रसन्ट की 1075 ई की विजय ने सेक्सनो के विद्रोह को दबा कर जमनी मे हेनरी की सर्वोच्चता स्थापित कर दी किन्तु 1076 ई मे एक नया तथा व्यापक विद्रोह खडा हो गया तथा थोडे समय म राजनतिक स्थिति पूणतया बदल गई।

सक्सनो ग्रौर सुग्राबियनों (Suabians) ने खुला विद्रोह कर दिया ग्रौर हेनरी तूफान के ग्राग सिर झुकाने को बाध्य हो गया। इतिहासकारो म घटनाग्रो क बारे मे मतभेद है किन्तु वे सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ग्रनेक प्रश्नो पर एकमत हैं। हेनरी ग्रेगोरी को ग्रात्मसमपण करने के लिए बाध्य हुग्रा तथा राजाग्रों ने निश्चय किया कि यदि वह *एक वष मे पाप मुक्त नही होता है तो वह सम्राट नहीं रहेगा* उन्होने पोप को जमनी ग्राने का निमत्रण दिया ताकि सघष समाप्त किया जा सके।[8] हेनरी द्वारा ग्रेगोरी सप्तम तथा जमन राजाग्रो को लिखे पत्रो म उसके समपण की घोषणा ग्रत्यन्त स्पष्ट शब्दो मे ग्रभिव्यक्त है।[39]

हेनरी ने विद्रोही राजाग्रो की शर्तों को स्वीकार कर लिया तथा वह स्पायस को लौट गया किन्तु ग्रपने धम-बहिष्कार की वषगाँठ से पूव पाप मुक्त होने क महत्त्व को देखते हुए उसने ग्रेगोरी के सम्मुख उपस्थित होने तथा ग्रपने को पाप मुक्त करने क लिए इटली जाने का निश्चय कर लिया। ग्रेगोरी उसी समय रोम से जमनी जाने को रवाना हो चुका था ग्रौर हेनरी जब ग्राया तब वह कैनोसा पहुच चुका था। हम कैनोसा के दरवाजे पर हेनरी के नगे पर खडे रहने का कथा का वणन करने की ग्रावश्यकता नही है किन्तु उसकी पाप मुक्ति की शर्तें बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। ग्रेगोरी सप्तम के पत्निका म हेनरी *के द्वारा 28 जनवरी 1077 ई को की गई तथाकथित प्रतिज्ञाग्रो का विवरण मिलता* है। इसमे हेनरी ने प्रतिज्ञा की कि जमन साम्राज्य क ग्राचबिशपो बिशपो तथा ग्रन्य राजाग्रो द्वारा उसके विरुद्ध की गई शिकायतो क बारे मे या तो पोप के निणय क ग्रनुसार न्याय करेगा या उसकी राय से पोप द्वारा निश्चित की गई शर्तों के ग्रनुसार शान्ति स्थापित कर देगा जबतक कि वह या पोप किसी भी निश्चित बाधा (certum impdimentum) से ग्रवरुद्ध न हो जाय। टैम्बट द्वारा पाप मुक्ति की शर्तों के विवरण का बहुत थोडा ऐतिहासिक मूल्य है किन्तु हेनरी के कुछ शत्रुग्रो क दृष्टिकोण के उदाहरण स्वरूप वह महत्त्वपूण है। उसमे हेनरी को यह प्रतिज्ञा करता हुग्रा बताया गया कि वह पोप द्वारा निश्चित किए गए समय एव स्थान पर जमन राजाग्रो की एक परिषद् मे उपस्थित होगा तथा वहाँ ग्रपने ऊपर लगाए ग्रारोपों का उत्तर देगा वहाँ पर पोप न्यायाधीश का काय करेगा तथा उसके निणय के ग्रनुसार हेनरी यदि ग्रपने पर लगाए गए ग्रारोपो से मुक्त हो जाता है तो राजगद्दी बनाए रखेगा ग्रथवा यदि वे सिद्ध हो जाते हैं तो पद-त्याग देगा तथा धार्मिक कानूनो के ग्रनुसार राजकीय गरिमा क ग्रयोग्य घोषित *कर दिया जाएगा।* उसने प्रतिज्ञा की कि यदि उसे राजा बनाए रखा गया तो वह पोप का ग्रनुयायी तथा ग्राज्ञापालक बना रहेगा तथा उसके साम्राज्य म बहुत समय से विद्यमान धार्मिक नियमो के विपरीत कुप्रथाग्रो के सुधार म साहसपूर्वक सहायता करेगा। यदि हेनरी इन प्रतिज्ञाग्रो को पूरा न करे तो पाप मुक्ति ग्रवध हो जाएगी तथा राजाग्रो को दूसरा सम्राट चुनने का ग्रधिकार होगा।[40]

पोप के लिए सुरक्षित यात्रा की माँग करता है क्योंकि वह उन दोनों के मध्य विवाद का निपटारा जर्मन पादरियों एवं ईश्वर भीरु प्रयाजक वर्ग की राय से करना चाहता है तथा न्याय किस पक्ष के समर्थन में है इसकी घोषणा करना चाहता है। वे जानते हैं कि चर्च के गंभीर विषयों का निर्णय पोप की गद्दी का दायित्व है तथा यह मामला इतना भारी तथा खतरनाक है कि यदि वह इसकी उपेक्षा करेगा तो समस्त चर्च दारुण क्षति ग्रस्त हो जाएगा। इसलिए दोनों सम्राटों में से कोई भी यदि उसके नेतृत्व या उनकी प्रयोजन सिद्धि में बाधा दे तो उनको चाहिए कि वे उसे राज्य से वंचित कर दें तथा उनके समर्थकों को चर्च की संगति से बहिष्कृत कर दें तथा जो राज्य में ग्रेगोरी की आज्ञा पालन करे उसकी पुष्टि के लिए तथा पादरियों एवं प्रयाजक दोनों को निष्ठापूर्वक उसकी सेवा करने का निर्देश देने के लिए पादरियों तथा प्रयाजक वर्ग की एक सभा आहूत करे।[45]

ग्रगोरी सप्तम की पंजिका में कई प्रलेख हैं जो 1078 ई० की घटनाओं का विकास प्रदर्शित करते हैं। फरवरी 27 से 3 मार्च तक रोम की परिषद् की पुरस्कृत कार्यवाही में पता चलता है कि यह निश्चय किया गया कि जर्मनी में गीर मतभेदों के कारण उत्पन्न हुए चर्च के खतरे के कारण सभी धार्मिक व्यक्तियों को चाहे वे पादरी हों या प्रयाजक अपने प्रतिनिधि एक परिषद् के लिए भेजने को कहा गया है ताकि उनकी मदद से या तो शांति स्थापित हो सके या यह जाना जा सके कि न्याय किस पक्ष की ओर है तथा उसे पोप सत्ता की सहायता दी सके।[46] ग्रेगोरी का एक पत्र जो जर्मनी के सभी कोटि के व्यक्तियों को सम्बोधित है परिषद् के निर्णय की घोषणा करता है तथा सबसे शांति के लिए प्रयत्न करने का अनुरोध करता है।[47] 1 जुलाई को ग्रगोरी ने पुनः सभी जर्मन पादरियों एवं प्रयाजकों को जर्मनी में उसके दूतों की उपस्थिति में हेनरी एवं रूडोल्फ के बीच निर्णय के लिए होने वाली परिषद् के विषय में लिखा।[48]

फरवरी 1079 में हेनरी तथा रूडोल्फ दोनों के दूत रोम की एक परिषद् में उपस्थित हुए तथा पंजिका में उनके द्वारा अपने स्वामियों की ओर से की गई प्रतिज्ञाएं अंकित हैं। हेनरी के दूतों ने शपथ ली कि यदि न्यायोचित कारण बाधक न हो तो स्वर्गारोहण दिवस (Ascension Day) के पूर्व हो या पोप के दूत जर्मनी में आने के लिए आएंगे तथा हेनरी न्याय तथा उनके निर्णय के अनुसार सभी बातों में आज्ञा पालन करेगा। रूडाल्फ के दूतों ने शपथ ली कि यदि पोप के आदेशानुसार जर्मनी में परिषद् की बैठक हुई तो वह स्वयं उपस्थित होगा या उसके बिशप तथा अन्य विश्वसनीय व्यक्ति उपस्थित होंगे और वह राजत्व के बारे में रोमन चर्च का निर्णय स्वीकार करने को तैयार रहेगा वह परिषद् की बैठक के मार्ग में कोई बाधा उत्पन्न नहीं करेगा तथा पोप के प्रतिनिधियों की उपस्थिति के लिए जो भी संभव हो करेगा।[49]

अतः परिषद् ने जर्मनी में प्रतिनिधि भेजने का निर्णय लिया जो कि पादरियों एवं प्रयाजकों की एक संयुक्त सभा बुलाएँगे जो या तो शांति स्थापित करेंगे या उन लोगों के विरुद्ध जो संघर्ष के कारण हैं धार्मिक विधि के आधार पर निर्णय करेंगे तथा घोषणा की कि कोई भी व्यक्ति जो प्रतिनिधियों के कार्य में बाधा डालेगा अथवा जब शांति वार्ता चल रही हो युद्ध करेगा धर्म बहिष्कृत कर दिया जाएगा।[50]

ग्रेगोरी ने सुम्राविया के रूडोल्फ को सम्बोधित उसी मास के एक पत्र म इसी निर्णय का उल्लेख किया है। वह उसे विश्वास दिलाता है कि यद्यपि हेनरी चतुर्थ के दूत उससे अपने पक्ष का समर्थन करने के लिए निरंतर प्रार्थना करते रहे हैं किन्तु उसने दृढ निश्चय किया है कि वह केवल न्यायोचित का अन्वेषण तथा उसका ही समर्थन करेगा। एक दूसरे पत्र में रूडोल्फ तथा उसके पक्ष के बिशपों एव राजाओं को वह उनके धर्म की सत्यता एव अपनी स्वतन्त्रता के लिए डटे रहने का आह्वान करता है किन्तु उन विधानों की जानकारी के लिए उनका ध्यान अपने प्रतिनिधियों एव पत्रों की ओर आकृष्ट करता है जो जर्मन साम्राज्य म शान्ति स्थापित करने के लिए रोम की परिषद् के द्वारा लिए गए थे।[51] यह दूसरा पत्र ग्रेगोरी की निष्पक्षता के दावे स आसानी स मेल नहीं खाता।[5] उसी वर्ष अक्टूबर के प्रारम्भ म लिखे गए दो पत्र ग्रेगोरी की स्थिति को भलीभांति स्पष्ट करते प्रतीत होते हैं। एक जर्मनी मे उसके दूतों को लिखा गया है तथा उसमे कहा गया है कि उसे शिकायतें मिली हैं कि वे उसके निर्देशों का पालन नहीं कर रहे हैं और यद्यपि वह उन शिकायतों को सत्य नहीं समझता तथापि वह उन्हें अत्यन्त सावधानी बरतने की चेतावनी देता है ताकि वे किसी प्रकार इस सन्देह का अवसर प्रदान न करें कि वे एक दल के पक्ष मे अधिक झुके हैं क्योंकि उसने न्याय को छोड़कर किसी अन्य पक्ष का अवलम्बन न करने का निश्चय किया है। यह महत्वपूर्ण है कि उसने उनको किसी आर्चबिशप या बिशप पर जिस पर अवैधानिक प्रतिष्ठापन प्राप्त करने का आरोप हो कोई निर्णय देने का प्रबल निषेध किया है तथा कहा है कि वे तुरन्त उसे सूचित करें यदि राजा (हेनरी) ने साम्राज्य म पुन शान्ति स्थापनार्थ किसी सम्मेलन को बुलाने का उनके साथ कोई समझौता किया हो।[53] दूसरा पत्र जर्मनी के श्रद्धालुओं को सम्बोधित है। वह कहता है कि उसने सुना है कि यह शिकायत है कि वह लौकिक आकाशगामिता (Seculari levitate) के पक्ष म आचरण कर रहा है किन्तु वह उनको विश्वास दिलाता है कि उससे अधिक किसी को भी हानि नहीं हुई है। लगभग सभी जनसाधारण हेनरी चतुर्थ के पक्ष मे हैं तथा उस पर अशिष्टता एव उसके प्रति धर्म (Hi tas) हीनता का आरोप लगा रहे हैं। उसने अभी तक इस दबाव का प्रतिरोध किया है तथा जहाँ तक समानता एव न्याय की माँग है वह किसी भी पक्ष की ओर नहीं झुका है। यदि उसके प्रतिनिधियों ने वसा किया है तो उसका उसे खेद है किन्तु उन्होंने भी उग्र दबाव या धास म आकर वसा किया होगा।[54]

मार्च 1080 ई म ग्रेगोरी सप्तम एव हेनरी चतुर्थ के बीच म पूर्ण मतभेद हो गया तथा ग्रेगोरी ने पुन हेनरी को धर्म-बहिष्कृत एव पदच्युत करके रूडोल्फ को राजा स्वीकार कर लिया। ग्रेगोरी ने यह घोषणा रोम की एक परिषद् मे की जिसम उसने कनोसा से लेकर अब तक की घटनाओं तथा अपने कार्य का सक्षिप्त विवरण दिया है। उसने घोषणा की कि यद्यपि उसने कनोसा मे हेनरी को पापमुक्त कर दिया था तथापि उसने उस राजत्व पुन प्रदान नहीं किया था तथा न्याय करने एव उसमे तथा उसके विरुद्ध विद्रोह करने वालों के बीच शान्ति स्थापित करने को कृत निश्चय था। रूडोल्फ का निर्वाचन उसकी राय के बिना किया गया था किन्तु उसने हेनरी की प्रार्थना को स्वीकार नहीं किया

था कि रूडोल्फ के विरुद्ध उसकी सहायता करे। अन्त में दोनों राजाओं ने उससे न्याय करने को कहा तथा उसने घोषणा की थी कि जर्मनी में एक सभा हो जो या तो यह निश्चय करे कि न्याय किस पक्ष की ओर है अथवा शान्ति स्थापित कर दे क्योंकि वह जानता था कि जो पक्ष दोषी होगा वह सभा को रोकने का प्रयत्न करेगा उसने जो यह प्रयत्न करे उसे भी धर्म बहिष्कृत कर दिया था। हेनरी तथा उसके समर्थकों ने सभा को रोक लिया है अतः ईश्वर एवं पवित्र कुमारी के न्याय एवं करुणा पर विश्वास करके वह उसे तथा उनको धर्म बहिष्कृत करता है ईश्वर तथा परिषद् के नाम पर हेनरी को जर्मनी एवं इटली के सम्राट पद से पदच्युत करता है सभी ईसाई लोगों को उसकी आज्ञा मानने से निषेध करता है तथा उनको आज्ञापालन की उस शपथ के बन्धन से मुक्त करता है जो उन्होंने ली है अथवा भविष्य में लेने वाले हैं। उसने गम्भीरता पूर्वक रूडोल्फ को जर्मन साम्राज्य का शासक बनाया जिस पर जर्मनों ने उसे चुना है तथा उन सबको जो निष्ठापूर्वक उसकी आज्ञापालन करें पापों से मुक्ति तथा इस लोक और परलोक में परिषद् की ओर से आशीर्वाद प्रदान किए। अन्त में उसने परिषद् के सदस्यों को इस प्रकार कार्य करने के लिए आह्वान किया जिससे सारा विश्व यह जान सके कि उनके पास स्वर्ग में बांधने या मुक्त करने की शक्ति है इस तरह वे राज्य प्रदेश तथा मनुष्यों की दूसरी सम्पत्तियाँ मनुष्यों के गुणों के अनुसार प्रदान अथवा ग्रहण कर सकते हैं। दुनिया के सम्राट एवं राजा जान लें कि उनकी शक्ति कितनी महान है तथा चर्च की आज्ञा का उल्लंघन करने से भयभीत हों।[55]

इस वक्तव्य में निहित सिद्धान्तों पर ध्यान देना बहुत महत्त्वपूर्ण है। पहला तो ग्रगोरी का दावा कि जिस सभा को अपने तथा रूडोल्फ के बीच विवाद को सौंपने की उसने प्रतिज्ञा की थी उसमें बाधा उत्पन्न करने पर उसे हेनरी को धर्म-बहिष्कृत करने तथा पदच्युत करने का अधिकार है। दूसरे वह जर्मन साम्राज्य पर रूडोल्फ की नियुक्ति प्रदान करने या स्वीकृति के अधिकार का दावा करता है लेकिन यह द्रष्टव्य है कि वह यह बहुत की सावधानी बरतता है कि जर्मनों ने उसे चुना है। तीसरे वह रोम की परिषद् को इस कार्य में अपने साथ सम्मिलित कर लेता है। चौथे वह परिषद् से अनुरोध करता है कि उनको स्पष्ट कर देना चाहिए कि उनको मनुष्यों की योग्यता के अनुसार राजनीतिक सत्ता प्रदान करने या छीन लेने का अधिकार है। ये दावे ग्रेगोरी के द्वारा 1076 ई. में किए गए दावों से कहीं अधिक बढ़ चढ़ कर हैं। तब उसने हेनरी को चर्च के विरुद्ध एक निश्चित एवं सुविचारित विद्रोह के कारण पाप का न्याय करने एवं उसे पदच्युत करने की धृष्टता के कारण धर्म बहिष्कृत किया था अब उसने हेनरी को जर्मनी के राजनीतिक मामलों के निर्धारण में पोप की सत्ता को स्वीकार न करने के कारण पदच्युत किया था। किन्तु यह ध्यान में रखना चाहिए कि जैसा हम देख चुके हैं ग्रेगोरी यह स्मरण दिलाने की सावधानी रखता है कि दोनों पक्षों ने उससे उनके बीच निर्णय करने की प्रार्थना की है तथा उसके निर्णय को स्वीकार करने की शपथ ली है। तथापि ग्रेगोरी की घोषणा के अन्तिम वाक्यांश एक विस्तृत एवं व्यापक शब्दावली में इस दावे को प्रस्तुत करते हैं कि चर्च को राजनीतिक सत्ता प्रदान करने अथवा छीनने का अधिकार है।

ग्रेगोरी के कार्य के तुरन्त बाद हनरी की कार्यवाही प्रारम्भ हो गई उसने ब्रिक्सन मे एक परिषद् बुलाई जिसने [illegible] डेब्राण्ड को पोप की गद्दी से पच्युत करने की घोषणा की। उन्होने अपने कार्य का औचित्य इस आरोप मे सिद्ध किया कि उसका निर्वाचन बल प्रयोग से पोप निकोलस के आदेश पत्र का उल्लंघन करते हुए हुआ था उसमे सम्राट की सहमति की भी आवश्यकता थी तथा साथ ही यह भी आरोप लगाया कि उसने चर्च का सम्पूर्ण व्यवस्था एव साम्राज्य की शान्ति को भग किया था। तब उन्होने रेवन्ना के आर्चबिशप ग्यूबर्ट को पोप चुना।[66]

फरवरी 1081 मे रोम की एक परिषद् मे ग्रेगोरी ने हनरी तथा उसके समर्थकों के धर्म-बहिष्कार का पुन नवीनीकरण कर दिया तथा मार्च मे उसने मेट्ज के बिशप हर्मन को सम्बोधित एक-दूसरे पत्र मे अपने कार्यों का विस्तारपूर्ण औचित्य प्रस्तुत किया। इस पत्र मे उसने अगस्त 1076 के पत्र मे वर्णित अनेक धाराओं को दोहराया है किन्तु इस पत्र मे सिद्धान्तों का अधिक वर्णन तथा निष्कर्षों की अधिक स्पष्ट अभिव्यक्ति की गई है। वह इस तक के खण्डन से प्रारम्भ करता है कि रोम के धर्माचार्य को राजाओं को धर्म बहिष्कृत करने तथा उनकी प्रजा को उनके प्रति निष्ठा की शपथ से मुक्त करने का अधिकार नहीं है क्योंकि वह धर्म प्रयोग एव धर्माचार्य के अधिकार के विपरीत है। वह ईसा द्वारा स्वर्ग तथा पृथ्वी दोनो स्थानों पर सन्त पीटर को बाँधने एव मुक्त करने का अधिकार देने वाले शब्दों को तथा ग्रेगोरी महान एव अन्य लेखकों के अनेक गद्यांशों को उद्धृत करता है तथा यह पूछता है कि जिसे स्वर्ग को खोलने एव बन्द करने का अधिकार है वह पृथ्वी पर निर्णय भी न कर सके यह कैसे सम्भव है। सभी पार्थिव सत्ताएं जो मनुष्य निर्मित हैं उस सत्ता के अधीन हैं जिसे स्वय ईश्वर ने बनाया है। उन गद्यांशों मे जिन्हें प्राय उद्धृत किया जाता है वह लौकिक सत्ता के अधम एव पापपूर्ण जन्म का उल्लेख करता है सम्राट तथा राजाओं का जन्म उन मनुष्यों से हुआ है जो अभिमान लूटखसोट विश्वासघात तथा हत्या में तथा शैतान के निर्देश मे अपने समकक्षीय लोगों के स्वामी बनने की असहनीय तथा अन्धी लालसा करते हैं।[67] इसमें कोई सन्देह नहीं किया जा सकता है कि ईसा के पुरोहित सभी निष्ठावानों के स्वामी तथा आचार्य हैं। वह कान्सटेन्टाइन की विनम्रता का उदाहरण प्रस्तुत करता है जो नाइस की परिषद् मे तुच्छतम बिशप से भी यह कहते हुए कि वह उनका निर्णय नहीं कर सकता नीचे बैठा था परन्तु उनको देवता बताते हुए उसने कहा था कि वे उसके निर्णय के अधीन नहीं किन्तु वह उनके निर्णयों के अधीन है। वह जिलेसियस के शब्दों को भी उद्धृत करता है जिनमे यह घोषणा की गई है कि पादरी का भार अधिक है क्योंकि अन्तिम निर्णय के दिन उनको ईश्वर के सम्मुख राजा का भी लेखा देना होगा। इस अधिकार के अन्तर्गत विभिन्न पोपों ने राजाओं तथा सम्राटों को पुराने समय मे धर्म बहिष्कृत अथवा पदच्युत किया था तथा वह विशेषतया पोप इनोसेंट प्रथम द्वारा सम्राट आर्केडियस की पदच्युति तथा पोप जकारियास प्रथम द्वारा अन्तिम मेरोविंजियन सम्राट की पदच्युति तथा सत एम्ब्रोज द्वारा थियोडोसियस के धर्म बहिष्कार का उल्लेख करता है। अन्त मे वह अनुरोध करता है कि किसी भी अच्छे ईसाई को राजा मान लेना अच्छा है बजाय इसके कि किसी क्रूर राजपुत्र को स्वीकार किया

जाए। बहुत थोडे राजा ऐसे हुए है जो वास्तव मे धार्मिक थे जबकि संत पीटर ने अपने उत्तराधिकारियो को अविच्छिन्न पवित्रता प्रदान की है। जिनको चर्च राजा या सम्राट का पद सौंपे उन्हे विनीत होना चाहिए उनको ईश्वर के प्रति सम्मान रखना चाहिए तथा न्याय करना चाहिए।[59]

ग्रगोरी सप्तम तथा हेनरी चतुर्थ के बीच अन्तिम विच्छेद हुआ ही था तथा ग्रगोरी ने रुडोल्फ को औपचारिक रूप से सम्राट माना ही था कि अक्टूबर 1080 ई० मे एल्सटर के युद्ध मे लगे घावो के कारण रुडोल्फ की मृत्यु होने से एक नई स्थिति उत्पन्न हो गई। इस परिस्थिति के बारे मे ग्रेगोरी का दृष्टिकोण 1081 ई० मे पासाऊ के बिशप आल्टमान (Altamann) को लिखे गए एक पत्र मे स्पष्टतया उल्लिखित है। अपने दावो तथा मांगो को कम करने के बजाय वह उनको अधिक स्पष्टतया व्यक्त करता है तथा उनको और भी अधिक बढा देता है। वह बिशपों से कहता है कि रुडोल्फ की मृत्यु के पश्चात् उस पर निष्ठा रखने वाले लगभग सभी लोगो ने हेनरी को स्वीकार करने की उसकी प्रार्थना को जो कि उसके पक्ष मे अनेक सुविधाए देने को राजी था। उन्होने आग्रह किया कि लगभग सभी इटली वासी उसके पक्ष मे है तथा यदि हेनरी इटली पर आक्रमण करे तो ग्रगोरी को जर्मनी से विशेष सहायता की आशा नही करना चाहिए। ग्रेगोरी ने इन आशकाओ तथा परामर्शों को निस्संकोच अस्वीकार कर दिया। स्पष्टतया उसके मन मे इसके अतिरिक्त कोई विचार नही था कि रुडोल्फ के स्थान पर दूसरा राजा चुना जाय तथा तात्कालिक खतरे का विचार करने के बजाय वह इसके बारे मे अधिक व्यग्र था कि निर्वाचित व्यक्ति योग्य हो। वह आग्रहपूर्वक कहता है कि रुडोल्फ के उत्तराधिकारी के निर्वाचन मे अनावश्यक शीघ्रता नहीं की जाए यह अधिक अच्छा है कि अयोग्य या अक्षम व्यक्ति को चुनने की अपेक्षा निर्वाचन मे कुछ देरी ही हो जाए। चर्च किसी ऐसे व्यक्ति को स्वीकार न करेगा जो कि उसके प्रति आज्ञाकारी तथा उपयोगी न हो। तदनन्तर वह निश्चित तथा महत्वपूर्ण शब्दो मे उस शपथ का निरूपित करता है जिसकी निर्वाचित राजा से वह अपेक्षा करेगा। उसे शपथ लेनी होगी कि वह संत पीटर तथा उसके प्रतिनिधि पोप ग्रगोरी के प्रति निष्ठावान रहेगा तथा पोप जो भी उसको आज्ञा देगा सच्ची आज्ञाकारिता के नाम पर वह निष्ठापूर्वक उसका पालन करेगा। वह पोप से चर्चों की व्यवस्था के बारे मे सम्राट कास्टेन्टाइन द्वारा चर्चों को दी गयी भूमि तथा राजस्व के सम्बन्ध मे दूसरो के द्वारा पोप की गद्दी को सौंप गए चर्चों एव उनको सम्पत्ति के बारे मे इस प्रकार समझौता करेगा कि वह धर्मद्रोह तथा अपनी आत्मा के विनाश के भय से सर्वथा मुक्त रहे। पहली बार जब वह पोप से भेंट करे तो वह स्वय सत पीटर एव पोप का सैनिक बन जाए। ग्रगोरी अन्य विस्तार की बातो को बिशपो के द्वारा तय करने को छोडकर आज्ञापालन एव निष्ठा की पूरी और सुनिश्चित प्रतिज्ञा पर बल देता है।[59]

ये वाक्य ग्रेगोरी द्वारा कम से कम जर्मन साम्राज्य के बारे मे अब तक किए गए दावो से अधिक विस्तृत दावो के परिचायक है क्योंकि उनके द्वारा अपेक्षित शपथ के अन्तिम अंश का अभिप्राय सम्भवत यही माना जा सकता है कि राजा अपने को रोमन धर्मपीठ का सामन्त मानता है। और यदि यह अनिश्चित भी हो कि उनका यही सुनिश्चित अर्थ

अभिप्रेत अर्थ था तो भी सम्पूर्ण शपथ आज्ञा पालन के चरम दावे की परिचायक है।

जर्मनी में दोनों पक्षों की वार्ता शीघ्र ही टूट गई तथा हनरी के विरोधियों ने साल्म के हमन (Hermann of Salm) को राजा चुना और वह 26 दिसम्बर 1081 ई को अभिषिक्त हुआ। इस समय से मई 1085 ई में ग्रेगोरी सप्तम की मृत्यु के समय तक ऐतिहासिक घटनाओं का विवरण हम यहाँ नहीं देंगे क्योंकि इन वर्षों के नाटकीय तथा महान घटनाओं से परिपूर्ण होने पर भी साम्राज्य तथा पोप के सम्बन्धों के बारे में कोई नया सिद्धान्त प्रकाश में नहीं आया।

इस प्रकार हमने ग्रेगोरी सप्तम के लौकिक एवं धार्मिक सत्ता के सम्बन्धों के बारे में दावों के स्वरूप एवं सिद्धान्तों पर जैसे वे ऐतिहासिक घटनाओं एवं उनके अपने ही शब्दों में व्यक्त होते हैं विचार किया किन्तु हम उनके वास्तविक एवं स्थायी महत्त्व का मूल्यांकन अधिक पूर्णता से कर सकें इसके लिए अब हम तत्कालीन एवं बाद के वर्षों के साहित्य में उनकी आलोचना तथा व्याख्या का परीक्षण करना चाहिए।

सन्दर्भ

1 Cf Vol I pp 148 d 255
2 St ph n of To na S mma p 198
3 Cf p 9
4 Leo IX Ep 100 13
5 Cf Vol pp 88 89
6 P t Dam n Ep Bk III 6
7 Id Op c 23 1
8 Cf pp 45–48 d I pp 206 209
9 Humbert Ad c S m c 9 M G H L b De L t I i
10 S egf d f M i tz M B mb g n a p 65
11 Id id p 69
12 Greg R g t m 9 ( )
13 देखें भाग 2 अध्याय 1 ।
14 G g VII Reg trum 35
15 Id d 5
16 Id d 18
17 Id d i 63
18 Cf ol pp 282 287
19 Lambe t f H rsf ld A ( ) 1073
20 G g ry VII Regist 9
21 Id d 21
22 देखें भाग 2 अध्याय 2 ।
23 Greg y VII R gistrum i 39
24 Id d 65
25 Id d 30
26 Id d 31
27 Id d 7
28 Id d i 10
29 Lambe t A n l 1076 (M G H S S 1 5 p 241)
30 M G H Leg n Se t IV C n t tuti 1 i 58
31 Id d 60
32 Id id 61
33 G g y VII Reg i 10 ( ).
34 M G H Leg m Sect IV C t ol 6
35 Id d 63
36 Gr gory VII Reg i ..
37 Id d R g 3
38 B rthold An 1 s a 1076
39 M B mbc g pp 110 111
40 Gr g ry VII R g trum i 12 a
41 Greg ry VII Reg trum 1.2
42 Id d 14 cf p 01
43 Id d 51
44 Id d i 24
45 Id d i 23

46 Id id v 14 a
47 Id v 15
48 Id 1
49 Id id vi 17 a
50 Id Ep stolae Collectae 25
51 Gregory VII Ep stoloe Collecta 26
52. Mr Z Brooke of Caius College Cambridge tells me that he has some d ubts about the d te of this letter
53 Gregory VII Ep stol e Collecta 31
54 Gregory VII Epistolae Collectae vii 3
55 Greg ry VII Epi tolae Collect e v i 14 a
56 M G H Legum Sect IV Consti tut nes vol i No 70
57 For a f ll d scuss on of the s gn fi cance of the phrase of vol i pp 94–98
58 Greg ry VII Reg strum ii 21
59 Greg VII Reg ii 26

द्वितीय अध्याय

ग्रेगोरी सप्तम के कार्यों एव दावो का विवेचन-1

हम पिछले अध्यायो मे यह बता चुके हैं कि ग्रेगोरी सप्तम के पदारोहण से पूव भी सुधारवादी दल के पादरियो के लेखो म प्राय एसे मवतव्यो का पूणत अभाव नहीं है जो इस परिकल्पना की ओर सकेत करत हो कि चच अथवा पोप के पास एक ऐसी सत्ता थी जो कुछ अर्थों म सभी लौकिक सत्ताओ से सर्वोच्च थी किन्तु यह कहना कठिन है कि यथाथ रूप म इन लेखको द्वारा इन शब्दो को क्या निश्चित अथ प्रदान किया गया है। ग्रेगोरी सप्तम के पदारोहण के साथ यह सब बदल गया जसा हम देख चुके हैं उसने न केवल सामान्य सिद्धान्तों को व्यक्त ही किया अपितु उनको निश्चित एव सुस्पष्ट कार्यों म परिणत किया या सभवत यह कहना अधिक उचित होगा कि उसने कुछ ऐसे काय किए या करने की धमकी दी जिनम कुछ सामान्य सिद्धान्त अन्तर्निहित से थे तथा जिनके द्वारा अनुकरण करने वाले कुछ सामान्य सिद्धान्तो एव नीतियों के बारे मे आशिक रूप से अभिज्ञ हो गए। तथापि हमे यह नहीं मानना चाहिए कि ग्रेगोरी के मस्तिष्क मे भी ये एक तार्किक रूप से विकसित तथा सामजस्यपूण व्यवस्था के रूप मे थे न हम यह मानना चाहिए कि वे व्यक्ति भी जो उसके दृढ तथा अविच्छिन्न समथक थे वास्तव मे उसके सिद्धान्तो का सभी अर्थों म पूणतया अनुकरण करते थे। हम न तो तेरहवीं तथा चौदहवीं शताब्दी के उग्रवादी पोपपक्षीय सिद्धान्तो की ओर न तेरहवीं शताब्दी की तकपूण विचार प्रणाली को ग्यारहवी शताब्दी म ढूढने की गलती करनी चाहिए। अत अब हम ग्रेगोरी सप्तम के कार्यों तथा दावो की समकालीन आलोचना या समथन का न्यूनाधिक रूप म अध्ययन करना चाहिए तथा यह जानने का प्रयास करना चाहिए कि धार्मिक एव लौकिक सत्ता के सम्बन्धो के विषय म क्या कल्पनाए सघष के दौरान विकसित हुई थीं।

इसके प्रारम्भिक अवस्था का बहुत थोडा साहित्य उपलब्ध होता है किन्तु सौभाग्य से कान्सटेनस के विद्यालय के प्रधान अधिकारी बर्नाड तथा क्रानिकल के लेखक किन्हीं बर्नाल्ड तथा अदलबट के बीच हुए पत्राचार मे यह सुरक्षित है। यह पत्राचार 1076 ई का माना जाता है तथा सबसे लेखक यद्यपि उस समय भी ग्रेगोरी के समथक थे, तथापि

इसम उनका स्वर अपने उत्तरकालीन लेखो स जिनका हम अभी उल्लेख करेंगे कहीं भिन्न है। अदलबट तथा बर्नाड ने बर्नाड को ग्रेगोरी सप्तम द्वारा कुछ व्यक्तियो को धर्म बहिष्कृत करने क स्वरूप के औचित्य के बारे म सम्मति लने को लिखा है जिन व्यक्तियो को वे publicos et contumaces apostolicae sedis prescriptores कहते हैं जिसका सम्भवत अर्थ है जिन्होने 1076 ई की वाम्स की परिषद् म भाग लिया है साथ ही वे धर्म विद्रोही तथा धर्म-बहिष्कृत व्यक्तियो द्वारा किए गए सस्कारो क बारे म भी उसकी राय पूछते हैं। हम बर्नाड के उत्तर का विस्तृत विवेचन नहीं कर सकते किन्तु उसम हमारे काम के कई महत्त्वपूर्ण सूत्र उपलब्ध होते हैं।

बर्नाड पहल यह कहता है कि पोप का पद सर्वोच्च है तथा उसकी सर्वोच्चता उस पर बठने वाल व्यक्ति की योग्यता एव अयोग्यता पर निभर नहीं है यद्यपि रोम का धर्मासन सर्वोच्च पद है तथापि पोप ने सर्वदा अपनी प्रजाओं को प्रबोधन की अनुमति दे रखी थी क्योकि वे विधि के शासन के अधीन तथा शास्त्रानुसार रहना चाहते थे। वह यह नहीं कहता कि ग्रेगोरी की काय प्रणाली अनियमित है किन्तु उसका विषय विवेचन यह सुझाता है कि इसम उसे थोडा सदेह था।[1] वह ग्रेगोरी के पोप पद के कायकाल के बारे मे इस आपत्ति पर भी विचार करता है कि उसने इस शपथ स अपने को बांध लिया था कि वह सम्राट की स्वीकृति के बिना उस पद को स्वीकार नही करेगा। बर्नाड इस कथन का खण्डन नहा करता किन्तु कह देता है कि यह सच भी हो तो भी रोमन चच को स्वतत्र चुनाव के अपने अधिकार से वचित नहीं किया जा सकता।

बर्नाड तथा अदलबट बर्नाड को प्रेषित अपने उत्तर में उसका मत स्वीकार कर लते हैं कि पोप की प्रजाएँ उसे प्रताडित कर सकती हैं जसा पीटर को पाल न किया था तत्पश्चात् वे वाम्स और रोम की परिषदो की महत्त्वपूर्ण कायवाही का विवरण देते हैं जिसका हम पहले उल्लेख कर चुके हैं। वे वाम्स की कायवाही की कठोरतम शब्दों में निन्दा करते हैं किन्तु यह उल्लेखनीय है कि वे इस प्रश्न के बारे मे स्पष्ट नहीं है कि क्या पोप विधिवत् आहूत चच की परिषद् के निर्णयाधीन है अथवा नहीं। व वास्तव म अनक प्रामाणिक व्यक्तियो क मता को उद्धत करत हैं जिसमे यह सिद्ध होना है कि रोम का पोप किसी क निर्णयाधीन नहीं है विशेषत रोम की धर्मसभा की कायवाही का उल्लेख करते है जिसने पोप सिम्माकस (Symachus) के विरुद्ध लगाए गए आरोपो का विचार करने से अस्वीकार कर दिया था तथा उसको ईश्वरीय निर्णय के लिए छोड दिया था किन्तु वे अपराध के मामले को अपवाद मानते प्रतीत होते हैं और व इस पर बल देते हैं कि ग्रेगोरी सप्तम ने बारम्बार इस बात से सहमति प्रकट की थी कि रोम मे अथवा अन्य किसी स्थान पर एक परिषद् हो जो उसकी नियुक्ति तथा आचरण की परिस्थितिया पर विचार करे तथा यदि वह पद-त्याग के योग्य सिद्ध हो तो वह पोप की गद्दी स उतर जाएगा यह विदित नहीं होता कि उनके द्वारा यह वक्तव्य किस आधार पर दिया गया था। इसकी पुष्टि करन वाला कोई भी अन्य प्रमाण नहीं है। हमारे लिए इसका महत्त्व इस तथ्य में है कि जो व्यक्ति ग्रेगोरी के समथक थे उन्होंने एसा कहा था। लखक तत्पश्चात् 1076 ई म रोम की परिषद् की कायवाही का विशेषत हनरी चतुर्थ के धर्म-बहिष्कार तथा पदच्युति

का वर्णन करते हैं तथा यह मानते हैं कि इस धर्म बहिष्कार को वैधानिक रूप मे लागू करने मे कोई संशय नहीं हो सकता है क्योंकि उसे अनेक बार चेतावनी दी गई थी तथा उसके विरुद्ध कार्यवाही स्थगित की गई था।[3] इन लेखकों की बाद की सम्मतियों पर हम आगे विचार करेंगे।

दूसरी रचनाएं जिन पर हम अब विचार करेंगे सभी 1080 ई० मे हेनरी के दूसरी बार धर्म बहिष्कार एवं पदच्युति के बाद के काल की तथा उसी वर्ष में ब्रिक्सेन की धर्म सभा तथा हेनरी तथा उसके साथियो द्वारा विरोधी पोप के रूप मे ग्यूबर्ट के निर्वाचन के बाद की हैं। सम्भवतः इसके थोड़े ही समय बाद लिखे गए दो ग्रन्थों पर विचार करना सुविधाजनक होगा जो कि दोनों पक्षों के उग्रवादी प्रतिनिधियों साल्जबर्ग के आर्च बिशप गेबहार्ट तथा ट्रीयर के बेनरिख के मतों को अभिव्यक्त करती है।

गेबहार्ट एक अत्यन्त उदार किन्तु हेनरी से संघर्ष मे ग्रेगोरी सप्तम के कट्टरतम अनुयायियों मे से था तथा उसने मेत्ज के बिशप हर्मन को सम्बोधित एक पत्र अथवा लेख में कुछ उन विचारों को रखा है जो उसे सबसे महत्वपूर्ण प्रतीत हुए। वह संघर्ष का मूल मुख्यतः चर्च के उस नियम के उल्लंघन मे देखता है जो निष्ठावान व्यक्तियों को निर्देश देता है कि उन लोगों की संगति त्यागनी चाहिए जो धर्म बहिष्कृत हैं विशेषतः उनकी जो रोम द्वारा धर्म बहिष्कृत किए गए हैं।[4] और इसके लिए उन लोगों की त्रुटि को भी उत्तरदायी बताता है जो कि यह स्वीकार नहीं करते कि धर्म बहिष्कार का दण्ड चाहे मनुष्य उसे न्यायपूर्ण माने अथवा अन्यायपूर्ण जब तक सक्षम पदाधिकारी द्वारा समाप्त नहीं किया जाए बाध्यकारी था[5] और इसका उल्लेख वह विशेषतः 1080 ई० मे रोमन परिषद् द्वारा घोषित धर्म बहिष्कार के संदर्भ मे करता है।[6] तत्पश्चात् वह जून 1080 ई० मे ब्रिक्सेन की धर्मसभा द्वारा ग्रेगोरी सप्तम की पदच्युति तथा विरोधी पोप की नियुक्ति की चर्चा करता है तथा यह मानता है कि यह कार्य इंजील तथा धर्मप्रतिनिधियों के इस सिद्धान्त के खिलाफ है कि पोप किसी मनुष्य के निर्णयाधीन नहीं है।[7] फिर वह उन लोगों के तर्कों का विवेचन करता है जो यह कहते हैं कि वे हेनरी के प्रति निष्ठा की शपथ का उल्लंघन नहीं कर सकते तथा आग्रह पूर्वक कहता है कि यह स्पष्ट है कि जो शपथ गलती से ली गई हो या जिसमे कोई बड़ी भारी गलती निहित हो उसका पालन नहीं करना चाहिए।[8] गेबहार्ट तदनन्तर हेनरी के समर्थक पादरियों के विषय मे विचार करता है तथा प्रश्न करता है कि क्या यह पादरी के पद के अनुकूल आचरण है कि वे अपनी सम्मति एवं सहायता से एक ईसाई राजा की सहायता मनुष्यों को ईसाई विधान का उल्लंघन करने के लिए विवश करने को श्रद्धावानों को पीड़ा देने को ईश्वर के मन्दिरों पर कब्जा करने तथा संत पीटर के सेवकों की हत्या द्वारा धर्म-स्थानों को दूषित करने के लिए करें। वे कहते हैं कि वे संत पीटर के भक्त हैं किन्तु क्या यह उचित है कि वे संत पीटर के धर्मासन के अधिकारी पर सक्रिय आक्रमण करें कि उसने राजा एवं अनेक बिशपों को गहणा करते हुए एक अभूतपूर्व तथा अन्यायपूर्ण दण्डाज्ञा की घोषणा की थी। वह उनसे यह विचार करने का आग्रह करता है कि चाहे पोप का कार्य अनावश्यक रूप से कठोर हो तो भी निष्ठिक बिशपों के लिए उचित यही था कि वे धार्मिक प्रक्रियान्तगत ही कोई उपाय करने के लिए राजा को राजी करते

परन्तु इस प्रकार के साधनो से नहीं जो हत्या एव विनाश के द्वारा चच के कानूनो को भग करें।

अन्त मे वह अनुरोध करता है कि उनके लिए पोप के काय की कठोरता एव उसकी अभूतपूवता की शिकायत करते हुए अपने काय का औचित्य सिद्ध करने का प्रयत्न भी निरथक है क्योंकि वे स्वय ही समस्त अशान्ति के कारण थे। उनका वाम्स का काय ही (1076 ई) जिसम उन्होंने ग्रगोरी की पदच्युति का दण्ड घोषित किया था इस पूरे सकट का मूल कारण था पोप ने तब उनके विरुद्ध किसी धम बहिष्कार की घोषणा नहीं की थी अपितु उनके द्वारा ही उनके प्रति आज्ञा पालन को समाप्त किया गया था।[9] गेबहाट के निणय के अनुसार यही अशान्ति मूल रूप म प्रारम्भ हुई तथा इसका कोई भी औचित्य नहीं था।[10]

ये तक हमारे लिए विशेषत रोचक हैं क्योंकि ये गेबहाट के मत को व्यक्त करते हैं—तथा यह मत ऐसे उदार व्यक्ति का प्रतीत होता है जो ग्रेगोरी सप्तम के प्रत्येक काय का प्रत्येक दशा मे समथन करने को तयार नहीं है—कि सघष उतना ग्रेगोरी के क्रातिकारी नवाचारों के कारण उत्पन्न नहीं हुआ जितना कि पोप का निणय करने एव उसे पदच्युत करने म हेनरी तथा उसके समथक बिशपो के प्रयत्नो के रूप म अधिक क्रातिकारी कार्यों के कारण। इस प्रकार के प्रयत्न एव उनके परिणामो को देखते हुए गेबहाट इस असगत नहीं मान सकता था कि उन शपथो को जो मनुष्यो को हेनरी के आज्ञापालन के लिए बाध्य करती थी अवधानिक मानना चाहिए तथा उनको औपचारिक रूप से समाप्त किया जाना चाहिए।

यदि हम साल्जबग के गेबहाट क लेख मे ग्रेगोरी सप्तम के समथन मे सयत मत का एक प्रतिनिधिक चित्र उपलब्ध है तो हम हेनरी चतुथ के अनुग्र समथको की स्थिति के सम्बन्ध में एक सशक्त वक्त य ट्रीयर के वनरिख क एक पत्र मे मिलता है जो समवत अक्टूबर 1080 ई तथा अगस्त 1081 ई० के बीच वरडन के बिशप थियोडोरिक के नाम लिखा गया था। यह ध्यान रखने योग्य है कि यह पत्र एक ऐसे व्यक्ति द्वारा लिखा गया है जो अभी भी ग्रेगोरी को पोप स्वीकार करता था तथा जिसने उसके पक्ष का समथन करने के कारण बहुत हानि उठाई थी।[11] वरडन का थियोडोरिक उनम से था जिनकी स्थिति प्राय अस्थिर रही थी। कभी ग्रेगोरी के पक्ष म होता था कभी हेनरी के पक्ष म।

वनरिख अपने पत्र का प्रारम्भ ग्रेगोरी के उच्च चरित्र तथा योग्यताओं को मानते हुए करता है और यद्यपि वह उस पर लगाए गए हिंसा तथा महत्त्वाकाक्षा के आरोपो का भी कुछ विस्तार से वणन करता है वह इन आरोपो की सत्यता के बारे म स्वय कुछ भी नहीं कहता क्योंकि उनका उसे व्यक्तिगत ज्ञान नहीं था।[1] तथापि वह उसके द्वारा असयम अर्थात् पादरियों की शादी के विरुद्ध किए गए उपायों की उद्देश्यकारिता की कड़ी निन्दा करता है वह उस पर अराजकीय वग को पादरियों के विरुद्ध उकसाने तथा इस प्रकार चच की सम्पूण व्यवस्था को भग करने का आरोप लगाता है।[13] किन्तु यह केवल प्रस्तावना मात्र है।

फिर वह ग्रेगोरी द्वारा हेनरी को पदच्युत करने तथा रुडोल्फ की नियुक्ति को अनुमोदित

अनिम पन्युति तथा विरोधी पोप के निर्वाचन के तुरन्त बाद के समय के हैं किन्तु अधिकांश सुरक्षित पुस्तिकायें तथा लेख कुछ वर्षों के बाद लिखे गये थे।

इनमें से पहले जिस पर हम विचार करेंगे सम्भवत 1084 ई में लिखा गया था जब हेनरी चतुर्थ ने रोम पर कब्जा कर लिया था। वह किसी पीटर क्रसस (*Peter Crassus*) की रचना है जो रवेन्ना में रोमन कानून का अध्यापक रहा होगा कम से कम लेखक कानूनी ज्ञान का अच्छा प्रदर्शन करता है तथा अपनी स्थिति ऐसे व्यक्ति के रूप में प्रदर्शित करता है जो यह दिखाना चाहता हो कि हेनरी का पक्ष कानूनों पर आधारित है अब यदि ग्रेगोरी सप्तम रोमन कानून की सत्ता को मानने में अस्वीकार कर दे तो वह हेनरी को एक ग्रन्थ भेजने का प्रस्ताव करता है जिसमें जैसा वह कहता है कि ग्रेगोरी महान ने दोनों कानूनी व्यवस्थाओं अर्थात् नागरिक तथा धार्मिक कानूनों को चर्च के उपयोग के लिये संग्रहीत किया था।[18]

वह मानता है कि सम्राट ने ही चर्च को शान्ति प्रदान की है तथा ग्रेगोरी ने शांति को भंग किया है[19] तथा वह हेनरी को राय देता है कि एक सभा बुलाए जिसमें ग्रेगोरी को उपस्थित होने के लिये बुलाया जाये।[20] वह ग्रेगोरी पर जालसाजी होने का आरोप लगाता है तथा जो न्यायाधीश के रूप में उपस्थित हों उनसे उस पर हेनरी के विशेषाधिकारों से वंचित करने तथा उस दंड के लिए लौकिक सत्ता को सौंप देने की अपील करता है।[21] वह हेनरी को धर्म बहिष्कृत करने तथा उसके राजत्व के विरुद्ध षडयन्त्र करने के ग्रेगोरी के कार्यों को कानून के विरुद्ध बताता है तथा सेक्सनों से आग्रह पूर्वक कहता है कि हेनरी ने राज्य अनुवंशिक उत्तराधिकार के कारण पाया है तथा यदि किसी साधारण व्यक्ति को उसके पूर्वजों की सम्पत्ति के स्वामित्व से वंचित करना न्यायोचित नहीं है तो एक राजा के राज्य धारण पर आपत्ति उठाना जो कि उसने उत्तराधिकार में पाया था न्यायानुकूल नहीं माना जा सकता। इसलिए वह दृढ़ता पूर्वक कहता है कि न तो वे न ग्रेगोरी ही हेनरी के राज्याधिकार का निर्णय करने के लिए बैठने का दावा करने के अधिकारी हैं जोकि उसने अपने पिता से प्राप्त किया है तथा ईश्वरीय नियुक्ति द्वारा पाया है। राज्य के ऊपर आनुवंशिक अधिकार की यह मान्यता ध्यान देने योग्य है राजनैतिक सिद्धान्त के इस उत्तरकालीन विकास के पूर्वानुमान के रूप में रोचक है किन्तु यह पर्याप्त रूप में स्पष्ट है कि रोमन कानून से इसका उतना ही कम सम्बन्ध है जितना प्रारम्भिक मध्य युग के परम्परागत सिद्धान्तों से। वह मनुष्यों को निष्ठा की शपथ भंग करने तथा दैवी अधिकारों के अन्तर्गत राजाओं को देय सम्मान तथा आदर प्रदर्शित न करने के लिए प्रोत्साहित करने की दुष्टता पर बल देता है तथा सेक्सनों को हेनरी के न्याय के आगे आत्मसमर्पण करने तथा उससे दया की भीख माँगने की राय देकर अपने वक्तव्य को समाप्त करता है।[23]

यह ग्रन्थ रोमन कानून के विशद ज्ञान का प्रतिनिधित्व करने के आडम्बर के बावजूद तर्कों के रूप में किसी भी महत्वपूर्ण वचन से युक्त नहीं है। हमने पिछली पुस्तक में बारहवीं शताब्दी में बोलोग्ना (Bologna) के वकीलों के राजनीतिक सिद्धान्तों का विवरण प्रस्तुत किया है तथा उनके ग्रन्थ तथा पीटर क्रसस की भावशून्य हठधर्मिता में कोई

सम्बन्ध स्थापित कर पाना कठिन ही होगा।

हमें हेनरी के अधिक कट्टर समर्थकों की स्थिति के बारे में एक अधिक गम्भीर कथन एक अनाम ग्रन्थ में उपलब्ध होता है जो भी उसी काल की रचना समझी जाती है। इसमें हम तत्सगत कारण मिलते हैं जोकि कुछ सीमा तक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित हैं।

वह मूलभूत प्रश्न जिसकी ओर लेखक प्रवृत्त होता है पोप-पद हेतु निर्वाचन के निर्धारण में सम्राट के अधिकार का स्थान है। वह रोम के चर्च के अन्य सब चर्चों पर प्राधान्य से प्रारम्भ करता है तथा एक हस्तलिखित प्रति में यह कथन भी सम्मिलित है कि रोम सबका निर्णय करता है किन्तु सिवाय पोप के इस निर्वाचन के मामले के जो कि अन्याय पूर्ण है तथा साम्राज्यिक गरिमा के प्रतिकूल है या किसी विवादास्पद निर्वाचन के मामले में उसका कोई निर्णयकर्ता नहीं है।[25] फिर वह अनेक ऐसे मामले प्रस्तुत करता है जिनमें जैसा कि वह मानता है अनेक प्रतिद्वन्द्वियों के बीच सम्राट ने निर्णय किया कि कौन न्याय संगत पोप माना जाय। ये उदाहरण 377 ई० में डमसस प्रथम के निर्वाचन से लेकर 963 ई० व 964 ई० में ओटो प्रथम के बाद तक से लिए गए हैं। लेखक अपनी परिगणना को यह कहकर समाप्त करता है कि ओटो के द्वारा पोप के बाद रोम की सेनेट व जनता ने शपथ ली कि वे कभी या उसके पुत्र की सम्मति के बिना भविष्य में किसी पोप का निर्वाचन नहीं करेंगे। वह तत्पश्चात् वर्णन करता है कि सम्राट हेनरी तृतीय ने कुछ पोपों को पदच्युत करके यही नियम बनाया तथा उसने हिल्डब्रैंड को बाध्य किया जो उस समय उपपादरी था कि वह यह शपथ ले कि उसकी स्वीकृति के बिना Nunquam se de Papatu Intromissurum वह पोप निकोलस द्वितीय तथा उसकी परिषद् की पोप के निर्वाचन के बारे में आज्ञप्ति से उस अंश का वर्णन करता है जो सम्राट का उल्लेख करता है तथा कहता है कि इस आज्ञप्ति द्वारा जो सभी रोमन पादरियों एवं जनता की स्वीकृति से की गई थी यह व्यवस्था कर दी गई थी कि पोप के निर्वाचन में जो कोई उपद्रव खड़ा करेगा या हेनरी अथवा उसके पुत्र की सहमति बिना पोप बना दिया जाएगा उसे पोप नहीं समझना चाहिए किन्तु शैतान और धर्म त्यागी समझना चाहिये। वह विशेषतः यह कहता है कि हिल्डेब्रैण्ड ने इसकी शपथ ली तथा आज्ञप्ति को अनुमोदित किया था।[26]

इस प्रकार विगत के बारे में विचार करके तथा पोप की नियुक्ति के बारे में सम्राट के कुछ अधिकारों के दावे के ऐतिहासिक दृष्टान्त को प्रस्तुत करके लेखक स्वयं के अपने युग की परिस्थिति का विवरण प्रस्तुत करता है। वह आरोप लगाता है कि हिल्डेब्रैण्ड ने पोप का पद एक रोमन सामन्त चिंचियस (Chinchius) तथा उसके द्वारा बनाए गए दल की सहायता से प्राप्त किया था। हेनरी ने पोप-पद के इस अविग्रहण का विरोध करने के लिए तथा उसे पोप की गद्दी से उतरने का आदेश देते हुए दूतों को भेजा था किन्तु उसका कोई प्रभाव नहीं हुआ और अंत में केवल युद्ध पदच्युत किया गया... तथा ... के बाद हेनरी रोम पर कब्जा करने में समर्थ हुआ तथा उसने प्राचीन परम्परा के अनुसार क्लेमेण्ट का पोप-पद पर स्थापन किया तथा उसे अभिषिक्त हुआ।

वह यह बताते हुए उपसंहार करता है कि रोमन सम्राटो ने कुछ व्यक्तियो को पोप के अयोग्य बताकर स्वीकार नहीं किया था कुछ को पदच्युत किया था कुछ को स्वय नियुक्त किया था तथा अन्यो को नियुक्त करने की आज्ञा दी थी।[27]

हम इस लेख म तर्कों की दो सारणियो को जो असमान मूल्य की है देख सकते हैं। हिल्डेब्राण्ड के निर्वाचन के बारे म वह जो बातें कहता है वे साम्राज्यिक दल की गप से अधिक कुछ भी नहीं है। दूसरी ओर पोप के निर्वाचन म सम्राट के स्थान के प्रश्न का विवेचन भलीभांति किया गया है तथा साम्राज्यिक दावे की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का उचित बोध व्यक्त करता है।

विडो के जो बाद म ओसनाबर्ग (Osnaburg) का बिशप बना एक ग्रन्थ के दुर्भाग्य से केवल कुछ अश ही प्राप्त होते हैं। लगभग 1118 ई के आसपास यह संकलित किया गया प्रतीत होता है तथा यह मूल रूप मे रेवन्ना के ग्यूबर्ट के विरोधी-पोप के रूप में निर्वाचन के समर्थन मे लिखा गया है।[8] वह इन आधारो पर इसका समर्थन करता है, *प्रथम राजा का पोप के निर्वाचन म वध स्थान और दूसरा ग्रगोरी सप्तम की पदच्युति का न्यायसगत होना।* वह यह मानता है कि चर्च की सुदीर्घ परम्परा से किसी भी पोप के पदग्रहण से पूर्व सम्राट की राय लेनी चाहिये। वास्तव म विडो स्वीकार करता है कि प्रारम्भिक अवस्थाओ म इस प्रकार का कोई पद्धति नहीं थी किन्तु कान्सटेंटाइन के धर्म परिवर्तन तथा चर्च के समृद्ध होने के साथ साथ जब पोप का पद मनुष्यो की महत्वाकांक्षाओं का केन्द्र बन गया तथा उत्तराधिकार के प्रश्न पर भ्रष्टाचारी तथा हिंसक भगड़े होने लगे तो यह आवश्यक पाया गया कि रोम के राजा हस्तक्षेप करें ताकि निर्वाचन नियमित तथा धार्मिक नियमो के अनुरूप हो सके। तब से यह प्रथा हो गई कि जब एक पोप का निर्वाचन होता था तो उसका अभिषेक तब तक नहीं होता था जब तक कि राजा को उसकी सूचना नहीं दी जाती तथा वह इससे सन्तुष्ट नहीं हो जाता कि यह निर्वाचन विधिवत् हुआ है तथा जब तक कि वह अभिषेक के बारे मे अपनी अनुमति नहीं दे देता।[9] फिर वह अपनी मान्यता को सिद्ध करने के लिए अनेक दृष्टान्त प्रस्तुत करता है तथा यह प्रदर्शित करता है कि राजा का निर्वाचन मे स्थान सदा स्वीकृत हुआ है तथा कभी भी उसकी निन्दा नहीं हुई है।[30]

विडो यह कहने की सावधानी रखता है कि इसका अर्थ यह नहीं कि राजा को कोई स्वेच्छाचारी अधिकार इस मामले म प्राप्त है *केवल पादरियो एव जनता की सहमति से* ही उसे पोप को नियुक्त करने का अधिकार है वह किसी ऐसे व्यक्ति की नियुक्ति नहीं कर *सकता जिसके बारे म कोई सिद्धान्तगत विरोध हो तथा वह किसी ऐसे अधिकार का दावा* नहीं कर सकता जो सिद्धान्तो के अनुसार पोप के अधिकार म है। इस प्रकार विडो शास्त्रीय नियम की व्याख्या करता है कि अयाजको को धार्मिक वस्तुओ के निपटारे का कोई अधिकार नहीं है। तथापि वह कहता है कि राजा वास्तव मे अयाजक नहीं है क्योंकि अभिषेक किए जाने के कारण उसका भी पुरोहित के पद म योगदान है।[31]

विडो के ग्रन्थ का दूसरा उद्धरण रोमन राजाओ के धर्म-बहिष्करण का वर्णन करता है। वह बलपूर्वक कहता है कि हिल्डेब्राण्ड से पूर्व किसी पोप ने राजा को धर्म बहिष्कृत

नहीं किया है चाहे वह चर्च के विरुद्ध किसी गंभीर अपराध का दोषी ही क्यों न रहा हो। इसका कारण यह नहीं था कि उनको मनुष्यों के समर्थन को खोने का भय था अपितु यह था कि वे संतों के आदेश का ध्यान रखते थे कि सभी कार्य धार्मिक उन्नति के लिये ही होने चाहिए। वह कहता है कि हिल्डेब्राण्ड तथा हनरी चतुर्थ के संघर्ष का परिणाम गृह युद्ध से भी अधिक असहनीय है अत वह हनरी को धर्म बहिष्कृत करने के कार्य को अन्यायपूर्ण तथा अधर्मपूर्ण मानता है।[32] वह यह भी सिद्ध करने का प्रयत्न करता है कि संत एम्ब्रोस का सम्राट थियोडोसियस के विरुद्ध कर्म वास्तव में धर्म बहिष्कार का मामला नहीं था।[33]

तीसरा उदाहरण हनरी की प्रजाओं को निष्ठा या शपथ से मुक्त करने से सम्बन्ध रखता है। विडो मानता है कि चाहे हनरी का धर्म-बहिष्कार न्याय संगत हो तथा उचित व्यक्ति द्वारा घोषित भी हो तो भी उसकी प्रजाओं का शपथ से मुक्त करने के दावे का कोई औचित्य नहीं है। जिन्होंने यह शपथ ली है वे अपने को मिथ्या शपथ के दोषी बनाए बिना उसको तोड़ नहीं सकते तथा वह व्यक्ति जो मनुष्यों को शपथ भंग करने की स्वीकृति एवं आदेश देता है मिथ्या शपथ का दोषी है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हनरी की प्रजाओं को शपथ से मुक्त करने के कारण हिल्डेब्राण्ड ने ईश्वरीय कानून का तथा चर्च की व्यवस्था का उल्लंघन किया है शांति के विनाश का कारण बना है षड्यन्त्र तथा फूट को उकसाया है तथा चर्च और साम्राज्य पर असह्य विपत्तियों को थोप दिया है।[34] अत वह निष्कर्ष निकालता है कि यह यथोचित ही था कि हिल्डेब्राण्ड को पदच्युत किया गया क्योंकि उसने पोप पद की सत्ता का दुरुपयोग किया है धार्मिक सत्ता एवं राजसत्ता को एक दूसरे का विरोधी बना दिया है क्योंकि जब चर्च के दो अध्यक्ष एक दूसरे से संघर्ष में रत हों तो शरीर या आत्मा किसी का भी कल्याण नहीं हो सकता।[35]

ये ग्रन्थ विशेषतया दूसरा व तीसरा बहुत स्पष्टतया उन व्यक्तियों के मुख्य सिद्धान्तों को प्रकट करते हैं जो 1080 ई० के धर्म भंग मतभेद के पश्चात् हनरी चतुर्थ के समर्थक थे। इन तर्कों की प्रमुख शक्ति निश्चित रूप से पोप-पद एवं साम्राज्य के ऐतिहासिक सम्बन्धों के आधार में तथा उन अनेक दृष्टान्तों में है जिनमें वह यह सिद्ध करने का प्रयत्न करता है कि पोप के निर्वाचन में राय देने का तथा विवादास्पद निर्णयों में हस्तक्षेप का अधिकार राजा को रहा है। तथापि ओसनाबर्ग के विडो द्वारा ट्रीयर के वेनरिच की इस मान्यता को दोहराया जाना भी कम महत्त्व का नहीं कि चाहे राजा को धर्म-बहिष्कृत करना पोप के अधिकार में हो परन्तु उसके साथ उसका पदच्युत करना या उसकी प्रजा को निष्ठा की शपथ से मुक्त करना कोई अधिकार नहीं है।

अब हमें ग्रेगोरी सप्तम के समर्थकों के तर्कों की ओर भी ध्यान देना चाहिये तथा कुछ ग्रन्थों पर विचार करना चाहिए जो लगभग उसी समय में लिखे गए थे जिस समय कि वे ग्रन्थ जिन पर हम विचार कर रहे थे।

इनमें से सर्वप्रथम जिसका हम विवेचन करेंगे सम्भवत उसी बर्नाड का लिखा हुआ है जो कान्सटेन्स के स्कूल में अध्यापक था तथा 1076 ई० के संघर्ष के प्रारम्भ में जिसके कुछ पत्रों का हम पहले विवेचन कर आए हैं। वह ग्रन्थ जिससे हमारा सम्बन्ध है 1085 ई०

म लिखा गया था और यदि यह वास्तव म उस लसक की ही रचना ह तो हम कह सकते हैं कि ्स बीच उसका ि ाय स्पष्ट तथा ~ ् ा गया था। यह मुख्यतया धार्मिक लेखको क विषय क्रम स जमाए गए वाक्य समूहो का एक सग्रह है जो लेखक का ि्ट म पोप के पक्ष की स्थिति का समथन करते हैं।

माल्जबग के गवहाट जस लेखक स्पष्टत यह अनुभव करत थ कि सारे सघष का मूल कारण तथा ग्रगोरी सप्तम की स्थिति का मूल आधार धम-बहिष्कार के सिद्धान्तो तथा उनके परिणामो म देखना चाहिए अत वह इस कठोर धार्मिक सिद्धान्त स प्रारम्भ करता है कि ईसाई लोगो को धम बहिष्कृत व्यक्तियो से कोई व्यवहार नही रखना चाहिए तथा यदि वह ऐसा कर तो उन्हे धम बहिष्कार का दण्ड भुगतने को तयार रहना चाहिए।[36] वह इस कठिनाई स परिचित ह कि धम बहिष्कार अन्याय पूण हो सकता ह किन्तु यह मानता है कि जब तब यह निरस्त न हो जाए उसका आदर करना चाहिए।[37] इस प्रकार पृष्ठभूमि के विवेचन के पश्चात् वह ग्रथ क मुख्य विषय का अवतारणा करता है जो है हेनरी का धम बहिष्कार तथा ग्रेगोरी सप्तम की पदच्युति। वह सवप्रथम सत ग्रगस्तीन क तथा सत क्रासोस्टोम (St Chry ostom) के तथाकथित ग्रथ के कुछ वाक्य उद्धत करता है जो यह दिखलाते प्रतीत होते है कि राजा का विरोध करना वधानिक नहीं था[38] किन्तु इसके बाद वह लखाशो का एक सूत्री प्रस्तुत करके यह दिखलाता है कि कोई भी पोप की धार्मिक सत्ता स मुक्त नही था तथा बहुत बडी सख्या म ऐसे मामले गिनाता है जिनम जहाँ उसकी मान्यता है राजा और सम्राट धम बहिष्कृत तथा पदच्युत किए गए है।[39] तत्पश्चात् वह ग्रगोरी सप्तम की पदच्युति का वणन करता है तथा मानता ह कि पाप किसी मनुष्य के निणय के अधीन नहीं था किन्तु यदि वह अपराध हाना भी ता भी ग्रगोरी का दोषी ठहराना एव दण्डित करना बिना किसी आवश्यक धम विहित ढग स किया गया था।[40] कुछ आगे चलकर वह निष्ठा की शपथ की पवित्रता की विवेचना करता है तथा तक दता ह कि जो भी व्यक्ति किसी स्वामी क प्रति निष्ठा की शपथ लेते ह क्योंकि कानून म व्यापक होते हैं। किसी स्वामी की उसकी दुष्टता म भी सेवा करना निष्ठा नहीं है किन्तु शपथ के प्रति निष्ठाहीनता है। एक धम बहिष्कृत व्यक्ति अथवा एसे व्यक्तियो स सपक रखन वालो की आज्ञापालन शपथ भग स बडा अपराध है। किसी ऐसी शपथ का पालन नहीं करना चाहिए जो किसी क देश की सुरक्षा या चच के कानूनो के विपरीत हो किसी व्यक्ति को ईश्वर के अतिरिक्त किसी के भी प्रति भक्ति की शपथ नही लेनी चाहिए न ईश्वर के विरुद्ध शपथ का पालन करना चाहिए।[41] वह इसको सम्राट आटा तथा बेनवेंटम के एडलजीसस (Adelgisus of B neventum) की एक कथा के उदाहरण से पुष्ट करता है तथा सत अम्ब्रास के अनेक उद्धरणो से इसका औचित्य सिद्ध करता है।

चाहे इस ग्रथ म कोई नवीनता न हो तथापि यह स्पष्टतापूर्वक तथा समुचित ज्ञान के साथ पोप के समथको के दृष्टिकोण को दोहराता है तथा विरोधी पोप ग्यूबट के विरुद्ध एक प्रबल भर्त्सना स समाप्त करता है।

इस समय का सबस महत्वपूर्ण राजनीतिक ग्रथ लौटनबाख (Lautenbach) के

मेनेगोल्ड (Manegold) का ग्रन्थ एड गेबेहार्डम (Ad Gebehardum) है। इस पुस्तक के पिछले खण्ड में राजनीतिक सत्ता के स्वरूप के बारे में उसके सिद्धान्तों का हम विस्तृत विवेचन कर आए हैं।[4] इस लिए यहाँ हमारा सम्बन्ध केवल धार्मिक एवं लौकिक सत्ताओं के सम्बन्धों तथा ग्रेगोरी सप्तम एवं हेनरी चतुर्थ के वास्तविक संघर्ष के वर्णन से ही है। मेनेगोल्ड के ग्रन्थ का हम ट्रीयर के वनरिच की आलोचना के प्रत्युत्तर में ग्रेगोरी की नीतियों का तर्कसंगत समर्थन तथा औचित्य सिद्ध करने वाला कह सकते हैं तथा अपने विषय के विकास में वह उसी क्रम को अपनाता है जो कि वनेरिच ने अंगीकार किया है।[43]

वह वनेरिच द्वारा लगाए गए या सूचित किए गए ग्रेगोरी के चरित्र के प्रति आक्षेपों का उत्तर देते हुए प्रारम्भ करता है[44] तथा उसकी चर्च सुधार की नीति का समर्थन करता है इसमें वह विशेषतः धर्म विक्रय तथा जिसे वह बिशपों का अविवाहित व्यभिचार कहता है वे प्रवचन पर रोक देता है तथा वह इस विषय में दोषी पादरियों की सेवाओं को अस्वीकार करने के लिए अपने जन साधारण के आह्वान के न्याय का औचित्य सिद्ध करता है।[45] तत्पश्चात् वह महान् संघर्ष के प्रारम्भ होने का वार्म्स का परिषद् की कार्यवाही का जिसमें हेनरी को धर्म-बहिष्कृत एवं पदच्युत किया गया था वर्णन करता है।[46] इसके बाद उसके ग्रन्थ का सबसे विशिष्ट एवं सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग आता है—एक निरंकुश शासक को पदच्युत करने के प्रजाजनों के अधिकार का तथा प्रजाओं को निष्ठा की शपथ से मुक्त करने के पोप के अधिकार के सही अर्थ का विवेचन।[47] वह वनेरिच के सुझाव का खण्डन करता है कि पोप पद के चुनाव में सम्राट की स्वीकृति की आवश्यकता है[48] तथा वह अयाजक प्रतिष्ठापन के निषेध का समर्थन करता है।[49]

हम मेनेगोल्ड द्वारा प्रतिष्ठापन के प्रश्न के विवेचन का अध्ययन पहले कर आए हैं।[50] तथा यहाँ उसके द्वारा ग्रेगोरी के चरित्र के समर्थन से हमारा कोई प्रयोजन नहीं है किन्तु हम ग्रेगोरी और हेनरी के संघर्ष के प्रारम्भ के उसके द्वारा दिए गए विवरण का तथा हेनरी के धर्म बहिष्कार तथा उसकी पदच्युति के औचित्य का कुछ अधिक सावधानी से अध्ययन करना है। मेनेगोल्ड द्वारा वार्म्स तथा रोम की परिषदों की कार्यवाही का विवरण मुख्यतः बर्नाड के विवरण तथा ग्रेगोरी के पत्रों से लिया गया प्रतीत होता है। वह ग्रेगोरी को हेनरी से उसके विभिन्न अपराधों के विरुद्ध कई वर्षों तक विरोध करता हुआ तथा अन्ततः उसे चेतावनी देता हुआ प्रदर्शित करता है कि यदि उसने अपने कार्यों के प्रति पश्चात्ताप नहीं किया तो वह उसे धर्म बहिष्कृत कर देगा। हेनरी ने अपने दुष्कर्मों को स्वीकार करने के स्थान पर वार्म्स में बिशपों तथा राजाओं को एकत्रित किया तथा उनकी राय एवं प्रेरणा से ग्रेगोरी की पदच्युति की घोषणा कर दी तथा दूतों द्वारा रोमन परिषद् को इसकी सूचना दे दी। इसी कारण अन्त में ग्रेगोरी और रोम की परिषद् को हेनरी के धर्म-बहिष्कार तथा सिंहासन से पदच्युति की घोषणा करनी पड़ी।[51] इस प्रकार कार्य की परिस्थितियों एवं कारणों का विवेचन करने के पश्चात् मेनेगोल्ड अपने ऐतिहासिक दृष्टान्त प्रस्तुत करता है। वह आरोप लगाता है कि ग्रेगोरी महान् ने सम्राट मारिस की पदच्युति तथा मृत्युदण्ड का सहमति दी थी सम्राट कान्स्टेन्टियस को पोप फेलिक्स द्वारा धर्म विद्रोही घोषित किया गया था पायस लुई को बिशपों ने तपस्या करने को विवश किया था

पोप स्टीफेन के अधिकार से चिलपेरिक (Chilperic) को पच्युत करके पिप्पिन (Pippin) को फ्रैंक लोगो का राजा चुना गया था तथा पोप निकोलस ने सम्राट लोथेयर (Lothair) को उसकी उपपत्नी वाल्डाडा (Waldrada) के कारण धर्म बहिष्कृत कर दिया था। (हमारा यहाँ इसके वक्तव्यो की एतिहासिक सत्यता से मतलब नही है)।[5] फिर वह अनेक उदाहरण देता है जिनमे राजाओ को उनकी ही प्रजाओ ने पदच्युत कर दिया था तत्पश्चात् राजत्व के स्वरूप के बारे मे विवाद है जिसका विस्तृत विवचन हम पिछली पुस्तक मे कर चुके हैं जिसमे वह यह सिद्ध करता है कि राजा अपनी सत्ता को उस समझौते या सहमति के कारण धारण करता है जिसमे उसने कानून और न्याय को बनाए रखने की प्रतिज्ञा की है तथा जाता ने आज्ञा पालन की प्रतिज्ञा की है और वह तर्क देता है कि हेनरी के द्वारा किए गए अपराध उसकी पदच्युति का पर्याप्त रूप से औचित्य सिद्ध करते हैं।[53]

इस स्थान पर हमारा सम्बन्ध इस प्रश्न से नहीं है जिस पर हम पिछली पुस्तक मे विचार कर चुके हैं किन्तु मनेगोल्ड द्वारा पोप के कार्यों के वर्णन से है तथा हम इसीलिए ध्यान रखना चाहिए कि वह तुरन्त मुख्य तर्क की ओर लौट आता है अर्थात् हेनरी चतुर्थ एव उसके समर्थकों द्वारा पवित्र पोप पद तथा चर्च की एकता के विरुद्ध षडयन्त्र किया गया था अत यह न्यायोचित था कि उसे धार्मिक निन्दा एव लौकिक दण्ड दोनो के द्वारा बाध्य किया जाए।[54] यह स्पष्ट है कि वह ग्रेगोरी सप्तम के कार्य को मुख्यत वार्म्स मे हेनरी तथा उसके समर्थको के कार्य की दृष्टि मे उचित ठहराता है तथा साथ ही वह इस विषय मे भी असन्दिग्ध है कि यह कार्य—अर्थात् हेनरी को धर्म-बहिष्कृत करना तथा पदच्युति पोप के अधिकार मे था। ग्रेगोरी द्वारा हेनरी की प्रजा को निष्ठा की शपथ से मुक्त करने का समर्थन वह जैसा कि हम पिछली पुस्तक मे कह आए हैं यह कहकर करता है कि यह इस सार्वजनिक एव अधिकार युक्त घोषणा से अधिक कुछ भी नहीं है कि शपथ पहले से ही अमान्य थी।

सुत्री के बिशप बोनीजो के ग्रन्थ जिसका नाम एड एमाकम (Ad Amicum) है कि सातवीं तथा आठवीं पुस्तक मे ग्रेगोरी सप्तम के पोप पद के कार्यकाल का महत्वपूर्ण विवरण मिलता है किन्तु वह पूरी तरह से विश्वसनीय नहीं है। वह ग्रेगोरी का एक कट्टर समर्थक था यद्यपि उसके कथनो का प्राय सावधानी से अध्ययन करना चाहिए तथापि उसने अपने युग की घटनाओ मे पर्याप्त रूप से भाग लिया है तथा विशेषत लम्बार्डी के पेटेरिया (Pataria) तथा मिलन के चर्च के मामलो के बारे मे बहुत सी महत्वपूर्ण सूचनायें सुरक्षित रखी है। उसके द्वारा प्रस्तुत किए गए 1076 ई मे वार्म्स की परिषद् द्वारा ग्रेगोरी सप्तम की पदच्युति तथा उसी वर्ष मे रोम की परिषद् द्वारा हेनरी के धर्म-बहिष्कार तथा पदच्युति के वर्णनो मे कोई विशेष नवीनता नहीं है तथा जैसा हम पहले देखते आए हैं वह ग्रेगोरी के न्याय को बहुत अधिक उचित सिद्ध करता है। वह कहता है कि ग्रेगोरी को पवित्र पोप पद से च्युत करने के राजा के प्रयत्नो के कारण उसको धर्म-बहिष्कृत करना न्यायसगत था तथा वह यह दिखाने के लिए अनेक दृष्टान्तो को उद्धृत करता है कि पुराने काल मे पोपो ने राजाओं को धर्म-बहिष्कृत एव पदच्युत

भी किया है।[56] वह उन्न सशक्त शब्दों में 1077 ई० में फारशाइम नामक स्थान पर जमन राजकुमारों को रूडोल्फ के निर्वाचन के लिए उत्तरदायी ठहराता है तथा इस दुनिया की बहुत सी बुराइयों का कारण बताता है।[57]

एक छोटा ग्रन्थ में जो ल्यूका के बिशप एन्सेल्म के नाम से प्रसिद्ध है तथा जिसे उसने सम्भवत 1085 ई० में ग्रेगोरी सप्तम की मृत्यु के कुछ समय बाद लिखा है विरोधी पोप ग्यूबर्ट के विरुद्ध गहरा आक्षेप है तथा वह मधप का एक बड़ी सीमा तक कारण इनरी व धर्म विक्रय तथा चर्च की स्वतन्त्रताओं को नष्ट करने के उसके प्रयत्नों को बताता है।[58]

उस बर्नाल्ड द्वारा लिखे गए अनेक ग्रन्थ सुरक्षित हैं जिसके 1076 ई० में बनाए गए पत्राचार की हम पहले ही चर्चा कर आए हैं।[59] इनमें से एक ग्रन्थ में जो सम्भवत 1086 में ग्रेगोरी सप्तम की मृत्यु के बाद लिखा गया था वह जोरदार रूप में तीन मुद्दों के बारे में चर्चा करता है। प्रथम निष्ठावानों को धर्म बहिष्कृत व्यक्तियों का सम्पर्क त्याग देना चाहिए और विशेषत विरोधी पोप ग्यूबर्ट तथा उसके अनुयायियों का द्वितीय कि राजा अन्य मनुष्यों की भाँति चर्च की सत्ता के ही अधीन हैं और उनका धर्म बहिष्कार किया जा सकता है तृतीय ग्रेगोरी ने मनुष्यों को शपथ भंग के लिए प्रेरित नहीं किया किन्तु उसी सत्ता से जिससे उसने उनके शासकों को धर्म बहिष्कृत एवं पदच्युत किया था मनुष्यों को आज्ञापालन की शपथ से भी मुक्त कर दिया।[60] वह एक अन्य ग्रन्थ में जिसका समय अनिश्चित है इन्हीं विषयों पर बहुत महत्वपूर्ण ढंग से विवेचन करता है तथा सबसे पहले यह तर्क देता है कि यदि सन्त पीटर के उत्तराधिकारियों को जैसा वह बता चुका है बंधन एवं मुक्त करने का अधिकार है और इस प्रकार यदि चर्च के पादरियों को भी पदच्युत करने का अधिकार है तो लौकिक राजाओं को पदच्युत करने का अधिकार तो उससे कहीं अधिक है जिनकी गरिमा मनुष्य कृत है और वह सन्त ग्रेगोरी महान् के बहुधा उद्धृत लेखांशों के उद्धरण से इसकी पुष्टि करता है तथा कई बहुधा चर्चित उदाहरण देता है दूसरे यह कि यदि उनको शासकों को पदच्युत करने का अधिकार था तो स्पष्ट उनको प्रजाओं को भक्ति एवं आज्ञापालन की शपथ से मुक्त करने का भी अधिकार था तीसरे यह कि ऐसी शपथ प्रायः शासकों के लिए तभी तक वास्तव में ली जाती है जब तक कि वे पद पर हों तथा यदि उनको वैधानिक रूप से पदच्युत किया गया हो तो किसी भी प्रकार से उनकी बाध्यता नहीं है और इस दशा में चर्च न केवल उनके दुर्बल भाइयों को ध्यान में रख कर मनुष्यों को औपचारिक रूप से शपथ मुक्त किया है जो कि इन मामलों में जब तक विशेषतया उसका उल्लेख न कर दिया गया हो यह जान न सकें कि क्या हुआ है।[61]

उस युग का सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ फरारा के बिशप विडो द्वारा 1086 ई० में ग्रेगोरी सप्तम की मृत्यु के बाद किन्तु उसके उत्तराधिकारियों के निर्वाचन से पूर्व लिखा गया ग्रन्थ है। वह विरोधी पोप ग्यूबर्ट (क्लेमेण्ट) के अनुरोध पर लिखा गया है तथा उसका उद्देश्य यह सुझाना हो सकता है कि चूँकि अब ग्रेगोरी सप्तम की मृत्यु हो गई है अत उसके अनुयायियों को भी क्लेमेंट को स्वीकार करना सम्भव है। इस ग्रन्थ के बारे में विचित्रता इसके प्रथम भाग में ग्रेगोरी सप्तम का सशक्त एवं स्पष्ट समर्थन है, वास्तव में उसके पक्ष

को प्रस्तुत करने वाला यह सबसे प्रभावशाली वक्तव्य है—जो सार एवं प्रस्तुतीकरण की सशक्तता के कारण उसके लेख के दूसरे भाग में अधिक प्रभावशाली है जिसमें हेनरी चतुर्थ एवं उसके समर्थकों द्वारा ग्रगोरी के विरुद्ध लगाए गए आरोप हैं।

ग्रन्थ के प्रथम भाग का प्रारम्भ विडो हिल्डेब्रैण्ड के उच्च चरित्र तथा शक्ति से तथा उसके नियमित एवं सिद्धान्तानुकूल पोप-पद पर निर्वाचन से करता है।[6] फिर वह हेनरी चतुर्थ के व्यक्तिगत दोषों तथा उसके द्वारा धर्म विक्रय के व्यवहार का तथा ग्रगोरी द्वारा उसके मन एवं चरित्र को परिवर्तन करने के प्रयत्नों का गम्भीर विवरण देता है। हेनरी ने परन्तु कोई ध्यान नहीं दिया तथा अन्त में ग्रगोरी द्वारा कठोर कदम उठाने की धमकी देने पर वह जर्मनी के लोम्बार्डी के बिशपों को एक साथ बुलाकर उसकी निन्दा करने की आज्ञा देता है। केवल तभी ग्रगोरी एवं रोम के बिशप हेनरी को पूर्णतया पश्चात्ताप रहित पाकर उसे धर्म बहिष्कृत एवं पदच्युत करते हैं।[63] तत्पश्चात् विडो धर्माचार्यों के अनेक वचन-समूहों को उद्धृत करते हुए बताते हैं कि चर्च की सत्ता राजाओं तथा सम्राटों पर भी है तथा अनेक उदाहरण देता है जिनमें राजाओं तथा सम्राटों को धर्म बहिष्कृत एवं पदच्युत किया गया है।[64] वह सुग्राबिया के रूडोल्फ की उसकी निष्ठा की शपथ के बावजूद राजा के विरुद्ध खड़ा करने के कारण ग्रगोरी पर हुए आक्षेपों का विवरण प्रस्तुत करता है किन्तु वह तर्क देता है कि पहले तो ग्रगोरी ने सदा यह माना है कि उसने रूडोल्फ को स्वयं नियुक्त नहीं किया दूसरे यह कि हेनरी की न्याय सम्मत पदच्युति हो चुकी थी और इसलिए रूडोल्फ उसका भक्ति के दायित्व से मुक्त था और यदि ग्रगोरी ने रूडोल्फ के निर्वाचन की पुष्टि कर दी तो वह कोई गलत कार्य नहीं कर रहा था।[65] वह ग्रगोरी पर लगाए गए इस आरोप का उत्तर कि उसने जर्मनों को हेनरी के विरुद्ध युद्ध करने को उकसाया है—इस तर्क द्वारा देता है कि वह केवल धर्माचार्यों के निर्णय के अनुरूप ही कार्य कर रहा था कि दुष्ट लोगों पर आक्रमण करना तथा उनको दबाना उचित है यह संतों के लिए उचित हो सकता है कि वे अपना बचाव न करें किन्तु न्याय को बनाये रखना एक पूर्णतया भिन्न विषय है।[66] जब ग्रगोरी ने जर्मनों को हेनरी के प्रति निष्ठा की शपथ से मुक्त किया तो वह केवल यही घोषणा कर रहा था कि वह शपथ अवैध हो चुकी है। यह भी आरोप लगाया गया है कि ग्रगोरी ने अयाजकों को धर्म विक्रयी एवं विवाहित पादरियों पर आक्रमण एवं उनसे दुर्व्यवहार करने के लिए उकसाया किन्तु विडो उत्तर देता है कि उसने सदैव उनके आचरण की निन्दा करते हुए भी उनके साथ की गई हिंसा पर दुःख प्रकट किया है तथा धर्माचार्यों के विभिन्न वाक्य समूहों को उद्धृत करके वह ग्रगोरी द्वारा निष्ठावानों को उनसे संस्कार प्राप्त करने के निषेध का औचित्य सिद्ध करता है।[67] वह अनेक अधिकारियों को उद्धृत करके ग्रगोरी द्वारा अन्तर्जक प्रतिष्ठापन के निषेध को उचित ठहराता है[68] तथा सनेगा में उन लोगों के तर्कों को भी प्रस्तुत करता है जो यह मानते थे कि ग्यूबर्ट (क्लेमेण्ट तृतीय) का निर्वाचन अवैध है।[69] वह अपने ग्रन्थ के प्रथम भाग का समापन हेनरी द्वारा रोम पर अधिकार के संक्षिप्त वर्णन नगर की रक्षा के लिए उसका सामना करने को नारमनों का आगमन तथा नगर को लूटना और ग्रगोरी के अन्तिम निष्क्रमण एवं मृत्यु से करता है।[70] जैसा हम पहले कह चुके हैं हिल्डब्राण्ड का यह

समर्थन सुविचारित है एवं प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया गया है।

अपने ग्रन्थ के दूसरे भाग में विडो ग्रगोरी के विरुद्ध लगाए गए प्रमुख आरोपों तथा उसकी पदच्युति एवं ग्यूबट के पोप के रूप में निर्वाचन को उचित ठहराने वाले तर्कों को प्रस्तुत करता है। सर्वप्रथम वह यह तर्क देता है कि निकोलस द्वितीय के विधान के विपरीत ग्रगोरी राजकीय सहमति के बिना निर्वाचित हुआ था तथा वह उन सन्दिग्ध किंवदन्तियों का भी उल्लेख करता है कि उसने यह निर्वाचन रिश्वत के द्वारा करवाया था।[71] दूसरे वह यह तर्क देता है कि यदि ग्रगोरी वैधानिक रूप से निर्वाचित भी हो तो भी उसने अपनी सत्ता के दुरुपयोग के कारण अपनी गरिमा को खो दिया था। उसने धर्माचार्यों के सभी निर्देशों के विपरीत युद्ध छेड़ा था रूडोल्फ को गद्दी पर बैठाने तथा जर्मनों को उनकी हेनरी के प्रति निष्ठा की शपथ से मुक्त करने के कारण वह हत्या एवं शपथ भंग का कारण रहा था उसने धर्माचार्यों के सिद्धान्तों के विरुद्ध यह शिक्षा दी थी कि मतभेद उपस्थित करने वाले तथा धर्म बहिष्कृत व्यक्तियों के संस्कार अवैध हैं उसने अन्यायपूर्वक हेनरी तथा अन्य व्यक्तियों को धर्म-बहिष्कृत किया था तथा उसमें आवश्यक विधि विधान के स्वरूप का ध्यान नहीं रखा था।[72] तीसरे वह यह तर्क देता है कि यदि ग्रगोरी के विरुद्ध लगाए गए आरोपों तथा इन निष्कर्षों की कि उसने अपनी सत्ता का स्वत्व खो दिया था उपेक्षा भी कर दी जाए तथा ग्यूबट का पहला निर्वाचन अनियमित था यह भी स्वीकार कर लिया जाए तो भी चूंकि अब ग्रगोरी की मृत्यु हो चुकी थी इसका कोई कारण नहीं था कि ग्यूबट को अब पोप स्वीकार न किया जाए तथा वह इसके अनेक समरूप उदाहरण प्रस्तुत करता है जो इस कार्य पद्धति को उचित सिद्ध करते हैं।[3] हम विडो द्वारा प्रतिष्ठापन के प्रश्न के विवेचन का पहले ही वर्णन कर चुके हैं[74] तथा यहाँ केवल यही कहा जा सकता है कि *विडो प्रतिष्ठापन के जो कर अधिकार का सम्बन्ध केवल बिशप* पद की लौकिक सम्पदाओं से मानता है। वह अपने ग्रन्थ का समापन यह कह कर करता है कि दो तर्क हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि ग्रगोरी निन्दा के योग्य है पहला यह कि उसने रूडोल्फ को राजा बनवाया और इस प्रकार अनेक मनुष्यों की हत्या तथा अनेक जर्मनों के शपथ भंग का कारण बना दूसरा यह कि वह धर्म में फूट डालने का अपराधी *था क्योंकि उसने धर्म बहिष्कृत तथा अयोग्य पुरोहितों से संस्कार करवाने को जनता से* मना कर दिया तथा उनके संस्कारों को मान्यता देने से अस्वीकार कर दिया।[5]

कुछ वर्षों के बाद एक अन्य जिसका शीर्षक था De Unitate Ecclesiae Conservanda लिखा गया तथा उसकी परीक्षा करके हम इस अध्याय को समाप्त करते हैं। जैसा कि पाठ्य में विभिन्न सन्दर्भों से सिद्ध होता है यह ग्रन्थ 1090 ई तथा 1093 ई के बीच लिखा गया किन्तु उसका लेखक अनिश्चित है। इसमें बहुत सी ऐसी महत्वपूर्ण बातें हैं जिनका विवेचन हम यहाँ नहीं कर सकते विशेषत 1086 ई से लेकर 1092 ई तक जर्मनी की राजनैतिक तथा धार्मिक दशाओं का वर्णन। हम मुख्यत लेखक द्वारा ग्रगोरी सप्तम के दावों की कि उसे राजाओं और सम्राटों को धर्म बहिष्कृत करने तथा पदच्युत करने का अधिकार था तथा इससे उत्पन्न होने वाले लौकिक एवं धार्मिक सत्ताओं के सम्बन्धों के बारे में सम्पूर्ण प्रश्न के विवेचन तक ही अपने को सीमित रखना होगा।

यह निरीक्षण करना अत्यन्त रोचक है कि पहली बार राजाओं के धम बहिष्कार तथा पदच्युति के तथाकथित दृष्टान्तो के बारे म हमे यहाँ आलोचनात्मक ऐतिहासिक विवाद उपलब्ध होता है। वह सब प्रथम अन्तिम मेरोविन्जियन राजा चिल्पेरिक की तथा कथित पदच्युति तथा पिप्पिन पोप जकारियास तथा पोप स्टीफेन द्वारा पिप्पिन की फ्रैंको के राजा के रूप म नियुक्ति पर विचार करता है। वह वास्तव मे इसे अस्वीकार नहीं करता कि पोपो ने उनम भाग लिया था किन्तु वह यह मानता है कि उन्होने केवल अपनी सहमति एव सत्ता उस काय को प्रदान की थी जो फ्रैंक राजाओं की सामान्य सहमति एव सत्ता से किया गया था। अत वह इस बात को दृढता पूवक कहता है कि ग्रेगोरी ने सारे मामले को यह कह कर कि पोप ने ही केवल मात्र अपनी सत्ता से चिलपेरिक को पदच्युत किया तथा फ्रैंको को निष्ठा की शपथ से मुक्त किया था गलत रूप मे प्रस्तुत किया है।[76] तदनन्तर लेखक ग्रेगोरी द्वारा उद्धृत धम बहिष्कार के मामलो को लेता है वह वास्तव मे इसे अस्वीकार नही करता कि सत अम्बरोस ने थियोडासियस को धम सभा से बाहर कर दिया था किन्तु वह आग्रह पूवक कहता है जब सत अम्बरोस ने थियोडोसियस को इस प्रकार बहिष्कृत किया तब उसने उसकी राजनीतिक सत्ता या स्थिति म हस्तक्षेप करने का प्रयास नही किया तथा उसने और पोपो ने सम्राट वेलेन्टीनियन तथा उसकी माता जस्टिना तथा दूसरे विधर्मियो के विषय मे भी वसा नही किया।[77] दूसरी ओर वह पोप इन्नोसेण्ट प्रथम द्वारा सम्राट आर्केन्डिस के तथाकथित धम बहिष्कार की सच्चाई मे भी सन्देह करता है तथा तक देता है कि ऐतिहासिक लेखो मे इसका कोई वणन नही मिलता तथा इसका कोई पर्याप्त कारण नही मिलता कि वसा क्यो किया गया होगा तथा जसा कि उसके कानूनो से विदित होता है [78] आर्केडियस एव चच के सम्बन्ध मित्रतापूण थे।

इन तथाकथित ऐतिहासिक दृष्टान्तो की आलोचनात्मक परीक्षा रोचक एव प्रभावशाली है क्योकि निस्सन्देह उसने हिल्डेब्राण्ड की स्थिति मे एक दबल सूत्र पकड लिया किन्तु इस ग्रथ मे केवल यही महत्त्वपूण नहीं हैं। वास्तव म इसका सबस महत्त्वपूण पक्ष दोनो शक्तियो के विभिन्न क्त या का तथा उनके समान दवी सत्ता म सिद्धान्त का सुविचारित वणन और विवेचन ह। वह पोप जिलेसियस प्रथम के लेखो से कुछ महत्त्वपूण वाक्यसमूहो को उद्धृत करता है ताकि वह यह सिद्ध कर सके कि ईश्वर ने ही स्वय दोनो सत्ताओ अर्थात् लौकिक एव धार्मिक को दुनिया का शासन करने की आज्ञा दी थी तथा ईसा ने ही दोनो को एक दूसरे से पृथक किया था। लौकिक सत्ता का काय बुरो को दड देना तथा अच्छो को पुरस्कार देना है। यह स्पष्ट है कि ईश्वर ने यह आदेश नही दिया कि सभी अपराधो का दण्ड चच के अध्यक्ष द्वारा ही दिया जाए इनम से अनेक का निणय लौकिक सत्ता द्वारा किया जाना चाहिए। पुरोहित के पास केवल एक तलवार है वह आध्यात्मिक है। वह यह भी आग्रह करता है कि पुराने जमाने म प्राय ऐसा रहा है कि राजा एव सम्राट धमद्रोहियो के मित्र एव सरक्षक रहे हैं किन्तु उस दशा में भी बिशपो एव पोपो ने उनसे आदरपूण एव शान्तिपूण शब्दों म सम्बोधित किया है ताकि वे चच मे शान्ति बनाय रख सकें तथा इसके दृष्टान्त-स्वरूप वह पोप जिलेसियस तथा एनेस्टसियस के पत्रो स अनेक वाक्यो को उद्धृत करता है। यह कभी भी इन पोपो के विचार म नही आया कि उनको सम्राटो को

पदच्युत करने का प्रयत्न करना चाहिए इसके बजाय उन्होंने उनको ईश्वर के न्याय पर छोड़ दिया।[79] उनके ग्रन्थ के एक परवर्ती खण्ड में इस पर पुनः विचार करता है तथा दोनों सत्ताओं की पृथकता एवं स्वतन्त्रता के आधार के सिद्धान्त की पुनः पुष्टि करता हुआ यह तर्क देता है कि हिल्डेब्राण्ड तथा उसके शिष्यों ने वास्तव में दैवी व्यवस्था को समूलित करना तथा एक ऐसी सत्ता के व्यवहार का प्रयत्न किया जो उनकी न होकर राजा की थी।[80]

इस प्रकार यह ग्रन्थ इस दृष्टि से बड़ा महत्त्वपूर्ण है कि यह ग्रेगोरी सप्तम के दावों के महत्त्व के सम्पूर्ण प्रश्न को इतनी अधिक स्पष्टता से उठाता है जितना कि अभी तक कभी भी नहीं किया गया था। वह वास्तव में इनके अधिक सुस्पष्ट एवं अत्यधिक विकसित स्वरूपों का उल्लेख नहीं करता जो ग्रेगोरी के बाद के कथनों में उपलब्ध हैं[81] किन्तु वह ग्रेगोरी के सम्पूर्ण कार्यों का जो महत्त्व समझता है वह उस तत्त्व बलपूर्वक प्रकट करता है तथा यह मानता है कि दोनों सत्ताओं के बीच इस भ्रान्ति से दोनों का विनाश ही हो सकता है। अपने द्वितीय खण्ड में इस ग्रन्थ को किसी सीमा तक ग्रेगोरी महान की इस परम्परा के प्रदर्शन का कुछ सीमा तक उदाहरण माना है कि राजकीय सत्ता इस अर्थ में ईश्वर प्रदत्त तथा दैवी थी उसका किसी रूप में भी विरोध अन्याय पूर्ण तथा अपावन था[82] किन्तु इसका इस सिद्धान्त से उसका उस मान्यता का भ्रम नहीं होना चाहिए जिसके अनुसार हिल्डेब्राण्ड के दावों ने दैवी व लौकिक सत्ताओं के ईश्वरीय निर्धारित विभेद को समाप्त कर दिया था।

अब हम इस उस शब्दावली पर ध्यान दे सकते हैं जिसके अन्तर्गत लेखक ने विरोधी पोप ग्यूबर्ट के निर्वाचन के प्रश्न तथा कम से कम ग्रेगोरी सप्तम की मृत्यु के पश्चात् उसके पोप रूप में स्वीकार किये जाने के दावे का वर्णन किया है। वह हेनरी को इस इच्छा से रोम आता हुआ प्रदर्शित करता है कि या तो ग्रेगोरी से समझौता कर ले या यदि यह सम्भव न हो सके तो दूसरे पोप का निर्वाचन कर लें। जब ग्रेगोरी ने उससे तब तक मिलना अस्वीकार कर दिया जब तक कि वह उसके हाथों में साम्राज्य को न सौंप दे तो उसे विवश होकर बल प्रयोग करना पड़ा। जब उसने शहर पर कब्जा कर लिया तो रोम के चर्च ने ग्यूबर्ट को पोप चुन लिया तथा उसने हेनरी का सम्राट के रूप में अभिषेक कर दिया।[83] लेखक इस तथ्य को छिपा जाता है कि ग्यूबर्ट का हेनरी तथा उसके पक्ष के बिशपों ने जून 1080 ई. में ब्रिक्सन में ही पोप चुन लिया था स्पष्टतया वह उसके पोप पद पर दावे को रोमन चर्च द्वारा 1084 ई. में उसके स्वागत अथवा निर्वाचन पर आधारित करना चाहता है। तथापि एक बाद के अध्याय में वह सुझाव देता है कि चाहे मूल निर्वाचन में कुछ अनियमितता भी रही हो तो भी यह इसका पर्याप्त कारण नहीं है कि ग्रेगोरी की मृत्यु के बाद भी उसे पोप न चुना जाए तथा उन मामलों के उदाहरण देता है जहाँ पोप का निर्वाचन अनियमित रहा है किन्तु बाद में चर्च ने उनको मान्यता दे दी अथवा स्वीकार कर लिया।[84] विषय का वर्णन बहुत कुछ फरेग के विचारों से मिलता जुलता है।[8]

यदि अब हम हमारे द्वारा विचार किए गए साहित्य के मुख्य सूत्रों को संग्रहित करने का प्रयास करें तो हम इन विवादास्पद प्रश्नों के विवेचन में अत्यन्त सावधानी बरतने की

आवश्यकता को स्वीकार करना । इन लेखको म हम धार्मिक एव लौकिक सत्ताओ की पृथक पृथक शक्तिया के बारे म व्यवस्थित सिद्धान्त उपन न नही होत हैं हम इनको उन सिद्धान्तो के साथ जोडने का प्रयत्न भी नही करना चाहिए जो म र विस्तार म तक सगत रूप से सम्बद्ध प्रतीत हो वास्तव मे यह सभी क अथवा लगभग सभी के विषय म कहा जा सकता है कि वे इस क्षण की तात्कालिक स्थिति क बारे म जितन व्यग्र है उतने दोनो सत्ताओ के सम्बन्धो क विषय म किसी सामान्य सिद्धान्त के बारे म नहीं ।

दोनो पक्षो मे तात्कालिक रूप स दो प्रश्न विवादास्पद थे—जमन सम्राट तथा चच के बिशपो द्वारा पोप का नियुक्त या पदच्युत करने के अधिकार या सत्ता का प्रश्न तथा पोप द्वारा राजा को धम बहिष्कृत एव पदच्युत करने के अधिकार का प्रश्न । हेनरी चतुथ के समथक यह मानत थ कि कोई पोप राजा या सम्राट की सहमति के बिना निर्वाचित नहीं हो सकता तथा निरसन्देह इस मान्यता के समथन म उनके द्वारा ब त अधिक मात्रा म ऐतिहासिक प्रमाण उपस्थित किए गए तथा उनम स कुछ यह मानते थे कि ग्रेगोरी सप्तम ने यह सहमति कभी भी प्राप्त नही की । उनमे स कुछ यह मानने थ कि कुछ परिस्थितिया म पोप का न्याय करना तथा उसे पदच्युत करना वधानिक था तथा यह भी उनकी मान्यता थी कि ग्रगोरी सप्तम का आचरण इस प्रकार का था जो उनके द्वारा न्याय तथा उनके द्वारा उसकी पदच्युति के औचित्य को सिद्ध करता था ।

ग्रेगोरी के समथको न अधिकारात पोप के निर्वाचन मे राय लिए जान क सम्राट के अधिकार के प्रश्न का विवेचन ही नही किया । यद्यपि मनगोल्ड ने इसका खण्डन किया है । हम देख चुके हैं कि सभवत उनके मन म इसके बारे म कुछ सन्देह था कि क्या पोप का न्याय कोई कर सकता हे किन्तु सामान्यत उन्होने इस मान्यता का खण्डन किया ।

हिल्डेब्रण्ड का इन सघष का उत्पन्न अनतत च । सुधार की आवश्यकता तथा हेनरी द्वारा इनका अस्वीकार करना मे माना जाता है । केवल मनगोल्ड द्वारा ही परन्तु ग्रेगोरी के पक्ष का समथन करते हुए फरेरा के विडो द्वारा भी इसे ध न का पूवक व्यक्त किया गया है। और 1076 ई की महान् तथा क्रान्तिकारी घटनाओ के विषय म उल्लेखनीय है कि ग्रगोरी के समथको की यह मान्यता है उसने हेनरी को तभी धम बहिष्कृत एव पदच्युत किया जबकि उसने पहले पोप को पदच्युत किया । यह बात उल्लेखनीय ह कि सारजबग का गबहार्ड इस प्रश्न को बहुत बल पूवक प्रस्तुत करता है तथा आग्रह करता है कि हेनरी एव उसके अनुयायी बिशप ही इस सार उपद्रव क मूल कारण थ । इस न केवल मेनेगोल्ड तथा बोनीजो ने ही न कहा है किन्तु फेरेरा के विडो ने भी यही माना है । प्रतीयमानत यह कहना सही है कि जहा तक इन लखको का प्रश्न है ग्रगोरी के समथक इसके बारे म मन म स्पष्ट नही थे कि क्या उसका काय पूर्णतया बुद्धिमत्तापूर्ण था । गबहार्ट स्वीकार करता प्रतीत होता है कि इस प्रति कठोर कहा जा सकता है और बनार्ड पहले तो उसकी काय प्रणाली क बारे मे स्पष्ट नही था किन्तु वे इस बारे म पूर्णतया स्पष्ट है कि उसका काय न्याय सगत था ।

वे यह निश्चित रूप स घोषित करते हैं कि कोई भी यहाँ तक कि राजा भी चच एव पोप के धार्मिक अधिकार-क्षेत्र से मुक्त नही है तथा व उनके लिए अनेक तथाकथित

दृष्टान्त प्रस्तुत करते हैं। वे अपेक्षाकृत स्पष्ट शब्दों में यह तर्क प्रस्तुत नहीं करते कि धर्म बहिष्कृत करने के अधिकार में पदच्युत करने का अधिकार अनिवार्य रूप से निहित था किन्तु इस कतिपय तथाकथित दृष्टान्तों पर आधारित मानते प्रतीत होते हैं विशेषत पोप जकरियास द्वारा अंतिम मरोविंजियन सम्राट चिल्पेरिक को पदच्युत करने के अभिकथित कार्य पर। यह सम्भव है कि हम इन मतों के मूल आधार के निकट वर्नाल्ड के ग्रंथ Liber Canonum contra Heinricum Quartum के इस तर्क द्वारा पहुँच सकें कि एक धर्म बहिष्कृत व्यक्ति के प्रति की गई निष्ठा की शपथ मान्य नहीं हो सकती। वास्तव में यह स्पष्ट है कि सामान्यत स्वीकृत यह सिद्धान्त भी कि निष्ठावान व्यक्तियों को धर्म बहिष्कृत लोगों से कोई व्यवहार नहीं रखना चाहिए धर्म बहिष्कृत राजा की स्थिति को बहुत कठिन बना देता है।

हेनरी चतुर्थ के समर्थकों ने इन मान्यताओं का उत्तर अनेक प्रकार से दिया। पहले वनरिच ने यह माना कि धर्म बहिष्कार का दण्ड अनिवार्य रूप से न्याय संगत नहीं था तथा एक अन्यायपूर्ण दण्ड अपने आप में अवैध था। दूसरे इस आलोचना को और भी आगे ले गए तथा अधिकाधिक मामलों की परीक्षा की। ओसनाबर्ग के विडो ने यद्यपि यह नहीं कहा कि पोपों को राजा को धर्म-बहिष्कृत करने का अधिकार नहीं है किन्तु वह इसे अस्वीकार करता है कि ऐसा पहले कभी किया गया है तथा यह किसी मनुष्य के भय के कारण नहीं अपितु इसलिए कि उदाहरण देता था कि इससे मनुष्य की आत्मोन्नति नहीं होगी तथा गम्भीर दोष उत्पन्न हो जायेंगे। डी यूनीटेट (D Unitate) का लेखक यद्यपि इसे अस्वीकार नहीं करता कि संत अम्ब्रोस द्वारा थियोडोसियस को चर्च की धर्म सभा से बहिष्कृत कर दिया गया था किन्तु वह पर्याप्त ऐतिहासिक तीक्ष्ण बुद्धि से इस वक्तव्य की परीक्षा करता है कि पोप इनोसेण्ट द्वारा सम्राट आर्कोडियस को धर्म बहिष्कृत किया गया। वास्तव में धर्म बहिष्कार में पदच्युति के अधिकार को निहित मानने वाली मान्यता के विरुद्ध तथा उसके समर्थन में विद्यमान अधिकाधिक दृष्टान्तों के विरुद्ध की जाने वाली आलोचना सबसे महत्वपूर्ण है। वेनेरिच यह कहता है कि यदि मान भी लिया जाए कि हेनरी वैसा ही था जैसा ग्रेगोरी ने उस पर आरोप लगाया है तो भी पोप को उसकी प्रजा को निष्ठा की शपथ से मुक्त करने का कोई अधिकार नहीं था तथा यह बात पहले नहीं सुनी गयी कि पोप एक राजा को अपने पूर्वजों की गद्दी से उतरने की आज्ञा दे। ओसनाबर्ग के विडो की मान्यता है कि हेनरी का धर्म बहिष्कार न्यायसंगत तथा वैधानिक भी हो तो भी इससे ग्रेगोरी को हेनरी की प्रजा को शपथ से मुक्त करने का अधिकार प्राप्त नहीं होता। डी यूनीटेट का लेखक इस विषय पर विचार पोपों द्वारा चिल्पेरिक की अभिकथित पदच्युति की सावधानी से आलोचना करते हुए तथा महत्वपूर्ण उदाहरण देकर इस तथ्य पर बल देने हेतु करता है कि एक सम्राट चर्च से पृथक कर दिया जाए इस को इसका पर्याप्त कारण नहीं माना गया था कि उसकी राजनीतिक सत्ता पर भी आक्रमण किया जाए।

जैसा हम कह चुके हैं कि इसी ग्रंथ में हम उन प्रश्नों के स्वरूप की व्यापकतम परिकल्पना मिलती है जिन्हें इस महान् संघर्ष ने जन्म दिया था। लेखक के दृष्टिकोण से है

विवादास्पद प्रश्न वास्तव म दोनो सत्ताओ की स्वतत्रता का प्रश्न था। यह बहुत महत्वपूर्ण है कि वह बहुत जोर देकर तथा अन्तर्दृष्टि के साथ ईसा द्वारा स्वय दोनो सत्ताओं की विभिन्नता क जिलेशियन सिद्धान्त को दोहराता है तथा बलपूवक कहता है कि इस प्रकार के दोष एव अपराध हो सकते हैं जिनका कि निणय चच नही कर सकता क्योकि चच के पास एक ही अर्थात् आत्मा की ही तलवार है। तथापि यह ध्यान रखना चाहिए कि वह ग्रेगोरी के समथको की इस मान्यता का उत्तर नहीं दे सका कि सवप्र प्राथमिक रूप से हेनरी तथा उसके बिशपो के द्वारा रोम के धमपीठ की स्वतत्रता मे अत सम्पूर्ण चच की स्वतत्रता म हस्तक्षेप करने से उत्पन्न हुआ।

अत म यह उल्लेखनीय है कि ग्रेगोरी क पक्ष का प्रतिपादन करने वाले किसी भी लेखक ने यह दावा नही किया कि चच या रोम के पोप को लौकिक विषयो मे सामान्य अधिकार प्राप्त है। पसाऊ के बिशप आल्टमान को ग्रेगोरी सप्तम द्वारा लिखे गए पत्र मे प्रयुक्त कुछ वाक्याशो के तथा 1080 ई० मे रोम की परिषद् म उसकी घोषणा के भी अनुरूप इनमे कुछ नही है।[86]

सन्दर्भ

1 B rn ld D ma at n Schism t co um p II (p 29)
2 Id d Ep III (p 50)
3 Id d (p 52)
4 Gebeha d Sal sburgens s Arch epi c pi Ep stola d Herr m n m Mette sem Ep s opum
5 Id d 9–11
6 Id id 15 16
7 Id id 17 23
8 Id id 31
9 Id id 32.
10 Id id d
11 Id d 34–36
12 We ch of T er Epist I 1 9
13 Id d 1 3
14 Id d 3
15 Id id 4
16 Cf pp 81 82
17 Id d 8
18 Pet C Def ns o H Reg s 1
19 Id d 3
20 Id d 4
21 Id d 7
22. Id id, 4
23 Id d 7 8
24 Cf ol Part I c 7
25 D ta cu usd m de d sc rd a Papae et R gis (p 456)
26 Id (458)
27 Id
28 W do O nab rge s s L ber de Con overs H ldeb andi et He nrici (p 462)
29 Id d (p 463)
30 Id d pp 464–466
31 Id d (p 466)
32 Id d (p 467)
33 Id id p 468
34 Id d (p 469)
35 Id d (p 470)
36 Cf p 212
37 L be Canonum co tra H n cum Quartum v
38 Id x
39 Id Cf vol p 122
40 Id xx xxv
41 Id xv xx x
4 Id x
43 Cf ol i pp 160–169

44 M g ld Ad Gebehard m l 14
45 Id id 15–23 67 77
46 Id id 25–28
47 Id id 29–45 47–49
48 Id id 57 58
49 Id id 50–66
50 Cf pp 86–90
51 Id id 25–28
52 Id id 29
53 Id id 29 30
54 Id d 31–41
55 Id id 47–49 Cf ol pp 163 166
56 B i o Ad Amicum (p 608)
57 Id id v i (p 611)
58 A lm s L ce s s Libe C tra W bertum (p 52)
59 See p 212
60 Bernald Ap l geticae Rat ones Lib II pp 95–99 Cf L b vi a d
61 Be ld L bell s x l De Solu ti n jurame torum
62. W d f F rara De Seimate H l d brand l 1 2
63 Id id 1 3
64 Id id l 4–6
65 Id id l 7
66 Id id 18 15 16
67 Id id 9 10–14 17 18
68 Id id l 19
69 Id id l 0
70 Id id i 20
71 Id id ii (pp 551 553).
72 Id id i (pp 554–563)
73 Id id i (p 563)
74 भाग 2 अध्याय 3
75 Id id (p 566)
76 De U tate Eccless e Co serva d 2
77 Id i 8
78 Id i 9
79 Id i 3
80 Id i. 15
81 Cf pp 201 209
82 Cf v I p 120
83 Id 7
84 Id 21
85 Cf p 41
86 Cf pp 201 208

तृतीय अध्याय

ग्रेगोरी सप्तम के कार्यो तथा दावो का विवेचन (2)

हम ग्रेगोरी सप्तम के देहावसान क पश्चात् ऐतिहासिक घटनाओ की परम्परा का विस्तार पूवक अनुसरण नही करना चाहते। हम उसके पोप पद से कायकाल के विषय म यहा वरन को इसलिए विवश हो गए थे क्योकि उसक राजनीतिक सत्ता के दावे का विकास उस युग की वास्तविक परिस्थितियो से बहुत अधिक जुड़ा हुआ था। ग्रेगोरी का देहावसान 25 मई 1085 ई को सालेरनो मे हुआ तथा अगल वष 24 मई को मौंटेकेसीनो (Monte Casino) का मठाधीश डेसी रियस (Desiderius) उसके स्थान पर विक्टर तृतीय के रूप मे चुना गया। यह सुझाव दिया गया है कि वह हेनरी चतुथ से किसी प्रकार का समझौता करने को उत्सुक था।[1] हम उसम सदेह है कि इसके लिए पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध हैं किन्तु यह उल्लखनीय है कि जब उसने अगस्त 1087 ई मे बेनवेन्टम (B neventum) की परिषद् म विरोधी पोप ग्यूबट क तथा किसी भी बिशप या मठाधीश जिसने लौकिक सत्ता से प्रतिष्ठापन प्राप्त किया हो और उन सभी सम्राटो राजाओं और ड्यूकों क जिन्होने प्रतिष्ठापन करने की धृष्टता की हो हनरी चतुथ का कोई प्रत्यक्ष उल्लेख नहीं है तथा उसको पदच्युत करन का भा कोई वणन नहीं है। विक्टर के चाहे जो भी मध्यस्थतावादी प्रवृत्तियाँ अथवा अभिप्राय रहे हो उनका कोई परिणाम निकलने से पूव ही सितम्बर 1087 ई मे उसका दहावसान हो गया।

पुन पर्याप्त समय के उपरान्त उसके उत्तराधिकारी का निणय हुआ। माच 1088 ई तक ओस्टिया (Ostia) का बिशप ओडो अबन द्वितीय क रूप म निर्वाचित एव अभिषिक्त नहीं हुआ। वह क्लूनी के मठ का भिक्षु तथा एक सन्यासी था जिसे ग्रेगोरी सप्तम द्वारा रोम लाकर कार्डीनल पद पर नियुक्त किया गया था तथा वह उसका सबस कट्टर समथक रहा था। अपनी नीति सम्बधी पहली घोषणा म ही वह सम्पूण रूप से ग्रेगोरी सप्तम की नीति को ही बनाए रखने को कृतनिश्चय प्रतीत हुआ। उसके निर्वाचन क एक दिन बाद

ही 13 मार्च 1888 ई को उसने जर्मनी के पोप समर्थक बिशपों एव अन्य व्यक्तियों को पत्र लिखा उसने अपने निर्वाचन की घोषणा की तथा उन्हें विश्वास दिलाया कि उसकी इच्छा सभी बातो म ग्रेगरी । के पद चिह्नो पर चलने की है जिसकी वे ऐसा निन्दा करता था उसकी निन्दा जिसे वह समर्थन देता था उसका समर्थन जिसको वह अनुमति देता था उसको अनुमति तथा इस प्रकार सभी विषयो म वह वैसा ही सोचता था जसे ग्रेगोरी सोचता था। अत उसने उनको पौरुषपूर्वक ईश्वर के युद्ध मे उसके योद्धा के समान दृढता से डट जाने को प्रोत्साहित किया ।[2] अप्रल 1084 ई मे उसने कांसटेन्स के गेबहार्ट को जर्मनी म अपना प्रतिनिधि नियुक्त करते हुए पत्र लिखा तथा इसे सूचित किया कि धर्म बहिष्कार के प्रश्न पर अपने सहयोगियों से विचार विनिमय से वह इस निर्णय पर पहुँचा कि पहले विरोधी पोप तथा हेनरी चतुर्थ धर्म बहिष्कृत हो रहें ।[3] उसी वर्ष सितम्बर म उसने लौकिक प्रतिष्ठापन के निषेध का पुनर्नवीकरण कर दिया ।[4]

जर्मनी की राजनीतिक परिस्थितियाँ फिर बदल गई। 1088 ई मे थूरिंजिया का हर्मन (Herman of Thuringia) मर गया तथा सिंहासन का कोई भी दावेदार गद्दी पर नहीं बैठा था तथा जनता का मन शान्तिमय विचारों की ओर उन्मुख हुआ। *1089 ई में पोप के पक्ष के राजा एकत्रित होकर हेनरी के पास गए तथा यह प्रस्तावित किया कि यदि* वह विरोधी पोप ग्यूबर्ट का समर्थन त्याग दे तो वे उसकी अधीनता स्वीकार करने के लिए तैयार हैं। बर्नाड ने हेनरी को अपने क्रानिकल मे व्यक्तिगत रूप से इसे स्वीकार करने को उन्मुख प्रदर्शित किया है किन्तु ग्यूबर्ट के समर्थक बिशपों द्वारा उसे इससे विमुख कर दिया गया। समझौता वार्ता 1091 ई म पुन प्रारम्भ की गई किन्तु पुन विफल हो गई।[5] अवसर समाप्त हो चुका था तथा 1093 ई म कोनाड जिसे एक्सला शापल मे 1087 ई मे अभिषिक्त किया गया था अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह कर बैठा *तथा जर्मनी एव लम्बार्डी की सम्पूर्ण राजनीतिक परिस्थिति बदल गई।* कई बड़े बड़े लम्बार्ड नगरों ने बर्नार्ड के अनुसार मिलन क्रेमोना लौडी तथा पियासेन्जा हेनरी के विरुद्ध एक संयुक्त मोर्चा बनाया। मिलन के आर्चबिशप ने कोनाड का अभिषेक किया तथा दो वर्षों के बाद 1095 ई म उसने क्रेमोना मे अरबन द्वितीय के प्रति निष्ठा की शपथ ली जिसने कि उसका रोमन चर्च के पुत्र के रूप म अभिनन्दन किया। अरबन ने साम्राज्य तथा राजमुकुट प्राप्ति के लिए उसकी सहायता करने का वचन दिया *किन्तु सदव रोमन चर्च तथा लौकिक प्रतिष्ठापन के निषेध के अधिकार को सुरक्षित रखा।*[6]

अरबन अब सत्ता के सर्वोच्च शिखर पर था। लम्बार्डी से वह फ्राम को गया तथा क्लेरमोण्ट की परिषद् मे जो नवम्बर 1095 ई मे हुई उसने धर्मयुद्ध की घोषणा की लौकिक प्रतिष्ठापन के निषेध का पुनर्नवीकरण किया तथा फ्रास के राजा फिलिप को अपनी पत्नी का परित्याग करने एव व्यभिचार करने के आरोप मे धर्म बहिष्कृत कर दिया।[7] 1099 ई म जब उसकी मृत्यु हुई तो पोप का पक्ष जर्मनी एव इटली दोनो स्थानो पर *पुन प्रबल हो गया था।*

उसी वर्ष 13 अगस्त को पस्कल द्वितीय का निर्वाचन हुआ तथा 18 जनवरी 1100 ई को कांसटेंस के गेबहार्ट को जिसे अभी भी जर्मनी मे पोप का प्रतिनिधि

वनाए रखा गया था निखने हुए उमन विश्वास दिलाया कि यह अफवाह कि वह हेनरी चतुर्थ तथा उसके ग्रनुयायियो को कोई छूट देने वाला है भूठी है।[8] सितम्बर 1100 ई म रवन्ना के ग्यूवट की जो कि विरोधी पोप था मृत्यु हो गई तथा हेनरी चतुर्थ एव पोप म समभौते की ग्रार प्रगति हुई किन्तु उसका कोई परिणाम नही निकला तथा जनवरी 1102 ई म हम पस्कल द्वितीय को फ्लण्डस के काउण्ट का हेनरी पर तथा जो उसका प्रत्यक प्रकार स समथन करत है उन पर ग्राक्रमण करने के लिए प्रोत्साहित करते हुए और उन्हे यह विश्वास दिलाते हुए पाते है कि ईश्वर की इसस बढकर श्रेष्ठ कोई भी सेवा नही है।[9] माच 1102 ई मे रोम की परिषद् म पस्कल न हेनरी चतुथ के घम बहिष्कार का पुननवीकरण किया। उसन इसका स लौकिक प्रतिष्ठापन के निषेध का प्रतिपादन किया जसा कि हम एसलम तथा इग्लड के हेनरी प्रथम से उसके पत्र व्यवहार मे पाते हैं।[10] तथा एक पत्र म उसने पादरियो द्वारा ग्रयाजको को सम्मान प्रदान करने का निषेध किया।[11] 1104 ई म उसने बवेरिया तथा स्वालिया के क्थोलिको म पुन ग्राग्रहपूवक कहा कि हेनरी चतुथ घम बहिष्कृत था।

1104 ई क उत्तराद्ध तथा 1105 ई के पूर्वाद्ध म हनरी चतुथ के विरुद्ध एक नया विद्रोह फूट पडा। उसके ज्यष्ठ पुत्र कोनाड की 1100 ई म मृत्यु हो गई थी किन्तु अब उसके छोटे पुत्र हेनरी ने उसके विरुद्ध एक ग्रधिक खतरनाक विद्रोह को सगठित किया। पस्कल से उसने ग्रपने पिता के प्रति निष्ठा की शपथ से ग्रपने को मुक्त करने का ग्रनुरोध किया। पस्कल न उस ग्राशीर्वाद देकर इस शत पर शपथ म मुक्त कर दिया कि वह चच से व्यवहार म न्याय का ग्राश्रय लेन की प्रतिज्ञा करे।[1] मई म हेनरी ने नाडहौसेन (Nord hausen) म एक परिषद् बुलाई जिसमे रोम के प्रति पूर्ण सम्मान की घोषणा की किन्तु जसा एक्हाड क विवरण से स्पष्ट है कोई निश्चित प्रतिज्ञा नही की गई।[14] उसी वष नवम्बर म पस्कल न मेज के ग्राचविशप को लिखे गए पत्र म पुन नई परिस्थितियो के सदभ म ग्रपने द्वारा समथित सिद्धान्तो को दोहराया। उसने यह कहने की सावधानी रखी कि उसकी इच्छा है कि राजा उन सभी ग्रधिकारो का उपभोग करे जो न्यायसगत रूप से उसके हैं तथा सको ग्रस्वीकार किया कि उसकी किसी भी प्रकार म इन्हे कम करने की इच्छा है किन्तु दूसरी ग्रोर चच भी ग्रपनी स्वतन्त्रता का उपभोग करने को स्वतन्त्र होना चाहिए। उसने चच के रक्षक के रूप म राजा के स्थान को तथा चच से परिरक्षण प्राप्त करने के उसके ग्रधिकार को मान्यता दी किन्तु मुद्रा एव दण्ड ग्रर्थात् प्रतिष्ठापन म उसके किसी भी प्रकार के सम्बन्ध को स्वीकार नही किया तथा इस शत पर शाति स्थापित करने के लिए ग्रपनी तत्परता व्यक्त की कि राजा ग्रौर पादरी एक दूसरे क ग्रधिकारो को मान्यता दें।[15]

31 दिसम्बर 1105 ई को हेनरी चतुथ उसके पुत्र तथा लौकिक एव धार्मिक राजाग्रो द्वारा राज्य एव साम्राज्य स त्यागपत्र देने को विवश कर दिया गया। परन्तु ग्रगले वष ही उसने ग्रपने त्याग का खण्डन किया तथा उसे पर्याप्त समथन भी मिला किन्तु 7 ग्रगस्त को उसकी मृत्यु हो गई। हम 1122 ई म वाम्स के समभौते म पोप पद एव साम्राज्य के सम्बन्धो पर इस खण्ड के पहले भाग म विचार कर चुके हैं तथा उसे

दोहराने की यहाँ कोई आवश्यकता नही है।

पिछले अध्याय म हमने विवाद के प्रमुख लक्षणो को निश्चित करने का प्रयास किया था जो कि ग्रेगोरी सप्तम तथा हेनरी चतुर्थ के महान् सघर्ष के कारण तत्काल उदय हुए थे। अब हम इस विवाद के उत्तरकालीन विकास का उन लेखो म विचार करते है जो इस सघर्ष से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध हैं और साथ ही ग्रेगोरी की मृत्योपरान्त वर्षों के इतिहास म भी जिनका हम अभी सघर्ष म वर्णन कर चुके हैं। निस्सन्देह इन लेखो तथा पहले के लेखो के बीच कोई स्पष्ट विभाजक रेखा खींचना असम्भव है किन्तु हम सोचते हैं कि इनम कुछ अन्तर अवश्य है। अब तक जिस साहित्य का हम विचार कर चुके हैं वह 1076 ई से 1093 ई तक का है जिस पर अब हम विचार करेंगे वह 1097 ई से लेकर 1125 ई तक का है। इसम कोई सन्देह नही कि इस काल म भी सघर्ष अत्यन्त तीव्र था साम्राज्य तथा पोप-पद म जबतक हेनरी चतुर्थ जीवित था कोई समझौता नही हो सका था तथा 1106 ई म उसकी मृत्यु के बाद भी कुछ वर्षों की तुलनात्मक शान्ति के बाद सघर्ष पुन छिड गया। तथापि हमारे विचार से यह कहना उचित होगा कि इन ग्रन्थो के स्वरूप म कुछ अन्तर है यह आवश्यक नही कि दोनो पक्षो म से किसी के दावो म कोई कमी हो—जिस पर अभी हम विचार करेगे—किन्तु यह सघर्ष वास्तविक परिस्थिति के बारे म ही नही वरन् सामान्य सिद्धान्तो के बारे म भी है तथा जब कि कभी कभी विवादकर्ता अत्यन्त चरम स्थिति का आग्रह करते हैं फिर भी उनम दूसरे पक्ष की मान्यताओ के महत्त्व को स्वीकार करने तथा उसके मूल्याकन करने का भी प्रयत्न देखा जा सकता है।

इनम से पहली रचना जिस पर हम विचार करेगे कार्डिनल ड्यूसडेडिट की लाइबेलस कोन्ट्रा इन्वसोरस एट सायमोनियेकोस (Libellus contra Invasores et Symoniacos) है जिसका समय 1097 ई से पूर्व नही है। वह ग्रेगोरी सप्तम का उसके सर्व प्रथम 1098 ई म उत्तराधिकार से ही प्रबल एव निरन्तर समर्थक था। हम प्रतिष्ठापन विवाद के सम्बन्ध म उसकी इस रचना का पहले ही उल्लेख कर चुके हैं इस समय हम लौकिक एव धार्मिक सत्ता के स्वरूप एव उनके पारस्परिक सम्बन्धो को प्रदर्शित करने के लिए ही ड्यूसडेडिट की स्थिति का वर्णन करेंगे।

अपने ग्रन्थ की भूमिका म मुख्य विषयो की अवतारणा करने के पश्चात् वह कहता है कि उसका उद्देश्य राजकीय सत्ता के गौरव को कम करना नहीं है क्योकि उसका भी वैसा ही स्थान है जैसा कि धार्मिक सत्ता का। पुरोहित शब्द की तलवार का उपयोग करता है जबकि राजा के हाथ म भौतिक तलवार है दोनो को एक दूसरे की आवश्यकता है तथा दोनो मे से किसी को भी दूसरे के कार्यों म हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।[16] यह शब्द उल्लेखनीय है विशेषतया यह मान्यता कि चर्च केवल एक ही तलवार का उपयोग करता है तथा लौकिक सत्ता के विशिष्ट स्थान की निस्सकोच स्वीकृति। 1087 ई म अपने द्वारा प्रस्तुत धर्म विधानो के संग्रह म ड्यूसडेडिट ने अनेक प्रामाणिक मतो को उद्धत किया है जो लौकिक सत्ता की दैवी उत्पत्ति तथा ईश्वरीय न्याय के अधिकारी के रूप म उसके कार्यों का समर्थन करते हैं।[17]

तथापि ग्रन्थ के तीसरे भाग म ह्यू सडेडिट ने जो मान्यता प्रकट की है उसकी इससे सगति बठाना अत्यन्त कठिन है। वह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न अर्थात् पादरी के लौकिक न्यायालय के कार्यक्षेत्र से मुक्ति पर विचार कर रहा है। हमने एक दूसरे खण्ड म इस प्रश्न के शास्त्रीय विवाद पर विचार किया है।[18] यहाँ हमारा प्रयोजन केवल उन कुछ निरीक्षणों से है जो कि इस विषय पर धार्मिक एव लौकिक कानूनो के सघर्ष के बारे ह्यू सडेडिट न व्यक्त किए हैं। वह मानता है कि विवाद की दशा म लौकिक कानून परित्याज्य है तथा घोषित करता है कि धार्मिक सत्ता (Sacredotium) को कानून निर्माण म प्राथमिकता प्राप्त है क्योकि ईश्वर ने राजाओ के द्वारा पादरियो को कानून प्रदान नहीं किए अपितु पादरियो द्वारा राजाओ को कानून प्रदान किए हैं तथा वह इसके दृष्टान्त मूसा तथा ग्रॅरेन एव प्रेरितो से उद्धृत करता है। वह कहता है कि धार्मिक सत्ता राजकीय सत्ता से बढ़कर है क्योकि उसे ईश्वर ने बनाया जबकि राजकीय सत्ता को मनुष्यो न ईश्वर की स्वीकृति से न कि उसके सकल्प से बनाया है तथा वह सौल (Saul) की नियुक्ति की परिस्थितियो को उद्धृत करके इस सिद्धान्त की पुष्टि करता है।[19] हम तीसरे खण्ड म इस ग्रन्थाश के अन्तिम भाग का उसी प्रकार के अन्य वाक्याशो से सम्बन्ध का अध्ययन कर आए हैं अत हम उस दोहरान की कोई आवश्यकता नहीं है।[20]

तथापि हम यह ध्यान रखना चाहिए कि सम्पूर्ण वाक्याश एक दूसरे ही प्रश्न को उठाता है—अर्थात् इस प्रश्न को कि क्या धार्मिक एव लौकिक कानूनों मे विरोध होने पर सभी दशाओ म लौकिक कानून त्याज्य होगा। [1] शास्त्रीय साहित्य म जहाँ तक इस प्रश्न का विमर्श किया गया है उस पर हम एक अन्य खण्ड मे विचार कर चुके हैं अत हम इसके सामान्य महत्त्व पर पुन विचार नही करेग। ह्यू सडेडिट की स्थिति के अर्थ के विषय म हम क्या निष्कर्ष निकाल सकते हैं? जसा कि हम अभी देख चुके हैं ह्यू सडेडिट अपने ग्रन्थ म स्पष्टतया लौकिक तथा धार्मिक प्रत्येक सत्ता के विशिष्ट स्थान एव महत्त्व को स्वीकार करता है तथा सिद्धान्तो के सग्रह (Collectio Con num) म उसने उन अधिकारियो का मत प्रस्तुत किया है जो कि यह मानते हैं कि लौकिक सत्ता का उद्भव तथा अधिकार दवी हैं। क्या हम यह मान ल कि अतिम वाक्याश द्वारा वह इन सिद्धान्तो का खण्डन करना चाहता है और यह सिद्ध करना चाहता है कि लौकिक सत्ता का कोई निश्चित स्वरूप नहा है तथा धार्मिक सत्ता को उसके अपने क्षेत्र मे भी तथा उसके वास्तविक कार्यों के विषय म भी उसकी अवहेलना का अन्तिम अधिकार प्राप्त है। यह हमे पूर्णतया असम्भावनीय प्रतीत होता है तथा हम यह सुझाव देंगे कि इस प्रकार के मध्ययुगीन लेखकों के पृथक पृथक वाक्यो की व्याख्या करते समय अभिन्न सावधानी बरतने की आवश्यकता का यह एक श्रेष्ठ उदाहरण है। ह्यू सडेडिट का अन्य स्थलो की भाँति यहाँ भी प्रयोजन धार्मिक सत्ता एव उसके कानूनो की पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रतिपादन है [2] तथा वह इस पर बल देता है कि लौकिक सत्ता की तुलना मे उसे एक प्रकार की प्राथमिकता प्राप्त है किन्तु इसका अर्थ यह कहना नहीं है कि धार्मिक कानून लौकिक कानूनो के क्षेत्रान्तगत भी उनका अतिलघन कर सकता है।

जनवरी 1103 ई म पोप पस्कल द्वितीय न फ्लण्डस के काउण्ट को लीज के पादरियो

पर जिन्हें उसने हेनरी चतुर्थ से सम्बन्धों के कारण धर्म बहिष्कृत किया था आक्रमण करने के लिए प्रेरित करते हुए पत्र लिखा तथा केम्ब्राई के विरुद्ध उसके आचरण की सराहना की। लीज के पादरियों की प्रेरणा से गेम्बलो (Gembloux) के एक भिक्षु सीजबर्ट ने लीज के चर्च के नाम से सभी शुभ-संकल्प वाले व्यक्तियों को सम्बोधित करते हुए एक पत्र लिखा जिसमें पोप के इस पत्र का विरोध किया।[3]

सीजबर्ट का पत्र अधिकांशतः किसी भी नए सिद्धान्त का प्रतिनिधित्व नहीं करता किन्तु वह उन व्यक्तियों की स्थिति को अन्तिम बलपूर्वक प्रस्तुत करता है जिन्होंने हेनरी चतुर्थ के प्रति निष्ठा का त्याग करना अस्वीकार कर दिया था और यह विवादित प्रश्नों के सैद्धान्तिक पक्ष पर ही निर्णय अभिव्यक्त नहीं करता किन्तु समय के वास्तविक परिणामों के स्पष्ट बोध की भी अभिव्यक्ति करता है। वास्तव में यही तथ्य इस रचना को विशेष महत्व प्रदान करता है। सीजबर्ट इस संदेह को दोहराता है कि क्या राजा को धर्म बहिष्कृत किया जा सकता है, वह कहता है कि मामला अभी भी न्यायाधीन है।[4] किन्तु वह इसके विषय में निश्चित है कि चाहे राजा का धर्म बहिष्कार हो अथवा नहीं उसके प्रति निष्ठा की शपथ अनुलंघनीय है तथा वह कटु अभियोग लगाता है कि पोप द्वारा लीज की जनता को इसी कारण धर्म बहिष्कृत माना गया है कि वे उस बिशप के अनुयायी हैं जो हेनरी के प्रति निष्ठा की शपथ का सम्मान कर रहा है।[25] वह प्रतिपादन करता है कि राजा चाहे कितना ही बुरा हो उसकी आज्ञा पालनीय है, चाहे हेनरी वैसा ही हो जैसा कि उसके शत्रुओं ने बताया है तो भी ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए न कि उसके विरुद्ध शस्त्र ग्रहण करना चाहिए तथा उसने बलपूर्वक कहा कि वे शासक जिनकी आज्ञा पालन करने की संत पाल ने मनुष्यों को आज्ञा दी थी ईसाई भी नहीं थे। पोप को इस उदाहरण का अनुकरण करना चाहिए तथा चाहे राजा कितना ही बड़ा पापी हो उनके लिए प्रार्थना करनी चाहिए ताकि मनुष्य शान्तिपूर्वक एवं स्थिर जीवन बिता सकें, उसे उसके विरुद्ध युद्ध छेड़कर मनुष्यों को शान्ति एवं स्थिरता का उपभोग करने में बाधा नहीं डालनी चाहिए।[6]

पुनः सीजबर्ट गम्भीर संदेह व्यक्त करता है कि हेनरी को न्यायोचित कारणों से धर्म बहिष्कृत किया गया है, वह पोप के उसके प्रति दृष्टिकोण में व्यक्तिगत भावना के अंश पाता है तथा पोप को ग्रेगोरी महान् की चेतावनी का स्मरण दिलाता है कि जो व्यक्ति अकारण ही तथा स्वेच्छया बांधने व मुक्त करने की सत्ता का उपयोग करता है वह उससे वंचित हो जाता है। धर्म बहिष्कार के अन्याय पूर्ण दण्ड को ईश्वर स्वयं समाप्त कर सकता है।[7] वह पस्कल को यह स्मरण दिलाता है कि पोप सिल्वेस्टर से लेकर हिल्डेब्राण्ड तक किन अनुचित उपायों का अवलम्बन लेकर बहुधा मनुष्य पाप पद तक पहुँचे हैं, वह उसे यह भी याद दिलाता है कि प्रायः सम्राटों का ही यह कार्य रहा है कि वे इसका प्रतिकार करें तथा भ्रष्ट पोपों की निन्दा एवं उनकी पदच्युति करें। पोपों को गम्भीर तथा प्रकट दोषों के कारण भर्त्सना एवं संशोधन के लिए उसी प्रकार प्रस्तुत रहना चाहिए जैसे कि पीटर ने पाल के समक्ष अपना मस्तक नत कर दिया था। जो भर्त्सना एवं संशोधन के लिए अपने को प्रस्तुत नहीं करता है वह झूठा बिशप है।[28] ये मान्यताएं बलपूर्वक प्रकट

की गई हैं तथा यह उल्लेखनीय है कि य एस यक्ति के द्वारा यक्त की गई है जो पस्कल द्वितीय को पाप मानता है तथा रोमन धर्मासन क सर्वोच्च स्थान एव सत्ता को स्वीकार करता है।[9]

तथापि उसके ग्रथ का सबन महत्त्वपूर्ण पक्ष पोप द्वारा बल प्रयोग के आग्रह की नीति का सशक्त विरोध है। व पस्कन द्वितीय क पलाडर्स क काउण्ट का सम्बोधित पत्र क शब्दो को उद्धत करता है जिसम उसने कम्ब्राई पर आक्रमण करने क लिए दी गई उसकी आज्ञा क पालन की प्रशसा की है तथा उसमे लीज क धम मे फट डालने वाले पादरी तथा हेनरी क सभी समथको पर आक्रमण करने का अनुरोध किया है। सीजबट अपना भय प्रकट करता है कि पोप कम्ब्राई के विनाश का दायि व अपने पर ले रहा है जिसम दायी एव निरपराध यक्तियो की एक ही साथ हत्या हुई है यदि पस्कल स्वय यह स्वीकार नही करता तो उसे कभी विश्वास नही होता कि एसी बातो को पोप क धर्मासन की सत्ता से किया गया है। वह टूर क मार्टिन क आचरण म इसका विरोध दिखलाता है जिसन बिशप इटेचियस (Itachius) से पत्र यवहार नहीं कर लिया था क्योकि वह धमद्रोह क लिए प्रिस्कीलियन (Priscillian) की हत्या का दोषी था।[30] इस क मार्टिन का यह उ लेख तथा उसक द्वारा धम द्रोहियो क वध की निन्दा बहुत रोचक है। आंशिक रूप से इसका कारण यह हो सकता है लीज क बिशप बजो के भी यही विचार बताए जाते हैं उसन भी धम द्रोहियो क विरुद्ध हिंसा के प्रयोग की निन्दा की है।[31] वास्तव म हम यह नहीं मानना चाहिए कि सीजबट के निष्कर्ष वही थे जो कि हम उसकी मान्यताओ म निहित मानते हैं सम्भवत उसका एक सामान्य सिद्धान्त प्रस्तुत करने का विचार नहीं था किन्तु वास्तव म पाप क मनुष्यो और स्त्रियो की हत्या क प्रत्यक्ष कारण के रूप म वह अपनी व दूसरो की वास्तविक प्रतिक्रिया का वणन कर रहा है। किन्तु वह एक बाद के अध्याय म मूल प्रश्न पर जाता है कि पोप को अपनी ही प्रजाओ क विरुद्ध तलवार खीचने का अधिकार कहाँ स प्राप्त हुआ। डेविड को ईश्वर का मन्दिर बनाने योग्य इसलिए नहीं समझा गया था कि वह एक रक्तपात करने वाला मनुष्य था अब उच्च पादरी (पोप) पवित्रों के पवित्र स्थान (रोमन चच) म ईसा क रक्त का अपने आप को तथा दूसरो को समर्पित करने क लिए रक्त रजित वस्त्रो म कस प्रवश कर सकता ? ग्रेगोरी महान् स लेकर हिल्डेब्राण्ड तक किसी पोप न आध्यात्मिक तलवार स भिन्न दूसरी तलवार का उपयोग नहीं किया था और न ही युद्ध की तलवार का प्रयोग सम्राट के विरुद्ध किया था।[3]

सीजबट क तर्कों म अनेक नवीन नहीं है किन्तु उसके पत्र म हम लम्ब सघष तथा परिणामस्वरूप रक्तपात एव विनाश क प्रति उसकी बढती हुई भय की भावना की अनुभूति प्रतीत होती है।

लगभग उसी समय जबकि सीजबट न शुभ सकल्पो वाले सभी यक्तियो को सम्बोधित अपना पत्र लिखा था पच्यूरी के ह्यू ज न राजकीय सत्ता एव पौरोहित्य की गरिमा पर एक ग्रथ इग्लण्ड क हेनरी प्रथम को समर्पित किया।[33] उस यथाथ कारण को ढढ सकना सभव नही प्रतीत होता जिसन इस समपण का निश्चित किया। निस्सन्देह इग्लण्ड भी प्रतिष्ठापन क प्रश्न पर सघष से अछूता नहीं र [illegible] यद्यपि वह प्र [illegible] इसका वणन करता है तथापि

यह रचना अभी तक वर्णन किए गए ग्रन्थो की तुलना म एक औपचारिक राजनीतिक कृति के रूप म अधिक प्रतीत होती है।

लेखक ग्रन्थ की भूमिका म अपना उद्देश्य बताता है उसका प्रयोजन राजकीय एव धार्मिक अधिकारियो के सम्बन्धो के विषय म भयकर सघर्ष का कोई समाधान करना उन व्यक्तियो की गलती का सशोधन करना जो कि इन सत्ताओ को एक दूसरे के विरुद्ध मानते हैं और यह प्रतिपादित करते हैं कि राजकीय सत्ता ईश्वर द्वारा नहीं मनुष्य द्वारा स्थापित है—यह सम्मति उसके अनुसार व्यापक रूप से अति प्रचलित है।

अत वह ग्रेगोरी सप्तम द्वारा मेट्ज के हर्मन को लौकिक सत्ता के उद्भव के विषय म 1080 ई० म लिखे गए पत्र के विधिवत् खण्डन से प्रारम्भ करता है[34] तथा तर्क देता है कि उसमे अभिव्यक्त मान्यताए पूर्णतया असत्य हैं। वह स्वय न केवल सत पाल के इन शब्दो म ही सिद्ध करता है कि ईश्वर के अतिरिक्त कोई शक्ति नहीं तथा जो भी शक्तियाँ हैं वे ईश्वर द्वारा आदिष्ट हैं वरन् ससार म मनुष्यो के तथा शरीर के ऊपर मस्तिष्क के शासन के दृष्टान्त म भी इसे सिद्ध करता है तथा वह प्रतिपादित करता है कि ईश्वर ने धरती एव स्वर्ग दोनो ही स्थानो पर सत्ताओ की एक श्रेणी बनायी है।[35] दो सत्ताए हैं अर्थात् राजकीय एव धार्मिक जिनके द्वारा चर्च का वर्तमान जीवन नियन्त्रित होता है वे दोनो पावन हैं तथा उनको एक दूसरे के विरुद्ध न हो करना चाहिए।[36]

तथापि इस ग्रन्थ का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष दोनो सत्ताओ के पारस्परिक सम्बन्धो की तुलनात्मक स्थितियो के तथा प्रत्येक की दूसरे पक्ष के अधिकारियो पर अधिकार के विवरणो म है। वह प्रारम्भ म ही उनकी सापेक्ष स्थितियो का वर्णन ईश्वरत्व के अन्तर्गत पिता व पुत्र के सम्बन्धो की तुलना की शब्दावली मे प्रस्तुत करता है। वह कहता है कि राजा अपने राज्य के शरीर मे पिता के प्रतिरूप को धारण करता है तथा बिशप ईसा के प्रतिरूप को। हम आज न इस तुलना से वास्तव म क्या समझा था स्पष्ट नहीं है यह कल्पना की जा सकती है कि यह चतुर्थ शताब्दी के एम्ब्रोसियस्टर (Ambrosiaster) अथवा आठवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध के कैथलफस (Cathulfus) की शब्दावली की साहित्यिक संस्कृति है। जसा हम अभी देखेंगे कि यह अनामनामा लेखक के ग्रन्थ ट्रैक्टेटस इबोरेसेन्सस (Tractatus Eboracenses) म प्रयुक्त कुछ वाक्याशो के समानान्तर हैं। सम्पूर्ण वाक्याश का अर्थ तो स्पष्ट नहीं है किन्तु हम आज उसम अपने निष्कर्ष पर्याप्त निश्चितता पूर्वक निकाल लेता है। सभी साम्राज्य के बिशप राजा के अधीन हैं जैसे ईसा (Son) ईश्वर (Fath r) के अधीन स्वभाव से नहीं किन्तु व्यवस्थागत (Ord ne) है जिसमे की सम्पूर्ण साम्राज्य की एक ही उत्पत्ति मानी जा सकती है इसके उदाहरण स्वरूप वह मूसा (Moses) की स्थिति का दृष्टान्त देता है जो कि इब्र राष्ट्र म राजा की प्रतिकृति था जबकि आरोन पुरोहित की। उसने साम्राज्य म पुरोहितो के सम्राट के अधीन होने के सिद्धान्त का वर्णन आमुख म पहले से ही दे दिया था तथा एक बाद के अध्याय मे वह पुन उसी का वर्णन करता है।[37]

परन्तु राजा एव पुरोहित के सम्बन्धो का यह एक पक्ष है किन्तु इसका एक दूसरा पक्ष भी है। अन्यत्र जब वह बिशप द्वारा सम्राट के विरुद्ध हथियार उठाने का विरोध करता

है ह्यूज यह भी कहता है कि बिशप अपने पद के गौरव में राजा की तुलना में कहीं बढ़चढ़ कर है जैसे कि धार्मिक पद केवल मात्र लौकिक विषयों से कहीं अधिक श्रेष्ठ है इसलिए यदि बिशप को दोषी पाया जाए तो उस पर अभियोग लौकिक न्यायालय में नहीं सामान्य धर्मसभा में चलाया जाए।[38] यदि राजा को बिशप पर अधिकार प्राप्त है तो बिशप को भी राजा पर अधिकार है। राजा पर धर्म के अनुशासन का अंकुश है उसे बिशप की प्रताड़ना पर ध्यान देना चाहिए क्योंकि उनको मनुष्य के लिए स्वर्ग खोलने एवं बन्द करने का अधिकार है और इसलिए यदि आवश्यकता हो तो वे राजाओं को भी धर्म बहिष्कृत कर सकते हैं तथा ह्यूज इस प्रकार के धर्म बहिष्कारों के अनेक दृष्टान्त प्रस्तुत करता है।[39] यह स्पष्ट है कि वे हेनरी चतुर्थ के उन समर्थकों में सहमत नहीं जो पोप द्वारा सम्राटों या राजाओं को धर्म बहिष्कृत करने के अधिकार पर सन्देह करते थे अथवा उसे अस्वीकार करते थे। वह बहुत स्पष्टता से यह सिद्ध करता है कि बिशप या पोप समस्त लौकिक शासकों पर धार्मिक सत्ता में सम्पन्न हैं ठीक वैसे ही जैसे कि उनको सभी बिशपों पर लौकिक अधिकार प्राप्त है।

तथापि वह न केवल सामान्य शब्दों में ही लौकिक शासकों पर धार्मिक शासकों की सत्ता के सिद्धान्त को प्रस्तुत करता है वह यह भी स्पष्ट कर देता है कि उसके मत में उस सत्ता की प्रकृति एवं सीमाएं क्या थीं। बिशप को राजा पर धार्मिक अधिकार प्राप्त है किन्तु इन अधिकारों का दुरुपयोग हो सकता है तथा धर्म-बहिष्कार के अधिकार में प्रजाओं को निष्ठा की शपथ से मुक्त करने का अधिकार निहित नहीं है—अर्थात् बिशप को राजा को पदच्युत करने का कोई अधिकार नहीं है। कभी कभी ऐसा हुआ है कि बिशपों ने अपनी सत्ता का प्रयोग वास्तविक परिस्थितियों की न्यायपूर्ण समीक्षा करके नहीं अपितु भावना के वशीभूत होकर किया है तथा इस प्रकार धर्म बहिष्कार का दुरुपयोग केवल कानून की सत्ता के प्रति घृणा को ही जन्म देता है। कुछ बिशपों ने राजा की प्रजाओं को निष्ठा की शपथ से मुक्त करना प्रारम्भ कर दिया है किन्तु यह मूर्खता है तथा ईश्वर के विरुद्ध अपमान का कार्य है जिसके नाम पर उनको शपथ दिलाई गई है। यह सत्य है कि कुछ शपथें अन्यायपूर्ण हो सकती हैं जिनका पालन नहीं करना चाहिए किन्तु यह स्पष्ट है कि ह्यूज इसमें किसी मनुष्य द्वारा एक शासक के प्रति ली गई निष्ठा की शपथ को सम्मिलित नहीं करता चाहे वह शासक धर्म बहिष्कृत हो क्या न हो।[40]

यदि ह्यूज इस मामले में स्पष्ट है कि बिशप की सत्ता राजा को पदच्युत करने तक विस्तृत नहीं वह इस पर भी बल देता है कि चाहे वह कितना भी क्रूर एवं अन्यायी क्यों न हो, उसके उसके विरुद्ध हथियार नहीं उठाने चाहिए।[41] बिशप का कार्य राजा एवं जनता के बीच मध्यस्थ होना राजाओं एवं राजकुमारों को उनकी जनता के प्रति क्रोध दूर करना तथा दोनों के कल्याण के लिए रात और दिन प्रार्थना करना है।[4] अतः बिशप को राजाओं पर भी धार्मिक सत्ता प्राप्त है किन्तु यह सत्ता धार्मिक मामलों तक ही सीमित है तथा केवल धार्मिक दण्ड द्वारा ही क्रियान्वित की जानी चाहिए। दूसरी ओर जैसा कि हम कह चुके हैं सभी बिशप राजा के राज्य में उसके अधीन हैं किन्तु वे लौकिक न्यायालयों के अधीन नहीं। यदि उन पर कोई अभियोग लगाया गया है, तो उन पर विचार एवं

सामा य धम सभा म किया जाना चाहिए ।

अपने ग्र थ के दूसरे भाग म ह्य ज विशप प । पर नियुक्ति का प्रश्न उठाता है तथा उस पक्ष का जिस वह लौकिक सत्ता का उचित स्थान बनाता है समथन करता है किन्तु इस विषय का पहले ही विवेचन किया जा चुका है ।[43] दो विषय जिनका अभी हमने उल्लेख नहीं किया म वपूण हैं । प्रथम तो उसके द्वारा म मान्यता की निन्दा है कि पोप की कोई प्रताडना न हीं कर सकता तथा वह यह बताता है कि मन पीटर की त्रुटि करने पर सत पाल न भ सना की थी ।[44] द्वितीय उसके द्वारा पोप द्वारा नियुक्ति म विशेषतया विवादास्पद निर्वाचना के मामला म सम्राट क स्थान का विस्तृत वणन है तथा वह पोप निकोलस द्वितीय के घोषणा क पक्ष म आग्रह करता है ।[45]

फ्लूरी के ह्य ज की स्थिति महत्वपूर्ण तथा रोचक है वह हिल्डब्राण्ड के कार्यों तथा *जिन्ह वह उसके सिद्धान्त कहता है कि बहुत स्वतन्त्रता से तथा वलपूर्वक आलोचना करता है किन्तु वह धार्मिक पद के गौरव तथा उसकी राजाओ पर भी सत्ता का समथन करने* म भी स्पष्ट है ।

यहीं पर उस ग्रन्थ के लेखक की विचित्र मान्यताओ पर विचार करना सर्वोत्तम होगा जिसका शीषक ट्रक्टस इबोरेसेसस है ।[46] वास्तव म यह कहना कठिन है कि हम उसको क्या महत्व प्रदान करना चाहिए किन्तु यह मानना तक सगत होगा कि फ्लूरी के ह्य ज के कुछ वाक्य समूहो म तथा उनको कुछ मान्यताओ म महत्त्वपूर्ण तथा उल्लेखनीय समानता है । हम अभी देख चुके हैं कि ह्य ज कहता है कि राजा ईश्वर की प्रतिमूर्ति है तथा विशप ईसा की तथा इसलिए यह ठीक है कि विशप सम्राट के साम्राज्य म उसके अधीन रहें । *जसा म कह चुका हूँ कि यह ठीक निधारण करना सभव नहीं प्रतीत होता कि ह्य ज इन* वाक्यांशो को क्या स्पष्ट म व प्रदान करता था तथा क्या ये तेरहवीं शताब्दी के अम्ब्रोसियस तथा चौथी शताब्दी के एम्ब्रोसियेस्टर क शा । के साहित्यिक संस्मरण हैं ।[47] इन वाक्य समूहो म हम राजा तथा विशपो की सापक्ष स्थिति एव सत्ता के वणन की तुलना करनी चाहिए जो ट्रक्टस इबोरेसेसस के चौथे भाग के लेखक द्वारा किया गया । यह स्पष्ट प्रतीत होगा कि ग्रन्थ इसनस तथा इगलड के राजाओ के बीच प्रतिष्ठापन विवाद के काल की रचना है ।

इसकी मान्यता है कि राजा एव पुरोहित दोनो ही ईश्वर द्वारा अभिषिक्त हैं किन्तु *पुरोहित ईसा के मानवीय स्वभाव का प्रतिनिधि है जिसके कारण वह पिता (ईश्वर) से निम्न है जबकि राजा दिव्य स्वभाव का है न य ह जि स ह ई र व तु है* पुरोहित मरणासन्न ईसा का प्रतिनिधि है तथा अपने आपको ईश्वर की बलि के रूप मे समर्पित करता है राजा यश तथा सम्मान से अभिषिक्त होने वाले तथा अपने स्वर्गीय सिंहासन से सभी सत्ताओ एव अधिकारो के ऊपर शासन करने वाले ईसा का प्रतिनिधित्व करता है । सन्देश वाहक देवदूत (Angel of Annunciation) ने मरी से कहा ईश्वर उस उसके पिता डविड का सिंहासन प्रदान करेगा उसके पिता आरोन का नहीं क्योंकि ईश्वर ने डेविड को पुरोहितो पर भी सत्ता प्रदान की है । *अत यह न्याय सगत है कि राजा को पुरोहित पर भी अधिकार एव सत्ता प्राप्त हो ।*[48]

लेखक यह प्रतिपादित करता है कि मूसा और जोशुआ तथा इजरायल के पाच राजा इसी प्रकार पुरोहितो से श्रेष्ठ थे[49] तथा वह इस मत को पुन दोहराता है कि राजकीय सत्ता पुरोहित की सत्ता से अधिक बडी है क्योकि वह ईसा के ... र का प्रतिनिधि है जो उसकी मानवता से श्रेष्ठतर है अत उचित ही है कि राजा पुरोहितो पर शासन करे तथा वह उनको पद स्थापित करे।[50] एक प्रकार से राजा का अभिषेक वसा ही है जसे कि पुरोहित का दूसरे प्रकार से वह अधिक बडा है क्योंकि पुरोहित का अभिषेक आरोन या प्ररितो के अनुकरण पर है जबकि राजा का अभिषेक ईसा के अनुसरण पर है जिसे ईश्वर ने उसके अनुयायियो से ऊपर अभिषिक्त किया है[51] इस प्रकार सम्राट से उच्चतर है तथा उसका शासन करता है तथा लेखक ग्रेगोरी महान् के पत्र म कुछ वाक्यांश उद्धृत करता है जो सम्राट के प्रति उसके आज्ञापालन तथा सम्मान को प्रदर्शित करते हैं।[5]

दूसरे वाक्य समूहो म वह दावा करता है कि राजा को चाबियो (Keys) का अधिकार है यद्यपि इसमे उसका क्या वास्तविक अभिप्राय था यह कहना बहुत कठिन है[53] तथा वह चच की परिषदो को बुलाने तथा उनकी अध्यक्षता करने वाला प्रधान अधिकारी है।[54] वह प्रतिपादित करता है कि राजा को साधारण जनता म से एक नही मानना चाहिए क्योकि वह ईश्वर का ईसा (Lords Christ) है[55] तथा दूसरे स्थान पर वह लिखता है कि उसे अपराधो को क्षमा करने तथा ख्रीस्त-याग (Man) म रोटी तथा मदिरा की हवि समर्पित करने का अधिकार है जसा वास्तव म वह अपने अभिषेक के दिन करता भी है।[56]

इन सब बातो के बाद यह एक तुच्छ बात प्रतीत होती है कि राजा बिशप को उसके पद के दण्ड से प्रतिष्ठापित करने के अधिकार का दावा करे तथा वास्तव म यह उल्लेख है कि वह इसको विशेष रूप म स्पष्ट करने का प्रयत्न करता है कि वह उस समय बिशप को उसका पद या धार्मिक अधिकार प्रदान नही करता अपितु केवल लौकिक सम्पदा एव चच की सरक्षकता तथा ईश्वर के बन्दो को शासन करने की सत्ता प्रदान करता है।[57]

ग्यारहवी तथा बारहवी शताब्दियो म ये मान्यताए पर्याप्त रूप से विस्मयजनक हैं किन्तु लेखक के दृष्टिकोण को सम्पूर्णतया समझने के लिए हम राजा एव बिशप के सम्बन्धों के इन सिद्धान्तो के अतिरिक्त तीसरे और पाचवे ट्रक्टस म किए गए पोप की सत्ता और स्थिति के उल्लेखनीय विवरण का भी अध्ययन करना होगा। रोम की धार्मिक सत्ता के इतिहास का वर्णन इस पुस्तक के क्षेत्र म नहीं आता यहाँ इस विषय का विवेचन हम केवल इसीलिए करेंगे कि इन उपयुक्त ग्रन्थो के सम्पूर्ण महत्त्व का निर्णय करने म समर्थ हो सकें।

तृतीय ट्रक्ट म लेखक सम्भवत 1096 ई के लगभग पोप द्वारा राउन धर्म तथा टूस के आर्चबिशपो पर लियोस के आर्चबिशप का एक प्रकार का धर्माधिपत्य स्वीकार कर लेने के कारण उत्पन्न विवाद म व्यस्त है। राउन के आर्चबिशप विलियम का इस सत्ता को मान्यता देने म अवहेलना तथा रोमन पोप पद की अवमानना के कारण गम्भीर भर्त्सना की गई। ट्रक्ट का लेखक इसके प्रत्युत्तर म जो तर्क देता है वह दूरगामी है। सर्व प्रथम वह कहता है कि आर्चबिशप तथा दूसरे बिशप रोमन पोप की गद्दी के प्रति उतने

ही आज्ञापालन के भागी हैं जितना कि दूसरे प्रेरित पीटर के प्रति थे क्योंकि वे न केवल प्रेरितों के अनुयायी हैं अपितु वे उनके प्रतिनिधि भी हैं।[59] दूसरे वह यह तर्क देता है कि आर्चबिशप भी पीटर का प्रतिनिधि है तथा ईसा ने बाँधने एवं मुक्त करने की जो सत्ता पीटर को दी थी वह उसके पास भी है। इस राउन के आर्चबिशप तथा रोमन पोप-पद के बीच बड़प्पन का कोई प्रश्न ही नहीं उठता तथा दोनों में से कोई भी किसी का न्याय नहीं कर सकता। बिशप का न्याय ईश्वर के अतिरिक्त कोई भी नहीं कर सकता।[59] ये मान्यताएं अपने स्वरूप में अत्यन्त कठोर हैं किन्तु इसके इतना भी आगे बढ़ जाता है।

वह इस प्रश्न का विवेचन करता है कि क्या राउन के आर्चबिशप से लियोन्स के आर्चबिशप की सत्ता मानना की अपेक्षा न्यायोचित है तथा उसकी मान्यता है कि इसका कोई औचित्य नहीं है। वह सुझाव देता है कि रोम के समर्थक यह कह सकते हैं कि उस रोम का आज्ञा का पालन करना चाहिए, क्योंकि यह घोषणा की गई है कि रोमन चर्च सभी चर्चों की जननी तथा स्वामी है। वह स्वीकार करता है कि रोम के बिशपों तथा उनके अनुयायियों द्वारा यह घोषणा की गई है किन्तु वह प्रतिपादित करता है कि यह ईसा या उसके प्रेरितों द्वारा नहीं किया गया है। यदि कोई चर्च सभी चर्चों की जननी हो सकती है तो वह जरूसलम का चर्च है। वास्तविकता तो यह है कि रोम को सभी चर्चों से ऊपर ईसा या उसके प्रेरितों की सत्ता द्वारा नहीं किन्तु मनुष्यों की सत्ता द्वारा बनाया गया है तथा इसका कारण सम्राट के नगर की गरिमा तथा सत्ता है। रोम की स्थिति न्याय संगत सत्ता पर आधारित नहीं वरन् अनधिकार चेष्टा पर आधारित है यद्यपि उसका उदय विभेद से बचने की आवश्यकता के कारण हुआ है। मूल रूप में चर्च का शासन पुरोहितों की परिषद् द्वारा संचालित होता था केवल फूट पड़ने की आशंका से ही यह नियम बनाया गया है कि एक पुरोहित को अन्य के ऊपर रखा जाए तथा वह सम्पूर्ण चर्च की देखभाल के लिए उत्तरदायी हो।[60]

पाँचवें ट्रेक्ट में जो कि म्वीड्मर के अनुसार चौथे की भांति ही इन्वेस्टीचर के प्रतिष्ठापन के विवादकाल का है अत्यन्त कठोर शब्दों में पोप पर पुनः आक्रमण करता है। उसका तर्क देता है कि पोप अनेक ऐसी आज्ञाएं देता है जिसे ईसा भी नहीं देता था। उदाहरणार्थ पोप द्वारा बिशपों को रोम में अनेक बार उपस्थिति के लिए विवश करने से उन पर असह्य भार डाल दिया गया है। वह शिकायत करता है कि बिशपगण पोप के अधिकारियों के लोभ को सन्तुष्ट करने के लिए चर्च की सम्पत्ति को बेचने के लिए विवश हो गए। वह प्रतिपादित करता है कि यदि पोप इस कारण बिशपों को धर्म-बहिष्कृत करता है कि ऊपर वर्णित इन मामलों में वे उसकी आज्ञापालन नहीं करते थे तो वह धर्म-बहिष्कार अवैध है तथा उसका कोई प्रभाव नहीं है।[61] वह पोप द्वारा अनेक मठों को पादरियों के अधिकार-क्षेत्र से मुक्त करने के कार्य की कठोर भर्त्सना करता है तथा यह प्रतिपादित करता है कि ऐसी मुक्ति को मान्यता नहीं मिलनी चाहिए, क्योंकि वह ईश्वर के आदेश के विरुद्ध है तथा पोप को उस बन्धन का कोई अधिकार नहीं है।[6] वह पोप द्वारा चर्च के शासन में राजाओं के अधिकार को नष्ट करने के प्रयत्नों की निन्दा करता है कि यह पोप जिलेसियस द्वारा स्थापित सिद्धान्त का खण्डन है कि सम्राट यहाँ स्वयं अभिप्राय

धर्म से ही है दो सत्ताधारियों से शासित है-पुरोहित तथा राजा। चच की राजकीय सत्ता से उसका स्पष्ट अभिप्राय प्रतिष्ठापन का अधिकार है तथा वह पुन इस बात पर बल देता है कि राजा एक साधारण नागरिक नहीं है।[63]

यह कहना अत्यन्त कठिन है कि इन अति असाधारण मान्यताओं को हम क्या महत्त्व प्रदान करें तथा किस प्रकार यह निर्धारण करें कि कहाँ तक ये कुछ क्षेत्रो मे पायी जाने वाली सामान्य विचार प्रणाली का प्रतिनिधित्व करती हैं या केवल व्यक्तिगत सम्मतियाँ मात्र हैं। पचुरी के ह्यू न के कुछ वाक्यों से इनकी समानता स्पष्ट है तथा इन धारणाओं का अन्तिम साहित्यिक स्रोत एक ही हो सकता है किन्तु ह्यूज इन वाक्य-समूहों का प्रयोग करते समय उनकी गलत व्याख्या न होने देने की सावधानी भी बरतता है तथा धार्मिक पद के उच्चतर गौरव पर बल देता है इन ट्रक्टों का लेखक अपने तर्क को राजकीय प्रतिष्ठापन के अधिकार या लौकिक सत्ता की दिव्यता को प्रतिपादित करने के लिए आवश्यकता से कहीं अधिक दूर तक ले जाता है।

उसके ग्रन्थ आर्थोडोक्सा डिफेंसियो इम्पीरियलिस (Orthodoxa Defensio Imperialis) में जो सम्भवत 1111 ई मे लिखा गया है अभिव्यक्त केटीनो के ग्रेगोरी के दृष्टिकोण का हम पहले ही विस्तृत अध्ययन कर चुके हैं जिसमे लौकिक सत्ता के विरुद्ध विद्रोह की अपावनता तथा राजा या सम्राट द्वारा बिशप के प्रतिष्ठापन के अधिकार के प्रयोग का प्रतिपादन किया गया है।[64] तथापि वह कुछ महत्वपूर्ण वाक्यो का प्रयोग करता है जिन पर हमको ध्यान देना चाहिए। एक स्थान पर वह कहता है कि ईश्वर ने ही चच में राजाओ तथा उच्च अधिकारियो को स्थापित किया है जिनके लिए सन्त प्रार्थना करने का उपदेश पॉल ने दिया है तथा हमे राजा को चच का अध्यक्ष मानना चाहिए। यह असंगत नहीं कि चच के अधिकारी सम्राट द्वारा मुद्रा एवं दण्ड से प्रतिष्ठापित किए जाएँ क्योंकि यदि राजा चच का अध्यक्ष है तो उसे उसके पदों अथवा पदाधिकारियों को नियुक्त करने से वंचित नहीं किया जा सकता।[65] लौकिक शासक के लिए चच के अध्यक्ष की उपाधि उपयोग करना विचित्र एवं अस्वाभाविक है तथा यह जानना कठिन है कि ग्रेगोरी उसे क्या सुनिश्चित महत्त्व प्रदान करता है। सम्भवत राजाओ एव सम्राटो के अभिषेक पर उसके द्वारा दिए गए बल से इसका सम्बन्ध जोड़ा जा सकता है[66] किन्तु ग्रेगोरी स्वयं यह सम्बन्ध नहीं जोड़ता।

नोनानतुला का प्लेसाडस (Placidus of Nonantula) अपने ग्रन्थ 'लीबर दे होनरे एक्लेसिये' (Liber de Honore Ecclesiae) में जो सम्भवत 1112 ई म लिखा गया प्रमुखतया प्रतिष्ठापन के प्रश्न तथा चच की सम्पत्ति की पवित्र प्रकृति का वर्णन करता है तथा इस विषय पर उसके ग्रन्थ की परीक्षा हम पहले ही कुछ विस्तार से कर चुके हैं।[67] तथापि हमारे वर्ण्य विषय अर्थात् धार्मिक एव लौकिक सत्ताओं के सम्बन्धों के सिद्धान्तों के विषय मे इस ग्रन्थ का बड़ा महत्त्व है क्योंकि इसमे पहली बार उस अर्थ में कान्सटेन्टाइन के दान की व्याख्या का उदाहरण पाते हैं जिस अर्थ म उसे बाद मे समझा गया। जैसा हमने दिखलाने का प्रयास किया है यह स्पष्ट है कि मूल रूप मे उसका सम्बन्ध पोप द्वारा पूर्वी ईसाई चच में बिशपों पर पूर्वी सम्राटो की

सत्ता मे तथा इटली मे उन सम्पदाम्रो के नो ग्राठवी शता-ी म भी उनके (पूर्वी सम्राटो के) ग्रधिकार में थी उत्तराधिकार क दावे न था।[68]

लसीडस दान का ग्रथ य- समझता ह कि का सटेण्टा-न ने पोप सि-वस्टर को पश्चिम म उसको सम्पूर्ण सत्ता सौंप दी यहाँ तक प्लसीडस की स्थिति पूर्णतया स्पष्ट प्रतीत होती ह कि तु सके ग्राग उसकी *व्याख्या ग्रासान न-ी ह। वह कहता ह क्योंकि* का सटे-टाइन द्वारा प्ररित (पीटर) के प्रति सम्मान प्रदान किया गया था तथा पश्चिमी साम्रा-य पीटर के उत्तराधिकारी क लिए छोड िया गया था ग्रत ईश्वर ने उसे सम्पूर्ण रोमन साम्रा-य का ग्रधिकार िया है क्योंकि पोप सि-वेस्टर ने यद्यपि उसे का सटे-टा-न ने प्रदान कर दिया था तो भी ईसा का ग्रनुकरण किया तथा राजमुकट को ग्रपने सिर पर रख कर हानि न ेने दी तथा -सके लिए ग्रभिलाषा प्रकट की कि का-स्टे-टाइन चच की निरउ पूण रक्षा क लिए साम्रा-य का भार सभाले रहे।[69] इससे *प्लसीडस का वास्त विक ता-पय क्या था कहना कठिन है। सम्भवत उसका ग्रभिप्राय यह* हो सकता कि सि वेस्टर ने पश्चिम पर राजनीतिक सत्ता स्वीकार करना नहीं चाहा ग्रथवा यह भी हो सकता है कि स्वय यक्तिक रूप से उसे स्वीकार करने के बजाय उसने चच के प्र निधि या सेवक क रूप म का-सटे-टाइन को प्रयोग करने को दिया। बाद वाली सम्भावना का बोध सम्भवत -सके स-दभ स होना है क्योंकि वह पोप सि-वेस्टर के काय का चच द्वारा ड्यूक पद तथा ग्रन्य लौकिक सम्पदाम्रो पर धारण ग्रधिकार के दृष्टात स्वरूप उपयोग करता है। यह दुर्भाग्यपूण है कि -स विषय का उ-लेख प्लसीडस ने *केवल सयोगवश किया है* किन्तु इसका विवेचन हम ग्रभी तब करेंगे जबकि हम ग्रागसबग के हानोरियस का वणन करेंगे।

इस पुस्तक के प्रारम्भिक भाग म हम ल-डोम के एबट -यौफी का ग्रपने ग्रनुक्रमिक ग्रन्थो मे प्रतिष्ठापन के प्रश्न पर ग्रत्य-त महत्वपूर्ण विकास का ग्रध्ययन कर चुके हैं।[70] इनमे से -क म जो सम्भवत 1119 ई मे लिखा गया था एक पर्याप्त महत्व वाला वाक्याश है जो कि हमारे वतमान विषय की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है।[71] यह ग्रन्थ प्रतिष्ठापन विवाद के ग्रन्तिम वर्षों म लिखा गया था जबकि -यौफी ग्रत्य-त दृढता *पूर्वक मुद्रा एव दण्ड से प्रतिष्ठापन की छूट का विरोध कर रहा था यद्यपि वह* यह मानने को तयार था कि सम्राट बिशप को उसक पद की लौकिक सम्पत्ति प्रदान कर सकता है। स वाक्य म -यौफी घोषणा करता है *कि दवी कानूनो के ग्रन्तगत ही राजा* व सम्राट हम पर शासन करते हैं तथा उसी कानून के ग्रन्तगत ही व हमारे ग्रादर एव सम्मान के पात्र हैं तथा उसका स्पष्टतया यह ग्रभिप्राय पादरी एव ग्रयाजक दोनो से ही प्रतीत होता है। वह उन बडी हानियो का -लेख करता ह जो तब होती हैं जबकि राज सत्ता एव धार्मिक सत्ता एक दूसरे के विरुद्ध हो जाती हैं। ईसा की ग्रभिलाषा थी कि धार्मिक एव लौकिक दोनो प्रकार की तलवारो का प्रयोग उसके चच की सुरक्षा के लिए होना चाहिए। ग्रन्तत यह सबसे महत्वपूर्ण है कि वह धम बहिष्कार की शक्ति के बुद्धि रहित उपयोग के भयान खतरे की ग्रोर ध्यान ग्राकर्षित करता ह तथा कहता ह

कि यह बहुत सदिग्ध है कि किसी ऐसे व्यक्ति को धर्म-बहिष्कृत करना बुद्धिमत्तापूर्ण होगा जिसके अनेक अनुयायी हो जिससे इस प्रकार के कठोर न्याय के प्रयोग से अच्छाई के स्थान पर अधिक अपकीर्ति हो।[71]

यह स्पष्ट है कि ज्यौफ्री को लौकिक सत्ता के दिव्य उदय के बारे म कोई स देह नही था तथा धर्म बहिष्कार के अनियन्त्रित उपयोग की बुद्धिमत्ता के विषय म एक ऐसे व्यक्ति के सन्देह जो पोप की गद्दी का दृढ समथक रहा है अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

इस पुस्तक के इस भाग म जिस अन्तिम ग्रन्थ का हम विवचन करेंगे वह है सुम्मा ग्लोरिया (Summa Glorea) जो ग्रास्बर्ग के होनोरियस[72] द्वारा लिखा गया था। यह ग्रन्थ सम्भवत वार्म्स के समझौते के बहुत अधिक समय बाद नही लिखा गया तथा पोपवादी परम्परा के एक कट्टर समथक के दृष्टिकोण को व्यक्त करता है किन्तु होनोरियस 1076 ई से 1122 ई तक के सघर्ष की परिस्थितियो के निरूपण के लिए उतना व्यग्र नही जितना दोनो महान सत्ताओ के उदय तथा स्वरूप के विश्लेषण एव तुलना के प्रयत्न मे सलग्न है। उसकी स्थिति बडी विचित्र है क्योकि उसके सिद्धान्त लगभग कई विषयो में अत्यन्त उग्र हैं जबकि उसके व्यावहारिक निष्कर्ष किसी सीमा तक मध्यस्थतावादी तथा उदारतापूर्ण हैं।

वह अपने ग्रन्थ का आदि व अन्त धार्मिक सत्ता की उत्कृष्ट गरिमा के प्रबल समथन से करता है तथा उसको अनेक प्रकार स प्रदर्शित करता है। वह एबल (Abel) को पुरोहित के पद का तथा केन (Cain) को राजकीय पद का प्रतीक मानता है शम (Shem) का जो प्रथम यथार्थ पुरोहित है वह पूर्वाचार्य परम्परा के अनुसार मेलचीजेडेक (Melchi Jedek) से तादात्म्य स्थापित करता है जबकि रोमन साम्राज्य जाफेठ (Jophet) का उत्तराधिकारी है तथा वह इसी प्रकार की दो सत्ताए आइजक तथा इश्मायल (Issac and Ishmael) तथा जेकब व इसाउ (Jacob and Esau) को मानता है। जसे किसान उपयाजक (Deacon) के अधीन हैं सिपाही पादरी के अधीन हैं राजकुमार विशप के अधीन हैं उसी प्रकार राजा पोप के अधीन हैं।[3] तथापि उसका यह प्रत्युत्तर दिया जाता है कि राजा एक साधारण व्यक्ति नही क्योकि पुरोहितो के तेल से उसका अभिषेक होता है किन्तु वह इस तर्क की घृणापूवक अवहेलना करता है और कहता है कि इसे सभी व्यक्ति स्वीकार करते हैं कि राजा का पद धार्मिक नही है किन्तु वह एक साधारण व्यक्ति है जो किसी भी पादरी स सम्बद्ध काय को नहीं कर सकता और वह एक शास्त्रीय अन्तर भी प्रदर्शित करता है कि राजा का अभिषेक केवल तेल से होता है जबकि पुरोहित का अभिषेक पवित्र निपेचन से होता है तथा यह भी बतलाता है कि राजा का अभिषेक दूसरे राजा द्वारा न होकर पुरोहितों द्वारा होता है।[74]

इस प्रकार होनोरियस का दृष्टिकोण स्पष्ट है कि पुरोहित का गौरव राजकीय गौरव स श्रेष्ठ है। किन्तु वह इससे भी आगे बढ जाता है तथा लौकिक सत्ता के उदय एव स्वरूप के विषय म एक सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है जो हमारे विचार म पूर्णतया नवीन ही नही सामान्य परम्पराओ से भी भिन्न है। जसा हम अनेक बार दिखला चुके हैं धर्माचार्यों का सामान्य सिद्धान्त यह था कि लौकिक सत्ता ईश्वर के द्वारा स्थापित है।

पाँचवीं शताब्दी में जिलेसियस ने यह प्रतिपादित किया था कि ईसा ने स्वयं इन दोनों सत्ताओं को बनाया तथा पृथक किया है जो कि संसार का शासन चलाने वाली हैं नवीं शताब्दी से इस सिद्धान्त में यह परिवर्तन आ गया कि ईसा ने अपने चर्च में यह दो सत्ताएँ बनायी हैं।[75] होनोरियस एक पूर्णतया विभिन्न दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। वह पहले यह सिद्ध करता है कि मूसा से सेम्यूएल के समय तक इजरायलियों पर राजाओं का न होकर पुरोहितों तथा पैगम्बरों का शासन था वह सैमुएल ही था जिसने राजपद को स्थापित किया पुरोहित तथा पैगम्बर ही राजाओं का निर्वाचन तथा अभिषेक करते रहे तथा निर्वाचन के बाद पुनः पुरोहित इजरायल पर राज्य करने लगे।[6] जब सच्चा राजा तथा पुरोहित ईसा आया तो उसने अपने चर्च को कानून प्रदान किए तथा उसने चर्च पर शासन करने के लिए धार्मिक सत्ता की स्थापना की न कि राज-सत्ता की तथा धार्मिक सत्ता पर अधिकार उसने पीटर को प्रदान किया जिसने यह अधिकार अपने उत्तराधिकारियों को दे दिया। इस प्रकार ईसा के समय से लेकर सिल्वेस्टर के समय तक चर्च का शासन केवल पुरोहितों के हाथों रहा।[77]

वास्तव में यह एक दूरगामी तथा मूलभूत धारणा है एक ऐसी धारणा जो पारम्परिक धार्मिक सिद्धान्तों से मेल नहीं खाती। इस कथन के बाद कान्सटेंटाइन के दान का प्रयोग एवं व्याख्या दी गयी है जिसका जहाँ तक हम जानते हैं कोई प्राचीन प्रतिरूप उपलब्ध नहीं होता। होनोरियस कहता है कि अन्त में वह समय आ गया जब कि ईश्वर ने अत्याचार के युग को शान्ति के युग में तथा मूर्तिपूजकों के विद्रोहपूर्ण साम्राज्य को ईसाइयों के शासन में बदल दिया। कान्सटेन्टाइन का सिल्वेस्टर ने जो चर्च के पुरोहितों का राजा था धर्म परिवर्तन किया था उसने साम्राज्य का मुकुट रोमन पोप के मस्तक पर रख दिया तथा घोषणा की कि कोई भी उसकी सहमति के बिना रोमन साम्राज्य को नहीं पा सकता। तथापि सिल्वेस्टर ने अनुभव किया कि जो पुरोहित के विरुद्ध विद्रोह करते हैं उनको ईश्वर के शब्दों की तलवार से ही शान्त नहीं किया जा सकता है परन्तु लौकिक तलवार से तथा उसी कान्सटेन्टाइन को ईश्वर के कार्य में सहकर्मी के रूप में सम्मिलित कर लिया जो मूर्तिपूजकों यहूदियों तथा धर्मद्रोहियों के विरुद्ध चर्च का संरक्षक बना उसे दुष्कर्म करने वालों को दण्डित करने के लिए तलवार प्रदान की तथा कल्याण के उत्कर्ष के लिए उस पर साम्राज्य का राजमुकुट रख दिया। अब उस समय से यह परम्परा बनी कि लौकिक न्याय के लिए चर्च को राजा तथा न्यायाधीश चाहिए। तथापि केवल लौकिक न्याय ही राजाओं के अधिकार में है तथा कान्सटेन्टाइन ने बिशपों के कार्यों का निर्णय करने में भाग लेना अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार जैसे शरीर की तुलना में आत्मा का गौरव अधिक होता है लौकिक की तुलना में धार्मिक का उसी प्रकार धार्मिक सत्ता का गौरव राजकीय सत्ता से कहीं अधिक है जिसको वह स्थापित करती है तथा आज्ञा देती है।[8]

वास्तव में होनोरियस की स्थिति नवीन एवं विस्मयजनक है। कान्सटेन्टाइन के दान की ऐसी व्याख्या जहाँ तक हमें विदित है पहले नहीं की गई। जैसा हम देख चुके हैं प्लेसीडस ने दान का अर्थ यह लिया है कि कान्सटेन्टाइन ने अपने साम्राज्य का पश्चिमी

भाग पोप को हस्तांतरित कर दिया तथा उसका अर्थ यह भी हो सकता है कि सिल्वेस्टर ने चर्च के सेवक के रूप में उसका शासन चलाने के लिए उसे कान्सटेन्टाइन को प्रदान कर दिया किन्तु होनोरियस दान की व्याख्या सम्पूर्ण राजनीतिक सत्ता के पोप को समग्र हस्तान्तरण से करता है तथा यह प्रतिपादित करता प्रतीत होता है कि इस समय से लेकर इस प्रकार की सम्पूर्ण सत्ता वास्तव में लौकिक शासकों द्वारा धार्मिक सत्ता से ही प्राप्त की गई। किन्तु यहीं कथा समाप्त नहीं हो जाती क्योंकि होनोरियस का यह अभिप्राय प्रतीत होता है कि कान्सटेन्टाइन का कार्य केवल सामान्य दैवी व्यवस्था की स्वीकृति मात्र है वह प्रतिपादित करता है कि ईसा ने दो सत्ताओं को चर्च का शासक नियुक्त नहीं किया है किन्तु केवल धार्मिक सत्ता को ही बनाया है तथा दैवी व्यवस्था के अन्तर्गत ही वास्तव में सभी सत्ताएं निहित हैं। अतः यह प्रतीत होगा कि कम से कम होनोरियस कुछ उत्तर कालीन लेखकों द्वारा प्रतिपादित इस सिद्धान्त का सुझाव दे रहा है कि सम्पूर्ण सत्ता चाहे वह धार्मिक हो अथवा लौकिक चर्च एवं उसके अध्यक्ष पोप में निहित है तथा सभी लौकिक शासक जिस सत्ता को धारण करते हैं वह उनको धार्मिक सत्ता द्वारा प्रदान की गई है।[79] यह कभी क्या मध्यकाल में स्वीकृत सामान्य सिद्धान्त बन पाया इस पर हम बाद में विचार करेंगे किन्तु निश्चय ही यह सत्य है कि यह इसकी सर्वप्रथम अभिव्यक्ति है। वास्तव में यह भी कहा जा सकता है कि इसे ग्रेगोरी सप्तम ने प्रस्तुत किया था किन्तु चाहे यह सिद्ध किया जा सके कि यह उसके दावों में निहित है[80] यह निश्चित है कि इसका स्पष्ट अभिकथन उसमें नहीं है।

सम्भवतः इसी धारणा से हमें होनोरियस की घोषणा को सम्बद्ध करना होगा कि सम्राट का निर्वाचन पोप द्वारा राजाओं की सहमति तथा जनता की स्वीकृति से होना चाहिए। वास्तव में अन्यत्र वह दावा करता है कि वे लौकिक राजा नहीं बल्कि बिशप वास्तविक निर्वाचक थे किन्तु होनोरियस के तर्क का प्रधान बल उसकी इस मान्यता में प्रतीत होता है कि नियुक्ति का अधिकार पोप तथा आध्यात्मिक राजाओं में निहित है तथा वह यह प्रतिपादित करते हुए समापन करता है कि राजकीय सत्ता वैधानिक रूप से धार्मिक सत्ता के अधीन है तथा इसका कारण यह है कि धार्मिक सत्ता ने ही राजकीय सत्ता को स्थापित किया है।[81]

इन दूरगामी प्रभाववाली धारणाओं की तुलना में यह सापेक्ष रूप से तुच्छ विषय प्रतीत होता है कि होनोरियस यह भी मानता है कि पोप का निर्वाचन कार्डीनलों द्वारा रोम के बिशपों तथा पादरियों की सहमति से तथा जनता के अनुमोदन से होना चाहिए। वह सम्राट की सहमति या स्वीकृति का उल्लेख नहीं करता और वह यह भी जानता है कि प्रत्येक नगर के बिशप का निर्वाचन बिशप क्षेत्रों के पादरियों द्वारा जनता के अनुमोदन से होना चाहिए एवं उसको मुद्रा एवं दण्ड से प्रतिष्ठापित पोप द्वारा किया जाना चाहिए।[8]

तथापि अब हम ध्यान रखना चाहिए कि धार्मिक एवं लौकिक सत्ता के सम्बन्धों में होनोरियस के सिद्धान्तों का एक अन्य पक्ष भी है जो वास्तव में औपचारिक रूप से हमारे द्वारा अभी निरूपित सिद्धान्तों से असंगत नहीं किन्तु इस पर आधारित कुछ निष्कर्षों को

सशोधित करने की दृष्टि से पर्याप्त रूप स महत्वपूर्ण है।

वह सुस्पष्ट रूप से मानता है कि एक प्रयाजक के रूप म राजा दवी विषयों में धार्मिक अध्यक्ष अर्थात् चच के अध्यक्ष पोप के अधीन है इसी प्रकार पोप एव सभी पादरी लौकिक मामलों म राजा के अधीन हैं एव वह यह भी मानता है कि प्राचीन विधान मे भी यही सत्य था। राजा की नियुक्ति पुरोहित अथवा पगम्बर करते थ दवी कानून से सम्बन्धित विषयों म उनकी आज्ञा का पालन करते थे किन्तु पगम्बर एव पुरोहित भी सभी लौकिक मामलों म राजाओं की आज्ञा का पालन करते थे।[83]

दूसरे कुछ भावग्रंशों म वह लौकिक सत्ता के उद्भव तथा स्वरूप के सिद्धान्तों का कुछ विस्तार से एव निश्चितता पूवक विवेचन करता है। वह स्तोइक तथा पूर्वाचार्यों की परम्परा का अनुकरण करता है कि मूल रूप में ईश्वर ने अपने मनुष्य को अपने सह मनुष्यों पर अधिपति नहीं बनाया किन्तु मनुष्यों के पापों तथा बुद्धिहीन आचरण के कारण ही ईश्वर ने कुछ लोगों को दूसरों पर अधिकारो से सम्पन्न किया ताकि मनुष्य वास्तविक मानवीय जीवन व्यतीत करने के लिए भय द्वारा नियन्त्रित किए जा सकें। चच के शासन के लिए ससार में दो तलवारों की आवश्यकता है धार्मिक जो कि धार्मिक सत्ता के हाथों में है तथा भौतिक जो कि राजकीय सत्ता के हाथों मे है जिससे वह उनको दण्ड देता है जो दुष्टता म रत हैं।[84] इस प्रकार लौकिक सत्ता स्वय ईश्वर की सस्था है तथा लौकिक विषयों मे उसकी आज्ञा पालन केवल जनता ही नहीं पादरियों द्वारा भी किया जाना चाहिए। प्राचीन काल के ईसाई लौकिक विषयों में मूर्ति पूजक राजाओं की आज्ञा का पालन करते थे जबकि धार्मिक विषयों में वे केवल ईश्वर के अनुयायी थे क्योंकि केवल अच्छे ही नहीं बुरे शासकों का भी आज्ञा पालन करना चाहिए। सत पाल एव सत पीटर ने सीधी सादी शिक्षा दी है कि लौकिक सत्ता ईश्वर द्वारा आदिष्ट है।[85] अनत यह प्रतीत होगा कि होनोरियस का मत था कि चाहे राजा रोमन धर्म-पीठ के विरुद्ध विद्रोह भी करे अथवा धर्म द्रोह धर्म त्याग अथवा धर्म मे फूट डालने म सलग्न भी हो तो निष्ठावानों को यद्यपि उससे सभी सम्पर्क को त्याग देना चाहिए तथापि धैर्यपूर्वक उसे सहन करना चाहिए।[86]

यदि अब हम इन ग्रन्थों म जिनकी इस अध्याय म हमने परीक्षा की है कहे गए तथा व्याख्या किए गए सिद्धान्तों के सामान्य स्वरूप को सक्षिप्त करने का प्रयास करें तो हम पायेंगे कि यह सन्दिग्ध है कि कहाँ तक इन लेखकों के समक्ष सम्पूर्ण विषय की तर्कसगत धारणा थी और जब कि उनम स्पष्ट और दूरगामी मतभेद भी हैं यह भी निश्चित है कि कुछ स्थलों पर उनम एकता न मात्र सी है।

सर्व प्रथम उनको इसम कोई सदेह नहीं था कि लौकिक सत्ता एक दिव्य सस्था है जसी कि धार्मिक सत्ता है। ह्यु सटेडिट तथा होनोरियस सुस्पष्ट रूप मे इस पर बल देते हैं यद्यपि वे इसका मूल उद्भव पापो के कारण मानते हैं। इसलिए जब पत्रूरी के ह्यु तथा केन्टोनो के ग्रेगोरी ने इस दिव्य सत्ता पर बल दिया तथा जब ह्यु ने लौकिक शासन के उदय के बारे मे हिल्डेब्राण्ड के वाक्यो के उस अभिप्राय का जसा वह समझता था निराकरण किया वे वास्तव म उस सिद्धान्त से भिन्न किसी सिद्धान्त का प्रतिपादन नहीं कर रहे थे जिस

ह्य सवेंडिट तथा होनोरियस सच्चा मानते।

पुन जसा हम देख चुके हैं ह्यूमबेन्नि बन्न उमुन था कि यह समझा जाए कि यह निर्साग है कि प्रत्यक सत्ता का अपना उचित क्षेत्र है जिसम दूसरी सत्ता को हस्तक्षेप नही करना चाहिए ज्योफ्रो तथा होनोरियस सुस्पष्ट रूप स इस पर बल देते हैं कि सभी पादरी तथा होनोरियस इसम विशेष रूप से पोप को भी सम्मिलित करता है लौकिक विषयो म लौकिक सत्ता क अधीन हैं।

उनम महान सघष द्वारा उठाए गए कुछ व्यावहारिक प्रश्नो के प्रति लगभग एक-सी ही प्रवृत्ति भी देखी जा सकती है यद्यपि मेन्गलाउ क मीनग्ग को राजा को धम बहिष्कृत करने के विषय म सदेह था तथा उसन यह सुझाया कि हनरी चतुथ का धम-बहिष्कार अन्यायपूर्ण था तो पफूरी का ह्यू भी यद्यपि वह पोप की नीतियो का प्रबल आलोचक था यह स्पष्ट कर देता है कि विशप राजा को धम-बहिष्कृत कर सकता है जबकि ज्योफ्रो *जो यद्यपि पोप के मत का प्रबल समथक था सम्भवत राजाओ के धम-बहिष्कार की न्याय* सगतता पर नही किन्तु निश्चित रूप से बुद्धिमत्ता पर सन्देह व्यक्त करता है। पुन जब कि *मीजबग फ्लूरी का ह्यू तथा केटीना का ग्रेगोरी इस मान्यता का प्रबल खण्डन करते हैं कि* पोप राजा का पदच्युत कर सकता है अथवा उनकी प्रजा को निष्ठा स मुक्त कर सकता है होनोरियस का यह अभिप्राय प्रतीत होता है कि निष्ठावान व्यक्तियो को धमद्रोही तथा धम म फूट डालन वाले राजा क सम्पर्क स बचना चाहिए परन्तु उसकी राजनीतिक सत्ता को धय पूवक स्वीकार करना चाहिए।

अत यह कहा जा सकता है कि हम इन लखको म लौकिक सत्ता का दवी उत्पत्ति क सम्बन्ध म एक वास्तविक सहमति पाते हैं तथा अपन युग क व्यावहारिक प्रश्नो पर उनक दृष्टिकोण म निकटता की प्रवृत्ति पाते हैं। हमन इस पुस्तक के प्रारंभिक खण्ड म उन विभिन्न स्थितियो का खोजन का प्रयास किया जिनम कि प्रतिष्ठापन के प्रश्न पर अन्तिम रूप से समझौता हो सका और कुछ पोप के पक्ष क लखको क बारे म यह कहना सत्य होगा कि व प्रारंभिक रूप स चच की धार्मिक स्वतंत्रता के समथन म लीन थे तथा उनको यह प्रतिपादन करन की इच्छा नहीं थी कि चच या पोप को लौकिक सत्ता के ऊपर कोई सामान्य प्रभुत्व का अधिकार है।

दूसरी ओर यह कहा जा सकता है कि कुछ लखको म हम दोनो सत्ताओ के सम्बन्धो क सिद्धान्त का अतिरिक्त विकास खोज सकते हैं। फ्लूरी के ह्यू न इस पर बल दिया कि ईश्वर की जो पिता है राजा प्रतिमूर्ति है तथा विशप ईसा की और इसीलिए साम्राज्य के सभी विशप ठीक ही राजा क अधीन थे जिस प्रकार कि ईसा पिता ईश्वर के अधीन है प्रकृति म नही अपितु आदेश से तथा Universitas regni को ad unum principium म बदला जा सकता है।

ट्रक्टस ईबोरसेन्सस क लखक न जसा कि हम देख चुके हैं इसी प्रकार के वाक्यो का प्रयोग किया है किन्तु विषय को और आगे बढ़ाया है तथा वह यह मानता प्रतीत होता है कि राजकीय सत्ता अपनी प्रकृति की दृष्टि स पुरोहित की सत्ता से अधिक बड़ी है तथा राजा जो कि साधारण प्रशासक नहीं है धार्मिक मामलो म भी महान सत्ता से सम्पन्न

है। केटोना व ग्रेगोरी न कहा है कि राजा चच का अध्यक्ष था तथा इसीलिए यह उचित था कि बिशप राजा स मुद्रा एव दण्ड द्वार प्रतिष्ठापन प्राप्त कर क्योंकि वह चच का अध्यक्ष था अत उसे चच के सदस्या के पद या पुरोहितों[6] की मृष्टि से वचित नहीं रखा जा सकता। वास्तव म इन वाक्या की व्याख्या सुगम नही है किन्तु हम सभवत बहुत अधिक गलती पर नही होंगे यदि हम इनको धार्मिक दावा के प्रति प्रतिक्रिया के रूप म लें। तथापि हम यह ध्यान रखना चाहिए कि वही पत्री का हा जो आग्रहपूर्वक यह प्रतिपादित करता था बिशप अपने पद की गरिमा म राजा स उतना ही श्रेष्ठ है जितना कि दिव्य प अपनी पवित्रता में लौकिक मामला म श्रेष्ठ है तथा वह लौकिक न्यायालयों के निर्णय के अधीन नहा। तथापि ह्यू तथा सीग्रबट यह दिखलाते हैं कि किस प्रकार अनेक बार सम्राटो ने हा पोप पद की भ्रष्टाचार भरी परिस्थितियो को सुधारा है तथा वे यह मानना अस्वीकार कर देते है कि पोप मानवीय न्याय से परे है तथा यह प्रतिपादित करते हैं कि उन्ह भत्सना एव दण्ड का स्वीकार करना चाहिए।

यदि इन लेखको को लौकिक सत्ता के समर्थकों की स्थिति के उच्चतम पहलू का प्रतिनिधित्व करने वाला म माना जाए तो प्लसीडस तथा होनोरियस पोपवादी दल की स्थिति म एक नए विकास का प्रतिनिधित्व करते हैं। हम उनके द्वार कान्सटन्टाइन क दान के विवरण तथा व्याख्या का विवेचन कर चुके है किन्तु चाहे व महत्वपूर्ण हो होनोरियस के द्वारा प्रतिपादित लौकिक सत्ता के धार्मिक सत्ता के अधीन होने के सिद्धान्तो की तुलना म उसका महत्व बहुत थोड़ा है। होनोरियस की मान्यता बहुत रोचक है तथा उसका उल्लेख करने का अवसर हम बाद म भी मिलेगा यहाँ हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि यदि इसका कोई सम्बन्ध हिल्डब्राण्ड के कुछ दावो से हो तथा यह तर्क दिया जा सके कि ये उन दावा म अन्तर्निहित है ता यह स्पष्टतया समझ लेना चाहिए कि इसकी कोई समानता उस साहित्य म नहीं मिलती जिसका विवेचन हम इन दो अध्यायो म कर रहे थे।

सन्दर्भ

1 Cf H k Krch ge h ht D t bl d ol p 852
2 J ff M e t B mbe g p 503
3 M C l x p 715
4 Id d x p 723 C ll m M l fit n 8
5 B ld Chr con 1089 1091
6 Id d 1095
7 M C l p 815 ff
8 B ld Ch 1095
9 Jaff W tt b h Reg t 5817
10 S g be t f G mblo Le d ceo m Ep tol d p h l m P p m
11 Jaffe W tte ba h Reg t 5868 5908 5928 5956 5960
12 Id d 5909
13 A l H ld s 1105
14 Ekk h d Ch n 1105
15 J ff M m t M g t p 379
16 D d d t L bell contr n o e et ym P l g e

17 Cf vol ı p 147
18 Cf v l ı pp 233 235
19 Deusded t Libell s contra Invasores et Symoni cos ı 12
0 Cf v l ıı p 99
21 Cf vol ıı pp 80 and 227 233
22 उसने इसका दृढ़ता से खण्डन किया है कि पोप के चुनाव पर साम्राज्य की पुष्टि वांछित है पृ 92–93।
23 Cf the admirable k of A C uch e *La Querelle des In e tture d s* les d oce s d L g et de Cambra Paris 1890
4 S gebe t of Gemblo Leod cen *um Ep stola ad us Paschal m* Papam 7
5 *Id id 6*
6 Id id 9
7 *Id id 11*
28 Id d 8
9 *Id id 1 4 10 13*
30 Id id 4
31 *An lm G ta Ep copor n Le di* cens m 6 64
3 *Id id 10*
33 Cf Ed t in Lib d Lit 1
34 *Cf p 04*
35 H gh f Fl u y Tract t s de Re *g a Potestate et Sa d otal D gn ıa* ti 1 1
36 *Id d. ı*
37 Id d Prolog e f ı 4
38 Id id ı 10
39 Id id ı 7
40 Id id ı 12
41 Id id ı 4
4 Id d ı 10
43 *Cf p 102.*
44 Id d ı 4
45 Id d ıı 3 4 5
46 प्रश्न के पूर्ण विवरण के लिए देख—H Bohmer Kirche and Staat in England and in der Normandie इससे मुझे बहुत सहायता मिली है।
47 *Cf Vol ı pp 149 215*
48 Tra tatus Eboracencse ıv (p 665)
49 *Id id (p 666)*
50 Id id (p 667)
51 Id id (p 669)
5 Id id (p 670)
53 Id id (p 672)
54 Id id (p 675)
55 Id id (p 679)
56 Id id (p 678)
57 Id d (p 667–668)
58 Id d ı (p 656)
59 Id d (p 657)
60 Id d (p 659)
61 Id v (p 680)
62 Id id (p 681)
63 Id id (p 684)
64 देख खण्ड 3 तथा इस खण्ड मे भाग 2 अध्याय 3।
65 *Grego y of Catino Orthodoxa De*fens o Imperialis 2.
66 Id d 6
67 भाग 2 अध्याय 6।
68 देखें खण्ड 1।
69 Plac dus of Nonantula Liber de Honore Eccl si 57
70 देखें भाग 2 अध्याय 7।
71 लगता है यह गद्यांश बाद म जोड़ा होगा Cf Lib De Lit 1 ı p 678
72 Geoggrey About of Vendome Libellus iv., Augustodunensis का यही तात्पर्य प्रतीत होता है।
73 *Hono ius Augustodunens s Summa* Glona 1
74 Id id 9
75 देख खण्ड 1।
76 *Id d 18–14*
77 Id id 15
78 *Id id 16 17 18*
79 Cf Gierk Polit cal Theori of th Middle Ag s p 11 and Note 9 t 0
80 Cf speci lly pp 200–209
81 H oriu Summa Glo ıa 21
8 Id id 19
83 Id id 9
84 *Id d 26*
85 Id d 24
86 Id id 7

चतुर्थ अध्याय

पोप-पद की सामन्ती सत्ता का विकास

हम समीप से ग्रेगोरी सप्तम की नाति क दूसरे पक्ष का विचार करना चाहिए यह उसका सतत प्रग्न प्रतीत होता है कि पोप के विभिन्न देशों एव प्रान्तो पर सामन्ती प्रभुत्व के दावे का सिद्ध कर सकें। वास्तव म हम नहीं कह सकते कि इस नीति के ग्रेगोरी के पोप पद के कार्यकाल से पूर्व कोई उदाहरण नहीं थे वस्तुत यह सत्य है कि उसके विकास के कुछ सबसे महत्वपूर्ण कदम उसके ठीक पूर्वाधिकारियों द्वारा उठाये गए थे किन्तु यह माना जा सकता है कि तब भी हिल्डेब्राण्ड ने ही इस नीति को प्रेरित किया था।

इस विषय का कम से कम एक संकेत सिल्वेस्टर द्वितीय के पोप पद जितना प्राचीन है। यह एक पत्र मे विद्यमान है जिसमे कहा गया है कि हंगरी के राजा स्टीफन ने अपने आपको पोप की निगरानी के लिए समर्पित कर दिया है।[1] यद्यपि इस पत्र की प्रामाणिकता पर कुछ आलोचकों ने सन्देह किया है तथापि अन्य ने इसका समर्थन किया है। यद्यपि यह स्पष्ट है कि चाहे विभिन्न राज्यों पर पोप के सामन्ती प्रभुत्व की स्थापना की नीति प्राचीन काल से ही विद्यमान है तथापि ग्रेगोरी सप्तम के ठीक पहले के पूर्वाधिकारियो के काल से ही यह महत्वपूर्ण हो गई है। यह कहना तर्कसंगत प्रतीत होगा कि यह नीति एक ऐसी व्यवस्था को संगठित करने के प्रयास का प्रतिनिधित्व करती है जिसके द्वारा साम्राज्य तथा रोम नगर दोनों के ही साथ सम्बन्ध में पोप के पद की राजनीतिक स्वतन्त्रता प्रभुत्व ... द्वारा ही ... ...

महत्वपूर्ण परिणाम ... का अवसर उपलब्ध होगा।

इस नीति का प्रथम एव सर्वाधिक महत्वपूर्ण विकास पोप एव दक्षिण इटली के नारमनो के बीच सामन्ती सम्बन्धों की स्थापना में पाया जाता है। कार्डीनल डयूसडेडिट ने अपने ग्रन्थ कलेक्शियो कनोनम (Collectio Cenonum) नामक ग्रन्थ म राबर्ट ग्युसकार्ड (Robert Guiscord) द्वारा 1059 ई० म पोप निकोलस द्वितीय के प्रति की गई निष्ठा की प्रतिज्ञाओ को सुरक्षित रखा है। वह अपने को ईश्वर तथा सत पीटर की कृपा से एपुलिया तथा कलाब्रिया (Apulia and Calabria) का ड्यूक घोषित करता

है तथा उनकी सहायता से सिसली का ड्यूक होने वाला बनाता है तथा इस दान की पुष्टि एवं उसके लिए देय निष्ठा को मान्यता देते हुए वह संत पीटर, पोप निकोलस तथा उसके उत्तराधिकारियों को वार्षिक नजराना देने की प्रतिज्ञा करता है। वह प्रतिज्ञा करता है कि वह पवित्र रोमन चर्च के प्रति निष्ठावान बना रहेगा तथा पोप निकोलस तथा रोमन चर्च की निष्ठा को छोड़कर किसी के प्रति निष्ठा की शपथ नहीं लेगा।[2] ड्यूसडेडिट उस निष्ठा की शपथ को भी उद्धृत करता है जो कि कापुआ के राजा रिचर्ड द्वारा तथा कापुआ के राजा जोर्डेनस (Jordanus) द्वारा पोप एलेक्जेण्डर द्वितीय के प्रति ली गई थी।[3]

इस नीति के विकास का महत्त्वपूर्ण बात यह है कि पोप एलेक्जेण्डर द्वितीय ने विजेता विलियम को लिखा तथा घोषणा की कि ईसाई धर्म के अंगीकार करने के काल से ही अंग्रेजी राज्य पोप के धर्मासन के संरक्षण में (Sub apostolorum Principe manu et tutela) रहा है तथा पोप की गद्दी को एक वार्षिक रकम अदा करता है जिसका एक भाग पोप को मिलता था तथा एक भाग संत मेरी के चर्च को जिसे स्कोला एंग्लोरम (Schola Anglorum) कहा जाता था।[4] तथापि सामन्ती प्रभुत्व के इस दावे का विलियम द्वारा जोरदार खण्डन किया गया उसने इस आधार पर निष्ठा रखने से अस्वीकार कर दिया कि उसने वैसा करने की प्रतिज्ञा नहीं की थी तथा उसके पूर्वाधिकारियों ने कभी ऐसा नहीं किया था परन्तु उसने प्रतिज्ञा को कि धन दिया जाएगा।[5]

अतः यह स्पष्ट है कि ग्रेगोरी सप्तम के पोप की गद्दी पर पदारोहण के पूर्व पोप की गद्दी के सामन्ती प्रभुत्व के विस्तार की नीति सुविकसित थी किन्तु यह भी स्पष्ट है कि अपने पोप पद के कार्यकाल में उसने इसके विस्तार का कोई भी अवसर नहीं खोया। वह सर्वप्रथम दक्षिण इटली में नारमनों के साथ इस सम्बन्ध को बनाए रखने में सावधान रहा। कापुआ के रिचर्ड द्वारा सितम्बर 1073 ई० में ग्रेगोरी सप्तम के प्रति ली गई निष्ठा की शपथ में महत्त्वपूर्ण व्यवस्थाएँ हैं। रिचर्ड अपने को ईश्वर तथा संत पीटर की कृपा से कापुआ का सामन्त घोषित करता है तथा प्रतिज्ञा करता है कि वह पवित्र रोमन चर्च तथा विश्वव्यापक पोप ग्रेगोरी के प्रति निष्ठावान रहेगा। वह प्रतिज्ञा करता है कि वह उसको तथा रोमन चर्च के राजचिह्नों को प्राप्त करने तथा सुरक्षित रखने तथा संत पीटर की सम्पत्ति को सभी मनुष्यों से बचाने में सहायता करेगा तथा रोमन पोप पद की सुरक्षा एवं सम्मान को बनाए रखने में ग्रेगोरी की मदद करेगा। वह ग्रेगोरी तथा उसके उत्तराधिकारियों द्वारा अनुमोदित होने पर राजा हेनरी के प्रति निष्ठा की शपथ ले लेगा किन्तु सदैव रोमन चर्च के प्रति अपनी निष्ठा बनाए रखेगा। पोप की गद्दी रिक्त होने की दशा में सर्वश्रेष्ठ कार्डीनलों रोमन पादरियों एवं जनता के प्रबोधनानुसार पोप के निर्वाचन में सहायता देगा।[6] रॉबर्ट ग्यूसकार्ड द्वारा सन् 1080 ई० में ग्रेगोरी सप्तम के प्रति ली गई शपथ भी व्यावहारिक रूप से वही है।[7] यह उल्लेखनीय है कि इन शपथों में जबकि नारमनों ने जर्मन राजा के प्रति निष्ठा की शपथ लेने की अपनी सहमति तो व्यक्त की किन्तु वे पोप की स्वीकृति से वैसा करने को तैयार हैं तथा रोमन चर्च के प्रति अपनी निष्ठा को भी सुरक्षित रखते हैं। ये वाक्यांश पुराने एवं अधिप्रभु (Overlord) के प्रति

कर्तव्यों को सुरक्षित रखते हुए प्रभु (Lord) के प्रति की गई शपथ के समान हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि ग्रेगोरी नारमनों के साथ पोप की गद्दी के सम्बन्धों का वास्तविक वर्णन करता है जब 1076 के एक पत्र में वह कहता है कि वे ईश्वर के बाद केवल सन्त पीटर को ही अपना स्वामी तथा सम्राट बनाना चाहते हैं।[8]

1073 ई० तथा 1077 ई० में ग्रेगोरी सप्तम द्वारा लिखे गए पत्रों में स्पेन पर भी वैसा ही दावा प्रदर्शित किया गया। पहला स्पेन के कुछ भागों को अरबों (Saracens) से वापस लाने के लिए प्रस्तावित प्रयत्नों के विषय में लिखा गया है तथा ग्रेगोरी दावा करता है कि स्पेन के साम्राज्य पर प्राचीन काल से ही सन्त पीटर का स्वामित्व था तथा अब भी यद्यपि मूर्ति पूजकों ने उस पर अधिकार कर रखा है वह किसी मरणधर्मा मनुष्य के स्वामित्व में न होकर पोप की गद्दी के स्वामित्व में है। अतः उसने उसे काउन्ट इवूलुस डिरोसियो (Count Evulus de Roceio) को प्रदान कर दिया है जो इस भूमि को मूर्तिपूजकों से मुक्त करना चाहता है तथा वह जिस भूमि से उनको हटा देगा वह सन्त पीटर की सत्ता से उसके अधिकार में रहेगा।[9] 1077 ई० का पत्र भी इसी दावे को दोहराता है कि स्पेन प्राचीन संविधानों के अनुसार सन्त पीटर तथा रोमन चर्च के अधीन है।[10]

दूसरा दावा जो अत्यन्त उत्साहपूर्वक ग्रेगोरी सप्तम द्वारा किया गया था यह था कि हंगरी का साम्राज्य रोमन पोप के स्वामित्व में है। अक्टूबर 1074 ई० में हंगरी के राजा सोलोमन को लिखे गए पत्र में इस दावे के समर्थन में यह तर्क दिए, पहला यह कि राजा स्टीफन द्वारा सभी अधिकारों एवं शक्तियों सहित साम्राज्य को सन्त पीटर को सौंप देने का अभिकथित कार्य, दूसरा यह कि सम्राट हेनरी तृतीय ने हंगरी के राजा पर अपनी विजय के बाद राजमुकुट को सन्त पीटर की समाधि पर भेज दिया था तथा इस प्रकार उसके स्वामित्व के अधिकार को मान्यता दी थी। उसने जर्मनी के राजा से एक अधीन सामन्त के रूप में राज्य स्वीकार करने के लिए सोलोमन की भर्त्सना की तथा धमकी दी कि वह उसे पुनः खो देगा यदि वह स्वीकार नहीं करेगा कि उसका राज्य रोमन पोपत्व के अधीन है, जर्मन राजा के अधीन नहीं।[11] अगले वर्ष के पत्रों में ग्रेगोरी ने हंगरी के राजसिंहासन पर गूसा (Geusa) के दावे का इसी आधार पर समर्थन किया कि जर्मन राजा से एक सामन्त के रूप में उसे प्राप्त करके सोलोमन ने अपना अधिकार खो दिया है। यहाँ ग्रेगोरी का कार्य अधिक उल्लेखनीय है क्योंकि इसमें हंगरी पर जर्मन सम्राट के सामन्ती प्रभुत्व के दावों से संघर्ष निहित था।

1075 ई० में रूसिया के राजा डिमेट्रियस (Demetrius) को लिखे गए एक पत्र में ग्रेगोरी सप्तम कहता है कि डिमेट्रियस का पुत्र रोम आया था तथा अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक प्रार्थना की थी कि वह उस राज्य को सन्त पीटर के अनुदान रूप पोप के हाथों से प्राप्त कर सके। ग्रेगोरी ने यह समझकर कि यह अनुरोध डिमेट्रियस की सहमति से किया गया है इसकी अनुमति दे दी तथा सन्त पीटर के नाम पर यह साम्राज्य उसके पुत्र को प्रदान कर दिया तथा यह प्रतिज्ञा भी की कि सभी न्यायसंगत मामलों में वह उस पवित्र धर्मासन का समर्थन प्रदान करेगा।[12] उसी वर्ष के एक दूसरे पत्र में ग्रेगोरी ने डेनो

(Danes) के राजा स्वयन (Sweyn) को लिखा कि रोमन पोप के कानून सम्राट के कानूनों से अधिक दूर तक फैले हैं तथा जहाँ तक आगस्टस का शासन था वहीं तक ईसा का भी शासन था। स्वयन ने पोप एलेक्जेण्डर द्वितीय का संरक्षण माँगा था तथा ग्रेगोरी जानना चाहता है कि क्या अब भी उसकी वही इच्छा है।[13] 1077 ई० के कार्सिकनों (Corsicans) को सम्बोधित एक पत्र में वह उनको बतलाता है कि उनका द्वीप वैधानिक रूप से रोमन चर्च के अतिरिक्त किसी भी दूसरी सत्ता के अधिकार में नहीं है जो यह मानने से अस्वीकार करता है वह देवद्रोह का दोषी है तथा उसे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि वे संत पीटर के अधिकारों को मान्यता देने को प्रस्तुत हैं तथा वह उनको सैनिक सहायता भेजने को तैयार है।[14] 1079 ई० में वेजलिन (Wezelin) को लिखे गए एक पत्र में वह उसको चेतावनी देता है कि वह उसके विरुद्ध विचार न उठाये जिसे पोप पद की सत्ता द्वारा डालमशिया (Dalmatia) में राजा बनाया गया है तथा उसे यह बतलाता है कि वह इस राजा के विरुद्ध जो भी कार्य करेगा रोमन पोप के विरुद्ध होगा।[1] ड्यूसडेडिट ने निष्ठा की उस शपथ को सुरक्षित रखा है जो कि डालमशिया के साम्राज्य को प्राप्त करने के बाद डेमिट्रियस ने ग्रेगोरी में समर्पित की थी। वह स्वीकार करता है कि उसका राजत्व का प्रतिष्ठापन पोप के प्रतिनिधि के अन्तर्गत ध्वजा, तलवार, दण्ड एवं मुकुट द्वारा हुआ है तथा सामन्ती कर्तव्यों की सुनिश्चित शब्दावली में आज्ञापालन तथा निष्ठा की तथा नियमित रूप से वार्षिक कर प्रदान की प्रतिज्ञा करता है।[16] एक पत्र में ग्रेगोरी ने यहाँ तक दावा किया है कि चार्ल्स महान ने संत पीटर को सैक्सनी का प्रान्त प्रदान किया था तथा सैक्सनी के अधिकार में इसके लिखित प्रमाण हैं।[17] अतः ग्रेगोरी के रजिस्टर में 1081 ई० में प्रोवेंस (Provence) के काउन्ट बर्ट्रेण्ड (Bertrand) की एक घोषणा है कि वह अपनी सारी वंश परम्परागत गरिमा को ईश्वर, संत पीटर, संत पाल, ग्रेगोरी तथा उसके उत्तराधिकारियों को समर्पित करता है।[18]

रोमन पोप पद की सामन्ती सत्ता का विस्तार करने की इस अत्यन्त विकसित नीति की तुलना ग्रेगोरी सप्तम द्वारा पसाऊ के अल्टमान को सम्बोधित 1081 ई० के एक पत्र से करना न्यायोचित होगा तथा हमारा यह सोचना अयुक्तिमगत नहीं होगा कि यह पत्र जर्मन साम्राज्य पर भी पोप पद के सामन्ती प्रभुत्व के विस्तार की नीति की अभिलाषा का द्योतक है।

सन्दर्भ

1 Sylvester II Ep
2 Deusdedit Collect Canonum 156
3 Id id 159
4 Alexander II Ep 139
5 William the Conqueror Epistle (Greg VII)
6 Gregory Reg 21 (a)
7 Id id 11 1( )
8 Id id 15

9 Id id i, 7
10 Id id i 13
11 Id id i 63
12 Id d i 74
13 Id id i 75
14 Id id v 1
15 Id id vi 21
16 D usded t Coll ct o Can n m 150
17 Id id i 23
18 Id id 35

— —

चतुर्थ खण्ड

चच एव साम्राज्य 1122 ई० से 1177 ई० तक

प्रथम अध्याय

फ्रेडरिक प्रथम तथा पोप-पद

वाम्स के समझौते ने साम्राज्य तथा चच के बीच तीस वर्षों से अधिक समय तक शांति बनाए रखी तथा जब एक नया सघष प्रारम्भ हुआ तो उसकी परिस्थितियाँ और कारण भिन्न थे। यह कहना अधिक कठिन है कि इस शान्ति की प्रवृत्ति कसी थी कुछ ऐसे व्यक्ति हैं जो यह मानते हैं कि इस काल मे पोप पद की साम्राज्य पर विजय हो गई थी किन्तु यह बहुत सदिग्ध है कि इस मत का गभीर समथन किया जा सकता है। सत्य यह प्रतीत होता है कि मनुष्य हार्दिक रूप से सघष से ऊब चुके थे तथा किसी भी पक्ष म उसे पुन सुलगाने की बहुत थोडी इच्छा रह गई थी। निस्सदेह यह तक करना बहुत आसान है कि वाम्स के समझौते ने मामले को अतिम रूप से निश्चित नही किया तथा वास्तव मे यह भी सत्य है कि बिशप पदों या मठों की नियुक्तियो के प्रश्न पर कोई पूर्ण या अनिम समझौता नहीं हुआ था किन्तु यथाथत समग्र रूप से इस समझौते का कोई गभीर खण्डन नहीं हुआ तथा जो परिवतन आए वे धीरे धीरे तथा बिना किसी गभीर सघष के आए।

बनहीम का एक उत्कृष्ट प्रबन्ध बहुत स्पष्टता पूवक समझौते की शर्तों के प्रयोग एव व्याख्या के सम्बन्ध मे विभेदों की सीमाओं तथा विस्तार को प्रस्तुत करता है।[1] एक ओर तो यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि समझौते के सम्पादन के एक ही वष के अन्दर उसकी शर्तों का एक सस्करण विद्यमान था जो कि सम्राट की सत्ता को बहुत अधिक बढ़ा देता था—यह उसे विवादास्पद निर्वाचन की दशा मे अधिधर्माध्यक्ष तथा सम्प्रान्तीय बिशपों की सम्मति तथा निर्णय के बिना अपनी बुद्धि से ही मामले के निर्णय का अधिकार प्रदान करता था।[2] वाम्स के बाद 1122 या 1123 ई मे हेनरी पचम ने सत पाल के मठ के विवादास्पद निर्वाचन मे अपने न्यायालय से यह निर्णय प्राप्त किया कि विवाद के कारण यह उस की इच्छा पर ही निभर है कि वह चाहे जिसे नियुक्त करे।[3] यह प्रतीत होगा कि यही वह परम्परा थी जिसकी ओर फ्राइजिग (Freising) के ऑटो ने गेस्टा फ्रीडेरिकी (Gesta Friderici) म एक स्थान पर सकेत किया है जिस पर हम बाद मे

विचार करेंगे।[4] किन्तु ऐसा प्रतीत नहीं होता कि हेनरी पंचम के तत्काल उत्तराधिकारी लोथेयर तृतीय तथा कोनाड तृतीय में से किसी ने भी ऐसे अधिकार पर बल देने का कोई प्रयास किया हो।

दूसरी ओर यह प्रतीत होता कि उनमें से कुछ जो 1125 ई. में लोथेयर का सम्राट रूप में निर्वाचन करवाने वाले थे यह चाहते थे कि समझौते की शर्त चर्च के पक्ष में परिवर्तित कर दी जाए। इस निर्वाचन के एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विवरण के लेखक के अनुसार मेन्ज में यह निश्चय किया गया था कि बिशप का निर्वाचन स्वतन्त्र होना चाहिए तथा वह राजा की उपस्थिति एवं भय से नियंत्रित नहीं होना चाहिए तथा सम्राट स्वतन्त्र रूप से निर्वाचित तथा अभिषिक्त बिशप का प्रतिष्ठापन दण्ड द्वारा राज चिह्न से करें तथा उस समय बिशप यह शपथ ले Salvo quidem or dinis sui proposito इसका यह अभिप्राय प्रतीत होता है कि यह समझौता हुआ था कि वार्म्स की शर्तों में दो महत्वपूर्ण विषयों में परिवर्तन किया जाए—प्रथम यह कि निर्वाचन सम्राट की उपस्थिति में न हो तथा दूसरा यह कि अभिषेक के बाद न कि पहले लौकिक सम्पदाओं से प्रतिष्ठापन हो।

क्या इस वक्तव्य से यह सिद्ध किया जा सकता है कि इस आधार पर कोई समझौता हुआ था तथा लोथेयर भी इसमें एक पक्ष था बहुत संदिग्ध है बनहीम ने दूसरे ग्रन्थ में इसको स्पष्ट कर दिया है कि लोथयर के वास्तविक शासन ने किसी ऐसे समझौते की पुष्टि नहीं की किन्तु उसने वार्म्स के समझौते की शर्तों को सामान्यतः माना।[5]

यदि हम सत बर्नार्ड के जीवन चरित्र के एक वक्तव्य पर विश्वास करें तो लोथयर ने जब उसने 1131 ई. में लीज नामक स्थान पर पोप इन्नोसेंट द्वितीय से भेंट की तो निस्सदेह पोप-पद के विवादास्पद निर्वाचन का लाभ उठाते हुए उसने पहले की भाँति ही प्रतिष्ठापन को पुनः प्रारम्भ करने का आग्रह किया किन्तु इन्नोसेंट के पोप की गद्दी पर दावे का सबसे प्रबल समर्थक सन्त बर्नार्ड वहाँ उपस्थित था तथा उसके प्रभाव के कारण पोप की अस्वीकृति में बहुत अधिक प्रखरता मिली।[7] इस वक्तव्य की पुष्टि कुछ दूसरे उद्धरणों से भी होती है।[8] यह सम्भव है कि इसी घटना से कुछ सम्बद्ध रूप में हम इन्नोसेंट द्वारा रोम की पुनः प्राप्ति तथा जून 1133 ई. में लोथयर के सम्राट रूप में अभिषेक के बाद जारी किए गए उसके घोषणा-पत्र को रखना चाहिए जिसमें दृढ़तापूर्वक जर्मन साम्राज्य के बिशपों एवं मठाधीशों को जब तक वे उन्हें सम्राट से प्राप्त न कर लें तब तक राज चिह्न के धारण का निषेध किया गया है।[9] यह सम्भव प्रतीत होता है कि राजकीय माँग को किसी सीमा तक संतुष्ट करने के लिए ही पोप द्वारा इसे जारी किया गया था तथा यह विषय बहुत महत्वपूर्ण था क्योंकि बिशप या एबट की लौकिक एवं धार्मिक सत्ता के इसी विभेद पर ही वार्म्स का समझौता आधारित था।

लोथयर के उत्तराधिकारी कोनाड तृतीय की स्थिति की परीक्षा विट्टे (Witte) ने बड़ी सावधानी से उसके राज्यकाल के पादरियों व निर्वाचनों पर लिखे गए प्रबन्ध में की है तथा यह प्रतीत होगा कि कोनाड वार्म्स की शर्तों के कठोर पालन का न तो आग्रह करने में समर्थ था न उसकी वैसा करने की कोई इच्छा ही थी। कभी कभी तथा विशेषतया अपने व्यक्तिगत प्रदेशों में उसने उन पर बल दिया, किन्तु दूसरे समय, तथा उसके साम्राज्य

के दूसरे स्थानो पर वह उनको क्रियान्वित नही कर सका था या कम से कम उसने उनको क्रियान्वित नही किया। वह प्राय निर्वाचना मे उपस्थित नही रहता या तथा लौकिक सम्पदाओ से प्रतिष्ठापन अभिषेक से पूर्व न होकर बाद मे होने लगा। एक मामले मे एक विवादास्पद निर्वाचन को राजा के लिए न छोडकर पोप ने अधिधर्माध्यक्ष तथा प्रात के बिशपो की राय एव निर्णय से करके अपने निर्णय करने के अधिकार का दावा किया प्रतीत होता है।[10]

तथापि समग्र रूप से यह कहना सत्य होगा कि वार्म्स के समझौते के मूल सिद्धान्तो को *पूर्णतया मान लिया गया था—अर्थात् बिशप की धार्मिक स्थिति तथा उसकी लौकिक* सम्पत्ति एव स्वामित्व का अन्तर और इसीलिए जबकि पहली वस्तु प्रदान करना चर्च की सत्ता के अधिकार म था तो दूसरी वस्तु प्रदान करने का अधिकार लौकिक सत्ता को था तथा इस समझौते ने कुछ समय के लिए साम्राज्य तथा पोप के सम्बन्धो मे शान्ति ला दी।

अब हम फ्रेडरिक बारबरोसा (Frederick Barbarossa) तथा उसके समकालीन *पोपो के बीच सघर्ष के आधारभूत सिद्धान्तो तथा परिस्थितियों का अध्ययन करना है।*

फ्रेडरिक प्रथम मार्च 1152 ई० म राजाओ द्वारा फ्रेंकफर्ट नामक स्थान पर निर्वाचित हुआ तथा उसके प्रथम वर्षों मे चर्च स सम्बन्धो म शान्ति बनी रही। वास्तव मे उसने वार्म्स के समझौते द्वारा लौकिक सत्ता को प्रदत्त अधिकारो को बनाए रखा तथा कम से कम एक मामले म उसने उनकी व्याख्या इस ढग स की जो मूल शब्दो से सगत नहीं थी किन्तु *सभवत उस सस्करण पर आधारित थी जो कोडेक्स उदालरिकी (Codex Udalrici)* मे सुरक्षित है। फ्राइजिंग के ओटो का गेस्टा फ्रीडरिकी नामक ग्रथ में कथन है कि क्यूरिया अर्थात् राजसभा की परम्परा यह थी कि विवादास्पद निर्वाचन के विषय म राजा चाहे जिसे अपने सभासदो (optimates) की राय से बिशप नियुक्त कर सकता था।[11] स्पष्टत इसी दावे के कारण ही फ्रेडरिक ने 1152 ई० म वाइडमेन (Weidmann) को जो *जाइत्स (Zeitz) का बिशप था मेग्डेबर्ग का आर्चबिशप नियुक्त कर दिया।* पोप यूजीनियस तृतीय (Eugenius III) ने जर्मनी के बिशपो को लिखे गए पत्र म नियुक्ति को अस्वीकार कर दिया किन्तु वह इस आधार पर नही था कि वार्म्स के समझौते की व्यवस्था के अनुसार राजा को सम्राट के रूप म ऐसे विषय का निर्णय केवल अधिधर्माध्यक्ष तथा सम्प्रान्तीय बिशपो की सम्मति से करना है अपितु इस आधार पर कि फ्रेडरिक ने निर्वाचको के अधिकारो का अतिक्रमण किया है।[1]

दूसरी ओर फ्रेडरिक ने अपने पक्ष म अपने को पोप की मागो को पूरा करने का इच्छुक प्रदर्शित किया। फ्रेडरिक तथा उसके युग के पोपो के सम्बन्ध कान्सटेन्स की सधि के शब्दो म सबसे अधिक अच्छी तरह स सुरक्षित हैं जो कि 1153 ई म की गई थी। इस सधि के द्वारा फ्रेडरिक ने यूनानियो नारमनो तथा रोम के विद्रोहियो के विरुद्ध पोप की सहायता करने की प्रतिज्ञा की जबकि पोप ने उसे सम्राट के रूप मे अभिषिक्त करने तथा उसके साम्राज्य के न्याय तथा गरिमा पर आक्रमण करने वाले किसी भी व्यक्ति को धर्म बहिष्कृत करके उसका समर्थन करने तथा यूनानियो का मुकाबला करने की प्रतिज्ञा की।[13]

1155 ई म रोम में फ्रडरिक का सम्राट के रूप में अभिषेक हुआ। तथापि 1156 ई म पोप की नीति परिवर्तित प्रतीत होती है। जब कान्सटेन्स की सधि हुई थी पोप के सम्बन्ध नारमनो के साथ खराब थ तथा वह उनके विरुद्ध फ्रडरिक से समर्थन की अपेक्षा करता था किन्तु 1156 ई मे हैड्रियन चतुथ ने नारमनों से समझौता कर लिया तथा नए सम्बन्धों को बेनेवन्टम की सधि का रूप दिया गया। इस सधि की सबसे महत्वपूर्ण राजनतिक व्यवस्थाए थी हैड्रियन ने विनियम उसके पुत्र रोजर तथा उनके उत्तराधिकारियों को सिसली का राजा एपूलिया का ड्यूक तथा नेपल्स सालेरनो अमल्फी तथा उनके क्षेत्रों सहित कापुया का राजा मान लिया जबकि उनके द्वारा पोप हैड्रियन उसके उत्तराधिकारियों तथा रोमन चच के प्रति निष्ठा की शपथ ली गई तथा उनके प्रति स्वामिभक्ति प्रदर्शित की गई।[14]

तथापि 1157 ई तक फ्रडरिक एव हैड्रियन चतुथ म कोई गभीर विवाद उपस्थित नहीं हुआ तथा तब भी वह किसी नीति के वास्तविक प्रश्न पर नहीं अपितु पोप द्वारा प्रयुक्त एक वाक्य पर हुआ जिसमें यह निश्चित प्रतीत होता था कि फ्रडरिक ने इस साम्राज्य को पोप के अधीनस्थ सामत के रूप म प्राप्त किया है। उसकी परिस्थितियाँ इस प्रकार थीं स्वीडन मे स्थित लुण्ड (Lund) के आर्चबिशप एस्कील को रोम में लौटते समय बरगडी मे कुछ विद्रोहियों द्वारा बन्दी बना लिया गया तथा बधक के रूप म रख लिया गया। कुछ कारणो से फ्रडरिक ने उसे मुक्त कराने या अपराधियों को दण्ड देने के लिए सक्रिय कदम नहीं उठाए तथा हैड्रियन चतुथ ने उसे विनम्रतर में प्रतिवाद स्वरूप लिखा। उसे हस्तक्षेप करने के कत्तव्य का ध्यान दिलाते हुए वह उस प्रसन्नता एव स्नेह का स्मरण दिलाता है जिसस कि रोमन चच ने उसका स्वागत किया था उस पर साम्राज्यिक मुकुट के साथ पूर्ण प्रतिष्ठा तथा गरिमा प्रतिष्ठित की थी तथा वह उसे और भी अधिक जागीर (Beneficia) प्रसन्नता से देने को प्रस्तुत रहेगा

यह पत्र फ्रडरिक के पास तब पहुँचा जबकि वह बसेंसों म एक सभा का सचालन कर रहा था तथा फ्राजिंग के ओटो की सूचना के अनुसार राजाओं मे इसने अत्यन्त रोष उत्पन्न किया क्योंकि इसका अथ उनके द्वारा यह समझा गया कि जमन सम्राट साम्राज्य एव इटली के राज्य को पोप के प्रदान करने के कारण धारण कर रहे थे। आगे के अनुसार वे इसे स्मरण करके बहुत विचलित हुए कि लेटेनि के महल म सम्राट लोथेयर तृतीय के चित्र के नीचे एक लेख इन शब्दों म लिखा है।

Rex venit ante foras iurans prius urbis honores Post homo fit papae sumit quo dante coronam [15]

हैड्रियन के पत्र के पठन से उत्पन्न क्षोभ उन अविवेकपूर्ण शब्दों के प्रयोग स और भी बढ़ गया जो एक पोप के प्रतिनिधि द्वारा प्रयुक्त कहे गए थ यदि पोप द्वारा उसे साम्राज्य नहीं दिया गया तो किसके द्वारा दिया गया? और उन प्रतिनिधियों की हत्या कर दी जाती यदि फ्रडरिक हस्तक्षेप न करता तथा उन्हें अपने निवास स्थान को भेजकर बिना विलम्ब किए दूसरे ही दिन रोम जाने की आज्ञा नहीं देता।[16]

अक्टूबर म फ्रडरिक ने एक परिपत्र जारी किया जिसम पोप के प्रतिनिधिमडल के

साथ घटी घटना।श्रो तथा हैड्रियन के पत्र वस्तु का विवरण ि्या गया था। उसने शिकायत की कि चच का अध्यक्ष जो कि ईसा की शांति तथा दयालुता का प्रतीक होना चाहिए बुराई का साधन व भगड़े का कारण बन गया है तथा उसने घोषणा की कि उसे साम्रा्य तथा राजत्व राजाओं के निर्वाचन द्वारा केवल ईश्वर से प्राप्त हुआ है जिसने ससार को दो तलवारों के अधीन बनाया है तथा जो भी यह प्रतिपादित करे कि उसने शाही मुकुट को सामन्त के रूप म पोप द्वारा प्राप्त किया है उस पर उसने सत पीटर के सिद्धान्तों की अवहेलना का आरोप लगाया जिसने मनुष्यों को ईश्वर से डरने तथा राजा का सम्मान करने की आज्ञा दी थी।[17]

इस बीच अपने प्रतिनिधियों से किए गए व्यवहार से तथा उन उपायों से जो उसके आरोप क अनुसार फ रिक ने जमनी स किसी को भी पोप के स्थान पर जाने से रोकने के लिए उठाए थे पोप बहुत विक्षु्ध हुआ तथा उसने फ्रडरिक के आचरण की शिकायत करते हुए जमनी के आर्चबिशप तथा बिशपों को पत्र लिखा जिसमें उसके कार्यों को रोकने तथा उसे अधिक तक सगत नीति अपनाने के लिए राजी करने का आग्रह किया। यह उ्लेखनीय है कि उसने स्वीकार किया कि गडबड का मूल कारण उसके द्वारा किया गया शब्द प्रयोग है। Insigne videlicet coronae tibi beneficium contulimus किन्तु उसने अब तक इस वाक्य की कोई सफाई नहीं दी।[18] जमन बिशपों ने शिष्टता तथा आदर पूवक किंतु दृ़ता स उत्तर दिया कि पहले पत्र मे प्रयुक्त श् ही सभी झगड़े की जड़ थे तथा वे इतने अस्वाभाविक अपूव तथा दुर्भाग्यपूर्ण द्वयथक थे कि वे न तो उनका समथन कर सकते हैं न उनको स्वीकार कर सकते हैं। जसी पोप ने इ्छा की थी वे सम्राट से इस मामले प बातचीत कर चुके हैं तथा वे उसका उत्तर सूचित कर रहे हैं। इसमे फ्रडरिक ने यह स्पष्ट कर दिया कि यद्यपि वह पोप के प्रति सभी उचित सम्मान प्रदर्शित करने का इ्छुक है वह वधानिक एव परम्परागत श्दावली के किसी परिवतन को सहन नहीं करेगा। उसन दवी अनुग्रह (B neficium divinum) के कारण प्राप्त राजमुकुट की स्वतत्रता का दावा किया तथा कुछ विस्तार से निर्वाचन तथा रा्यारोहण के क्रम का वणन किया। उसने इस अस्वीकार किया कि कार्डीनलों के प्रति उसका व्यवहार पोप के प्रति घृणा से प्रभावित है किन्तु वह उन्हें कोई ऐसा दस्तावेज ले जाने की अनुमति नहीं दे सकता जो साम्रा्य के लिए हानिप्रद हो। उसने किसी को भी उचित काय से इटली से आने या जाने को मना नहीं किया है किन्तु वह उन दुरुपयोगों को रोकने के लिए कृतनिश्चय है जिनसे कि साम्रा्य के चच त्रस्त हुए हैं और पुन स्पष्टत पहले उल्लिखित चित्र का उ्लेख करते हुए वह कहता है कि जो बात पहले एक चित्र म प्रारम्भ हुई थी वह लेख के रूप म आने लगी है तथा अब इस लेख को अधिकार पूर्ण बनाने का प्रयास किया जा रहा है। वह इस सहन नहीं करेगा तथा साम्रा्य का इतना अनादर होने देने की अपेक्षा अपना सम्राट पद छोड़ देने को उचित समझगा। यदि राजकीय सत्ता तथा धार्मिक सत्ता के बीच मित्रता स्थापित करनी है तो इस प्रकार के चित्र नष्ट कर देने चाहिए तथा ऐसे पत्र वापस लिए जाने चाहिए।

बिशप आगे लिखते हैं कि उन्होंने सम्राट स जिन्हें वे स्पष्टतया अशांति उत्पन्न करने

वाली सूचना समझते हैं मिसली के विनियम तथा रोजर के साथ सधि के विषय म सुना है निस्सदेह यह उल्लेख बेनेवेन्टम की सधि के बारे में है जो हैड्रियन चतुर्थ तथा सिसली के विनियम प्रथम म बीच 1156 ई म हुई थी तथा उन्होंने दूसरी सधियो के बारे में भी सुना है।[19]

जून 1158 ई म पोप के दूत ऑगसबर्ग म स्थित फ्रडरिक के पास हैड्रियन चतुर्थ के पत्र लेकर आए जिसमे पोप ने बुरा लगने वाले वाक्यों का स्पष्टीकरण देने की सावधानी रखी थी जिन्हें उसके अनुसार गलत समझा गया। उसने घोषणा की कि बेनेफीसीयम (Beneficium) शब्द का उस पत्र म वह तात्पर्य नहीं जसा कि समझा गया है। उसका अर्थ जागीर नहीं किन्तु केवल लाभ है तथा यह उन व्यक्तियो की सुविचारित ईर्ष्या है जो चच तथा साम्राज्य की शाति नहीं चाहते हैं जिनके द्वारा उसकी गलत व्याख्या की गई है।[20] फ्रडरिक ने स स्पष्टीकरण को मित्रतापूर्ण ढग से ग्रहण किया तथा कुछ समय के लिए रोम से मित्रतापूर्ण सम्बन्ध पुन स्थापित हो गए।

इन परिस्थितियो के महत्त्व के बारे म स्पष्ट निर्णय पर पहुँचना सुगम नहीं। यह समझना अति कठिन है कि हैड्रियन ने सम्राट से झगड़ा करने की इच्छा क्यो की होगी तथा उसने यह ढग क्या चुना होगा। उसने इस शब्द का प्रयोग जानबूझकर किया इस पक्ष में एक मात्र महत्त्वपूर्ण तक यही तथ्य है कि उसने जमन बिशपो के पत्र में इसका स्पष्टीकरण क्यों नहीं किया? सम्पूर्ण रूप से यह बहुत सन्दिग्ध प्रतीत होता है कि हैड्रियन के वाक्य पद उसके इस निश्चय को बताने के लिए जानबूझ कर प्रयोग किए गए थे कि वह सम्राट को पवित्र पोप पद के अधीन एक जागीरदार समझता है यह अधिक सभव प्रतीत होता है कि असावधानी से ही उनका प्रयोग किया गया था। तथापि इस ओर ध्यान देना बहुत महत्त्वपूर्ण है कि जमन बिशपो ने इस सभावित दावे का तत्काल सशक्त खण्डन किया तथा पोप ने भी इसका स्पष्टीकरण देने की सावधानी दिखाई।

1159 ई मे हैड्रियन चतुर्थ की मृत्यु स कुछ समय पहले फ्रडरिक तथा हैड्रियन चतुर्थ के बीच फिर झगडा उठ खडा हुआ। बम्बर्ग के बिशप ने साल्जबर्ग को लिखे गए एक पत्र में जिस फ्राइजिंग के ओटो ने गेस्टा फ्रिडरिकी में उद्धृत किया है सूचना दी कि पोप ने बहुत महत्त्वपूर्ण माँगें करते हुए फ्रडरिक के पास दो कार्डीनलों को भेजा था तथा कुछ महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तो को निश्चित किया। उसने घोषणा की कि सम्राट को पोप को बताए बिना रोम को कोई दूत नहीं भेजने चाहिए क्योंकि नगर पर अधिकार और सभी राज चिह्नों पर सत पीटर का स्वामित्व था। इटली के बिशपो को बिना सम्मान अर्पित किए सम्राट के प्रति निष्ठा की शपथ लेनी थी तथा उनके द्वारा सम्राट के दूतों का अपने महलों में स्वागत करने की आवश्यकता नही थी। उसने रोमन चच को टाइबर फरेरा मस्सा काउटेस माटिल्डा का सम्पूर्ण क्षेत्र एक्वापेन्डेन्टे से रोम तक का सम्पूर्ण क्षेत्र स्पोलेटो का ड्यूक क्षेत्र तथा सार्डीनिया और कार्सिका के टापू लौटाने की माँग की।[21]

उसके उत्तर में फ्रडरिक ने पहले तो यह कहा कि इन महत्त्वपूर्ण विषयो का उत्तर वह अपने सामन्तो से राय लिए बिना नही दे सकता तथापि अस्थायी रूप स उसने यह उत्तर दिया यदि वे राजचिह्नो का त्याग करने को राजी हो तो वह इटली के बिशपों से कर

नहीं माँगेगा। वह यह मानने को राजी था कि विशपों को राजदूता का स्वागत अपने मन्लो में करने की आवश्यकता नही थी यदि वे उस भूमि पर बन हा जो विशपा की अपनी है किन्तु यदि व सम्राट का भूमि पर रह । नो व स्वव म वे सम्राट के ही मन्त्र थे। पोप की इस माग के बारे म कि उस रोम को दूत नही भेजन चाहिए क्योंकि यहाँ का सम्पूर्ण शान्ति तथा व्यवस्था पर सत पीटर का स्वामित्व है उसने कहा कि यह एक गम्भीर मामला है जिस पर सावधानी से विचार की आवश्यकता है क्योंकि यदि रोम के नगर पर सम्राट का अधिकार नही है तो इसका अर्थ यही होगा कि उसकी राजकीय सत्ता का केवल नाम तथा दिखावा मात्र है।

ऐसा प्रतीत होता है कि लगभग इसी समय हैड्रियन ने कान्सटेन्स म पोप यूजेनियस तृतीय के साथ 1153 ई म हुई सधि क पुनर्स्वीकरण की माँग का किन्तु जसा फ्रेडरिक द्वारा साल्जबग के आर्चविशप को लिखे गए पत्र से ज्ञात होता है फ्रेडरिक ने इस आधार पर इसे अस्वीकार कर दिया कि हैड्रियन ने बेनवेन्टम म सिसली क विलियम के साथ 1156 ई म सधि करके उक्त सधि की शर्तों का उल्लघन किया है। फ्रडरिक की मान्यता थी की यह कान्सटेन्स के समझौते का उल्लघन है कि पोप ने उससे राय लिए बिना ही सिसली के राजा स सधि कर ली।[23]

इस प्रकार उठाए गए प्रश्न निस्सन्देह गम्भीर एव दूरगामी थे तथा एक गभीर परिस्थिति उत्पन्न कर देते किन्तु इसी समय दूसरे अधिक गम्भीर प्रश्न उठ खडे हुए।

1159 ई म हैड्रियन चतुर्थ का देहावसान हो गया तथा उसकी मृत्यु के बाद पोप पद का दोहरा निर्वाचन हो गया। रोलेण्ड को एलेक्जण्डर तृतीय के रूप म तथा आक्टेवियन को विक्टर चतुर्थ क रूप म चुना गया। इस परिस्थिति का बहुत स्पष्ट वणन राइखसबग के गेरहोह के एक ग्रन्थ म किया गया है। वह जमनी क सुधारवादी पादरियो म सर्वाधिक उत्साही था किन्तु उसने कुछ समय के लिए प्रतिस्पर्धी दावेदारों की ओर अनिश्चित दृष्टिकोण अपनाए रखा। वह इस मामले म स्पष्ट था कि जहाँ तक निर्वाचन का प्रश्न है एलेक्जेण्डर को वधानिक एव सद्धान्तिक रूप स कार्डिनलो के बहुमत द्वारा निर्वाचित किया गया है किन्तु दूसरी ओर उसने गभीरतापूवक तथा पूर्ण दायित्व से विक्टर के समर्थकों की इस मान्यता की सूचना दी है कि एलेक्जेण्डर तथा उसका निर्वाचन करन वाले कार्डीनल दोनो ही सम्राट के विरुद्ध षडयन्त्र म लीन थे। यह आरोप लगाया गया कि हैड्रियन चतुथ की मृत्यु से पहले ही उन सबने सिसली के राजा विलियम मिलान के निवासियो तथा साम्राज्य क दूसरे शत्रुओं से समझौता कर लिया था उन लोगो ने एक शपथ द्वारा अपने को बाध लिया था कि हैड्रियन की मृत्यु के बाद व पोप पद पर किसी ऐसे व्यक्ति को नहीं चुनेंगे जो षडयन्त्र मे उनके साथ नहीं है तथा उनको विलियम तथा मिलानवासियो द्वारा यह प्रतिज्ञा करने के लिए रिश्वत दी गई कि फ्रेडरिक को धर्म बहिष्कृत किया जाएगा तथा उनकी स्वीकृति के बिना पुन धर्म-बहिष्कार समाप्त नही होगा।[4]

इन परिस्थितियों में फ्रडरिक न दो सिद्धान्त प्रस्तुत किए। पहला यह कि चच का एक सामान्य-सभा द्वारा पोप-पद के दोनो अभिलाषियो के दावो का अध्ययन किया जाए तथा

न्यायालय तथा परिषद् बुलाने का आदेश दिया है (Indiximus Celebrandum) जिसमें उसने आर्चबिशपों बिशपों मठाध्यक्षों तथा दूसरे धार्मिक व्यक्तियों को बुलाया है ताकि लौकिक न्याय को सम्पूर्णतया दूर हटा कर चर्च के इस महत्त्वपूर्ण विषय का निर्णय केवल धार्मिक व्यक्तियों द्वारा इस रूप में हो कि ईश्वर का सम्मान हो सके तथा कोई भी रोमन चर्च को पवित्रता तथा न्याय से वंचित न कर सके तथा रोम नगर में शांति स्थापित हो सके। अतः वह ईश्वर तथा कैथोलिक चर्च के नाम पर उनको परिषद् में उपस्थित होने तथा धार्मिक पुरुषों के निर्णयों को सुनने तथा मानने की आज्ञा तथा समादेश करता है।[6] ये सिद्धान्त वही हैं जो जर्मन बिशपों के पत्र में हैं किन्तु फ्रेडरिक रोमन चर्च की सुरक्षा तथा देखभाल के विशेष कर्त्तव्य पर बल देता है तथा वह इस सन्देह का बलपूर्वक खण्डन करता है कि विवादास्पद प्रश्न के निर्धारण में योगदान के अधिकार का लौकिक सत्ता द्वारा दावा किया गया है। तथापि वह एलेक्जेण्डर को परिषद् में उपस्थित होने के लिए बुलाने में अधिकारपूर्ण स्वर का प्रयोग करता है।

यह ध्यान देना महत्त्वपूर्ण है कि एक दूसरे पत्र में फ्रेडरिक की स्थिति ठीक वही नहीं है। इसमें वह साल्जबर्ग के आर्चबिशप से प्रार्थना करता है कि वह उससे राय लिए बिना किसी भी पक्ष को समर्थन न दे ताकि साम्राज्य में किसी भी प्रकार की फूट न पड़े वह कहता है कि उसने फ्रांस तथा इंगलैंड के राजाओं को केवल एक ऐसे प्रत्याशी का समर्थन करने को कहा है जिस पर वे तीनों सहमत हो जाएं। वह यह कह कर उपसंहार करता है कि वह किसी भी ऐसे व्यक्ति को पोप नहीं मानेगा जिसे निष्ठावानों ने एकमत से न चुना हो।[27] यहाँ फ्रेडरिक का स्वर कुछ भिन्न है। यद्यपि वह चर्च के सामान्य निर्णय को ही अधिकारी सत्ता मानता है जिसके द्वारा मामले का निर्णय अंतिम रूप से होगा किन्तु साथ ही साथ वह इस प्रकार की भाषा का प्रयोग कर रहा है मानो उसे तथा फ्रांस और इंगलैंड के राजा को न्यायसम्मत प्रत्याशी को मान्यता देने की कुछ सत्ता या अधिकार हो। किन्तु यह कहा जा सकता है कि यह सम्पूर्ण चर्च के निर्णय की घोषणा से पूर्व के समय की ही ओर संकेत करती है।

एलेक्जेण्डर तृतीय ने उसको सम्बोधित इस चुनौती को स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं किया किन्तु तुरन्त ही दृढ़ता से सम्राट के कार्य तथा इस दावे का कि सम्पूर्ण चर्च इस मामले का निर्णय देने का अधिकारी है खण्डन एवं निन्दा की। उसके वक्तव्य का स्वर शिष्ट था किन्तु उसका दृष्टिकोण समझौते से विमुख था।

उसने मान लिया कि अपनी विशेष स्थिति के कारण सम्राट रोमन चर्च का समर्थक तथा विशेष संरक्षक था तथा उसे विश्वास दिलाया कि वह उसका सभी राजाओं से अधिक सम्मान करता है किन्तु उसको ईश्वर का अधिक सम्मान करना चाहिए तथा उसे आश्चर्य है सम्राट रोमन चर्च का वह सम्मान प्रदान करने को प्रस्तुत नहीं जो न्यायोचित रूप में उसका है। वह कहता है कि उसे सम्राट के पत्र से विदित होता है कि उसने पाँच राज्यों के धार्मिक पुरुषों की एक परिषद् बुलाई है किन्तु ऐसा करने में उसने अपने पूर्वाधिकारियों की परम्परा का उल्लंघन किया है क्योंकि उसने रोमन पोप की जानकारी के बिना वैसा किया है तथा उसे उपस्थित होने को बुलाया है मानो वह उससे ऊपर

अधिकार रखता हो क्योंकि ईसा ने मत पीटर को तथा उसके माध्यम से रोमन चर्च को यह विशेषाधिकार दिया है कि वह सभी चर्चों के मामलों का विचार तथा निर्णय करेगा तथा स्वयं किसी के भी निर्णय से परे होगा तथा इस विशेषाधिकार की रक्षा वह प्राण देकर भी करेगा। प्रस्तु सैद्धांतिक परम्परा तथा पवित्र धर्माचार्यों की सत्ता उसे सम्राट के न्यायालयों में उपस्थित होने तथा उसके निर्णय को ग्रहण करने का निषेध करती है तथा यदि वह अपने अज्ञान अथवा दुर्बलचित्तता के कारण चर्च को दासता के स्तर पर लाने का अपराध करेगा तो वह कठोरतम निंदा का पात्र होगा।[28]

इसलिए जब 1160 ई. के पूर्वार्द्ध में परिषद् की सभा पाविया में हुई तो अलेक्जेण्डर तृतीय का कोई प्रतिनिधि नहीं था किन्तु विक्टर का मामला सभा के सम्मुख प्रस्तुत किया गया। उसके प्रतिनिधि ने दावा किया कि उसका विधिवत् निर्वाचन व पदारोहण हुआ है तथा रोमन पादरियों द्वारा उसे मान्यता दी गई है जबकि एलेक्जेण्डर के विरुद्ध में विशेषतया उसने कहा कि वह साम्राज्य को उच्छिन्न करने के प्रयत्न में भागीदार है तथा षड्यन्त्रकारियों ने सिसली के राजा तथा मिलानवासियों से यह समझौता कर लिया था कि हैड्रियन चतुर्थ की मृत्यु होने पर वे अपने में से एक को पोप चुन लेंगे।[29]

परिषद् का निर्णय हमारे सम्मुख दो रूपों में सुरक्षित है एक स्वयं परिषद् द्वारा प्रकाशित विश्व पत्र के रूप में तथा दूसरा फ्रेडरिक के द्वारा परिषद् के निर्णय से सहमति व्यक्त करने वाले सार्वभौम पत्र के रूप में। परिषद् का पत्र पहले यह घोषित करता है कि मामले की उनके द्वारा सैद्धांतिक तथा वैधानिक रूप से परीक्षा कर ली गई है (remoto omni s culari ind cio) तथा यह सिद्ध हुआ कि विक्टर संत पीटर की समाधि पर कार्डीनलों के बहुमत समर्थक वर्ग द्वारा (Saniori parte) जनता की प्रार्थना पर तथा रोमन पादरियों की अभिलाषा तथा सहमति से चुना गया था। वे मानते हैं कि बीस में से नौ कार्डीनलों ने उसके निर्वाचन की सहमति दी है किन्तु वे इसे अस्वीकार नहीं करते कि वे अल्पमत में थे। वे इस बात पर अधिक बल देते हैं कि वह रोलैण्ड (एलेक्जेण्डर तृतीय) से बहुत पहले पूर्व निर्वाचित हो गया था तथा इसके महत्व को प्रदर्शित करने के लिए वे एक ग्रन्थ का उल्लेख करते हैं जिसे वे (Liber de Ritu et ordinatione Romanorum Pontifi um) कहते हैं तथा यह प्रदर्शित करते हैं कि इस पोप इन्नोसेंट द्वितीय के निर्वाचन से सम्बन्धित विवाद में महत्वपूर्ण माना गया था। वे इस पर बल देते हैं कि रोलैण्ड को परिषद् में निमन्त्रित किया गया था (remoto omni seculari indicio) किन्तु उसने तथा उसके प्रधान पादरियों ने चर्च की किसी भी जांच अथवा निर्णय को मान्यता देना अस्वीकार कर दिया। वे ... कार्डीनलों ... षड्यन्त्र का भी विवरण देते हैं। अन्त में वे घोषणा करते हैं कि परिषद् ने यह निर्णय किया कि विक्टर का निर्वाचन ... तथा चर्च के निर्णय को मानने को तैयार था पुष्ट और वीकृत किया जाए तथा रोलैण्ड का निर्वाचन अवैध घोषित हो। वे इतना और कहते हैं कि ... का ध्यान रखते हैं कि यह सब किसी लौकिक हस्तक्षेप के बिना कर लेने के बाद परिषद् की ... तथा प्रार्थना पर तथा सभी बिशपों एवं पादरियों के पश्चात् सम्राट ने अन्त में विक्टर के निर्वाचन को स्वीकार किया तथा उसके बाद उपस्थित राजाओं एवं

विशाल जनसमूह ने अपनी सहमति दी ।[30]

फ्र डरिक के विश्व पत्र म एलक्जण्डर द्वारा पाविया की परिषद् मे उपस्थित होने स अस्वीकार करन का वर्णन है किन्तु पन्यत्र के प्रमाणा पर अधिक बल दिया गया है । वह कहता है कि परिषद् काई लौकिक न्यायालय नही थी क्योंक वह किसी भी प्रयाजक की उपस्थिति क बिना ही बैठी तथा मामल पर विचार किया किन्तु एलेक्जेण्डर ने चच की जाच को स्वीकार करने से यह घोषणा करत मना कर दिया कि उसे सभी मनुष्यो का निर्णय करन का अधिकार है परन्तु उसका निर्णय कोई नही कर सकता । परिषद् का निर्णय पन्यत्र क स्पष्ट प्रमाणा के आधार पर किया गया । तथा इस आधार पर कि विक्टर के विरुद्ध इसके अतिरिक्त कुछ भी आरोप नही था कि उसका निर्वाचन कार्डीनलो क अल्पमत न हुआ है अन इसन (परिषद) एलेक्जण्डर को दोषी माना तथा विक्टर के निवाचन की पुष्टि की । फ्र डरिक चच क निर्णय को मानकर अपनी सहमति प्रदान करता है तथा विक्टर को विश्वव्यापी चच का शासक एव पिता घोषित करता है ।[31]

परिषद् का पत्र विक्टर के निर्वाचन की न्यायसगतता एव औचित्य पर अधिक बल दता है तथा फ्र डरिक का साम्राज्य के विरुद्ध षडयत्र पर किन्तु वे दोना यह प्रतिपादन करने म एकमत हैं कि यह निणय चच का है लौकिक सत्ता का नही तथा एलेक्जेण्डर न चच द्वारा निणय के लिए अपना मामला प्रस्तुत करना अस्वीकार किया ।

इस प्रकार जो सघष 1160 ई० मे प्रारभ हुआ सत्रह वष अर्थात् 1199 ई म वनिस की सधि तक चलता रहा जब फ्र डरिक लाम्बाड नगरा की मांग को मानने तथा एलक्जेण्डर तृतीय को मान्यता दने को विवश हो गया । हमारे उद्दश्य के लिए इन वर्षों क इतिहास का सम्प्रति विवरण दना आवश्यक नही अत हम पुन एक परवर्ती ग्रन्थ म नगरो का मांग म वत्तमान राजनीतिक सिद्धान्तो पर विचार करग यहा हमारा सम्बन्ध लौकिक एव धार्मिक सत्ताओ क बीच विवादास्पद प्रश्नो से है ।

सन्दर्भ

1 E. Bernh m, Z r Cesch cbt des W rmser Conco data Cord x Ud lnci 214

3 Cas um Sa cli G lb Contd 1 8 (M G H Scriptores vol)

4 Otto of Fre sing Gesta Fndenci

5 N rratio d elect one Lotharu n Regem Romanorum 6 (M G H S S xi 511)

6 E Ber he m Lothar III unddas Worme Co codat

7 V ta Sancti Bernhard 1,5 (M gne P L. 1 185)

8 Cf B mheim op cit pp 37 38

9 M G H Legum Sect 1 Con stit u nes v l 1 116

10 H W'tte Fo schungen zur Geschi hte des W rmer Concordat

11 Otto of Fre s ng Gesta Fndenci 1 (p 392)

12 Id. d (pp 393 394)

13 M G H Leg Sect. Const 1 144 145

14 H dri m IV et W lhelmi Regis Co ncordia Ben ve tana (n J m Watt r ch Pontificum Romanorum V'tae vol p 35

15 सम्भव है जैसा Wilmar (the editor of the Gesta Friderici in M G H Scriptores vol xx) ने बताया है Lothair III का Innocent II द्वारा territory (allodium) of the Countess Mathilda के प्रदान का इस तरह द्वारा गलत अर्थ न लिया गया होगा।
16 Ott f Fre s g Gest F de c 10
17 M G H Leg Se t Con t i 165
18 Id d 166
19 Id d 167 (2)
0 Id d 168
21 G ta F ide c v 34
22 M G H Leg Sect IV Const ol i 179
23 Id id 180
24 Ge hoh of R chersbe g (De I vest gat oo e Ant chri t i 53
25 Id id 182
26 Id d 184
27 Id d 181
28 M G H Leg. Sect IV Co t ol i 185
29 Id d 187 188
30 Id d 190
31 Id id 189

द्वितीय अध्याय

सैलिस्बरी का जॉन

सलिस्बरी के जान का पोलीक्रटिक्स (Policrati us) 1115 ई तथा 1159 ई के बीच हेड्रियन चतुथ के पोप पद क कार्यालय म लिखा गया था[1] तथा इसलिए उस युग की रचना ह जबकि पोप तथा सम्राट क बीच पहले से कुछ सघष विद्यमान था तथा उस युग से पूव का रचना ह जब योरोप मे एलक्जेण्डर तृतीय तथा फ्रेडरिक प्रथम के बीच सघष छिड़ा तथा इगलड म हनरी द्वितीय तथा थामस ए बेकेट के बीच स्थानीय किन्तु महत्त्वपूण विवाद छिना। इस प्रकार लौकिक एव धार्मिक सत्ता क सम्बन्धो क बारे मे विचारो की प्रवृत्ति के प्रमाण क रूप म इसका अध्ययन लाभदायक ह क्योंकि यह एक ऐसे समय म लिखी गई थी जबकि मनुष्यो की भावनाए उग्र सघष से उत्तजित नही हुई थी किन्तु इसमे क्षतिपूरक कमी यह भी ह कि किसी सीमा तक इसम वचारिक तथा सामान्यीकृत सिद्धान्तो का प्रतिनिधित्व ह जिनके वास्तविक महत्त्व की विशिष्ट तथा यावहारिक प्रश्नो के सन्दभ म व्याख्या का आवश्यकतानुसार परीक्षण नही किया गया। जसा हम दखग सलिस्बरी के जान तथा आगसबग के होनोरियस की सद्धान्तिक स्थिति मे पारस्परिक सम्बन्धा क कुछ रोचक सूत्र हैं तथा लगभग यह प्रतीत होता ह कि प्रथम महान् सघष क समाप्त होन तक उस युग क व्यावहारिक प्रश्नो क आधारभूत सिद्धान्ता क वचारिक विकास पर मनुष्य विचार करन लग थ।

जान एक उग्र चचवादी स्थिति का प्रतिनिधित्व करता ह। वह न कवल लौकिक सत्ता द्वारा चच पर प्रत्येक आक्रमण की कठोर निन्दा तथा लौकिक कानून का अन्य सब कानूनो स श्रष्ठ होने का खण्डन ही करता ह वरन् वह बहुत स्पष्टता स धार्मिक सत्ता तथा उसके कानूनो का लौकिक स श्रष्ठ होन का प्रतिपादन भी करता ह। साथ ही वह निस्सकोच रूप स धार्मिक सत्ताधारियो द्वारा अवध धनापहरण की आलोचना करता ह तथा चच के निरकुश शासक की उतनी ही कठोरता स निन्दा करता ह जितनी कि वह लौकिक निरकुश शासक की करता ह। हम इसी क्रम मे दोनो ही स्थितियो का विचार करना चाहिए क्योंकि प्रत्यक महत्त्वपूण ह।

एक स्थान पर वह अयोग्य व्यक्तियों की धार्मिक प । पर नियुक्ति के ऊपर विचार करता है तथा राजा की निरकुश सत्ता के समर्थकों का यह प्रतिपादित करता हुआ प्रदर्शित करता है कि राजा सभी कानूनों से परे था तथा किसी ऐसे व्यक्ति की योग्यता के बारे में सन्देह करना जिसे उसने उस पद के लिए चुना है धर्म द्रोह जैसा अपराध है। वह कहता है कि वे यह मानते हैं कि लौकिक कानून के बराबर कोई कानून नहीं है तथा परम्परा के पूर्वों उदाहरणों पर तर्क के विपरीत होने पर भी आग्रह करते हैं तथा जो ऐसे कानूनों के प्रति भावे न करने का प्रयत्न करें उसे राजा का शत्रु मानते हैं। जान ने पप्टतया राजकीय कानूनवत्ताओं के स्वर एव स्वभाव से गोपपूर्वक हानि उठाई थी अत लौकिक हस्तक्षेप के विरुद्ध चर्च एव उसके अधिकारों की सुरक्षा तथा लौकिक न्यायालयों के अधिकार-क्षेत्र से पादरियों को मुक्त रखने के लिए वह रोमन विधि तथा इसके उपबन्धों के उद्धरण प्रस्तुत करके अपनी स्थिति को सुदृढ़ बनाता है।[3] रोमन कानून की उसकी अपील रोचक है तथा हमें इस तथ्य का स्मरण दिलाती है कि हम अब ऐसे युग में आ पहुँचे हैं जिसमें रोमन कानून का पुन प्रारम्भ किया गया अध्ययन महत्वपूर्ण माना जाना आरम्भ हो गया था। हम राजनीतिक सत्ता के स्वरूप के बारे में उसके सिद्धान्तों का विवेचन करते समय पहले ही देख चुके हैं कि रोमन न्याय-व्यवस्था के विस्तृत परिचय का उस पर बहुत प्रभाव पड़ा।[4] लौकिक एव धार्मिक सत्ताओं के संघर्षों में वास्तव में रोम का कानून एक दुधारी तलवार थी[5] किन्तु सलिसबरी के जान को वह एक सुरक्षा का स्वागत योग्य शस्त्र प्रतीत हुआ।

सलिसबरी के जान ने अपने को धार्मिक सत्ता पर लौकिक आक्रमण की निन्दा तथा उसका विरोध करने तक ही सीमित नहीं रखा उसने धार्मिक सत्ता की उत्कृष्ट गरिमा तथा शक्ति की ओजपूर्ण घोषणा की। एक स्थान में तो वह हठपूर्वक कहता है यदि वे दवी कानूनों के स्वरूप तथा चर्च के अनुशासन से मेल नहीं खाते तो राजाओं के सभी कानून निरर्थक तथा अवैध हैं वह जस्टीनियन के सहिताओं से उद्धरण देकर यह सिद्ध करता है कि राजकीय कानून धार्मिक सिद्धान्तों के अनुकारी होने चाहिए।[6] दूसरे स्थान पर वह एक मान्यता प्रस्तुत करता है जो हमें पहले ही सुविदित है तथा प्रतिपादन करता कि राजा ईश्वर के तथा धरती पर उसका स्थान लेने वाले व्यक्तियों के उसी प्रकार अधीन है जैसे कि मानव शरीर आत्मा से शासित होता है।[7]

यद्यपि वह इन कल्पनाओं को केवल मात्र सामान्य शब्दों में ही प्रस्तुत नहीं करता अपितु एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अवकाश में उनको दो तलवारों के सिद्धान्त की व्याख्या के रूप में प्रस्तुत करता है तथा घोषणा करता है कि चर्च से ही राजा अपनी भौतिक तलवार को प्राप्त करता है क्योंकि दोनों तलवारों पर स्वामित्व चर्च का ही है किन्तु वह भौतिक तलवार का उपयोग राजा के द्वारा में कराता है। अत राजा धार्मिक सत्ता का दूत (या अभिकर्ता) है तथा पवित्र पद के उस निम्नस्तरीय कर्तव्य का पालन करता है जो कि पुरोहित के हाथों से करने योग्य नहीं है।[8] यह धारणा सत बर्नार्ड के ग्रन्थ डे कन्सीडरेशन (De Consideratione) के कुछ अवकाशों तथा उसके एक पत्र के ही समानान्तर है तथा उनको इसका मूल स्रोत माना जा सकता है। इनमें से पहले में वह

पाप यूजेनियस तृतीय से आग्रह करता है कि धार्मिक एवं भौतिक दोनों ही तलवारें चर्च तथा पोप के स्वामित्व में हैं वास्तव में भौतिक तलवार का उपयोग उसे नहीं करना है किन्तु उसे पुरोहित के अनुरोध (ad nutum) तथा सम्राट की आज्ञा से ही निकाला जाएगा। दूसरे में वह यह घोषणा करता है कि दोनों तलवारें सत पीटर की हैं इनमें से एक का उसके अनुरोध पर तथा दूसरी को उसके हाथों से निकाला जाएगा।[9]

यह सिद्धान्त कि दोनों तलवारों पर चर्च का अधिकार है बहुत महत्त्वपूर्ण है। जहाँ तक हमने अध्ययन किया है मनिस्बरी के जान तथा सत बर्नार्ड के इन वक्तव्यों का मध्यकाल के प्राचीन साहित्य में ठीक समानता कहीं नहीं है। इनमें से सबसे निकट समानता आगसबर्ग के होनोरियस के सुम्मा ग्लोरिया के वाक्यों में है जिस पर हम एक पिछले अध्याय में विचार कर चुके हैं। होनोरियस ने यह प्रतिपादित किया कि ईसा ने अपने चर्च पर शासन के लिए केवल धार्मिक सत्ता की स्थापना की राजकीय सत्ता की नहीं तथा सिलवेस्टर प्रथम तथा कान्सटेन्टाइन के समय तक उसका शासन केवल पुरोहितों द्वारा ही होता था तथा कान्सटेन्टाइन ने सिलवेस्टर को अपने साम्राज्य का मुकुट प्रदान किया तथा घोषणा की कि पोप की सम्मति के बिना किसी को भी साम्राज्य प्राप्त न हो। तथापि सिलवेस्टर ने स्वीकार किया कि जो विद्रोही हो उनका दमन भौतिक तलवार के बिना नहीं हो सकता अतः उसने कान्सटेन्टाइन को एक सहायक के रूप में सम्मिलित कर लिया तथा दुष्कर्म करने वाले को दण्ड देने के लिए उसे भौतिक तलवार सौंप दी।[10] सत बर्नार्ड तथा सलिस्बरी के जान के वाक्यों का सम्बन्ध कहाँ तक होनोरियस से है यह कहना कठिन है। वे उसके समान इस सिद्धान्त का सम्बन्ध कि दोनों तलवारें चर्च की हैं कान्सटेन्टाइन के दान से नहीं जोड़ते सत बर्नार्ड यह सम्बन्ध सीधा ईसा द्वारा सत पीटर को कहे गए इस कथन से जोड़ता है जिसमें उसे अपनी तलवार को अपने स्थान में रखने की आज्ञा दी गई है। हम इन वाक्यों का कुछ सम्बन्ध पीटर डेमियन के उन शब्दों से जोड़ सकते हैं जिनमें वह सत पीटर को दोनों राज्यों के कानूनों को धारण करता हुआ बताता है जिन पर हम पहले विचार कर चुके हैं।[11] किन्तु ऐसे किसी सम्बन्ध का सुझाव देने का पर्याप्त आधार नहीं प्रतीत होता।

सत बर्नार्ड तथा सलिस्बरी के जान के इन वक्तव्यों को हम क्या महत्त्व प्रदान करें? सत बर्नार्ड के वक्तव्य का सन्दर्भ यह संकेत करता है कि इनके आधार पर यह निष्कर्ष निकालना कि उनका कोई सामान्य महत्त्व है बुद्धिमत्ताहीन होगा। द कन्सीडेरेशन में वह पोप यूजेनियस से यह अनुरोध करता है कि रोमन जनता के दुराग्रह तथा अव्यवस्था के कारण उसके द्वारा न केवल आध्यात्मिक तलवार के ही प्रयोग करने का अपितु उसके तथा सम्राट की आज्ञा से भौतिक तलवार का भी उनके विरुद्ध उपयोग करवाने का औचित्य है। अपने पत्र में वह पोप से आग्रह करता है कि पूर्वी चर्च की सुरक्षा के लिए किए गए धर्मयुद्ध में उस भौतिक तलवार का प्रयोग करवाना चाहिए। यह वक्तव्य कि दोनों तलवारें चर्च की हैं निस्सन्देह स्पष्ट है किन्तु यह विचार निराधार होगा कि सत बर्नार्ड लौकिक सत्ता तथा धार्मिक सत्ता के मध्य सम्बन्धों के विषय में कोई निश्चित सिद्धान्त प्रस्तुत कर रहा है।

सलिस्बरी के जान के विषय म बात दूसरी है। उसके श । का प्रसग उत्पीडक शासक तथा सच्चे राजा के अन्तर का विवेचन है तथा मूलभूत सिद्धान्त जो वह प्रतिपादित करता है यह है कि राजा कानून के अनुसार शासन करता है जबकि उत्पीडक शासक अपने को उसके ऊपर रखता है।[12] इस सदर्भ म व नग्राश आते हैं जिन पर हम विचार कर रहे हैं तथा इस अध्याय म तथा इससे अगले अध्याय म जान राजा का ईश्वर एव चच के कानूनों के साथ सम्बन्धा का विवेचन करता है। वह उन श । स प्रारम्भ करता है जिनको म उद्धत कर आए हैं तथा नान्स की परिषद् म का सटेन्टाइन की विनम्रता का मभिप्त वणन करता है कि किस प्रकार उसने बवन प्र यक्षता करना ही स्वीकार नही किया परन्तु धमवृद्धो के साथ बठना भी तथा उनके निणयो का दवा निणयो के रूप म स्वीकार किया। यद्यपि उसने परिषद् के सदस्यो को उदारता एव शान्ति के लिए प्रेरित किया किन्तु उसने घोषणा की कि पुरोहिता के निणयो के अधीन रहने वाले मनुष्य क रूप म उसके लिए उन व्यक्तियो के मामलो की जिनका निर्णय केवल ईश्वर द्वारा ही हो सकता है परीक्षा न्यायसगत नहीं थी। जान थियोडोसियस के धम बहिष्कार की बात भी उद्धत करता है तथा राजचिह्न तथा साम्राज्य की राजमुद्रा क प्रयोग से सत एम्ब्रोस द्वारा उसे निलम्बित किया गया बताता ह तथा य निष्कष निकालता है कि जो आशीर्वाद देता है वह आशीर्वाद ग्रहण करने वाले स महान् है तथा जो पद प्रदान करता है वह पद ग्रहण करने वाले से बडा है जो वधानिक रूप स एक प प्र ान करता है वह वधानिक रूप से उसे छीन भी सकता है। वह कहता है कि क्या सेम्युल ने साउल (Saul) द्वारा आज्ञा उल्लघन के कारण उसे पद युत करके उसके स्थान पर जस्स क पुत्र को सिंहासन पर नही बठा दिया था ?[13]

सत विक्टर के ह्यू क एक नेखाश म हम सलिस्बरी के जान क इन वाक्यो स समानता पाते हैं। सत विक्टर का ह्यू धार्मिक सत्ता द्वारा लौकिक सत्ता की स्थापना तथा उसका निणय करने का वणन करता है।[14]

यह कहना न्याय प्रतीत होगा कि सलिस्बरी के जान तथा आ सबग के होनारियस के ग्रन्था मे हम इस धारणा का प्रथम निश्चित वक्तव्य पाते हैं कि अनत सभी सत्ताए चाहे वे लौकिक हो अथवा धार्मिक आध्यात्मिक शक्ति की हैं न कि सत न कि तथा सत विक्टर के ह्यू के वाक्य जहा तक उनका क्षेत्र है इसी धा णा स सम्बद्ध प्रतीत होग। यह कहना अनुचित नहीं होगा है कि वह इनरी चतुथ स सघष म ग्रेगोरी सप्तम द्वारा ग्रहण की गई यथाथ स्थिति के सद्धातिक विकास का ही प्रतिनिधित्व करता है। इस विकास तथा हेड्रियन चतुथ क द्वारा सम्राट फ्रेडरिक बारबरोसा को भेज गए पत्र म कहा तक सम्ब ध हो सकता ह जिसने जसा कि हम देख चके है बडी हलचल उत्पन्न कर दो थी कहना असभव । तथापि यह स्पष्ट है कि यदि हैड्रियन के श किसी एस सिद्धा त को अभि यक्त करने क उद्देश्य स थ तो इसका जमनी म न केवल तुरन्त उग्र रूप म भी खडन ही नही किया था अपितु ड्रियन चतुथ ने भी स्पष्ट रूप स उसको अस्वीकार कर िया था।

तत्कालीन समस्याओ के प्रति सलिस्बरी क जान क दृष्टिकोण का एक दूसरा भी पक्ष है जो ध्यान देने योग्य है। यदि वह लौकिक सत्ता क कुप्रयोग को जिसे वह उसके अनौचित्यपूर्ण

दावे वहला है कठोरता स िदा करता है तो वह धार्मिक व्यवस्था के कुप्रयोग की ग्रालो चना करन म भी कम मडोचनीन -हीं है। -सने -नके प्रमुख पक्षो को स्वय तथा पोप हैडियन चतुथ के मध्य -र्तालाप क रूप म प्रस्तुत किय है जो -ाक अनुसार वेनवण्टम मे घटित हुआ था। वर्तालाप के बीच हैन्दियन न उससे पूछा कि मनुष्य पोप तथा रोमन चच के बारे म क्या सोच र्हे है। जान ने उत्तर दिया कि अनक -क्ति शिकायत करते हैं कि रोमन चच जो सभी चर्चों की जननी है एक माता के रूप म व्यवहार न करके विमाता के रूप मे -वहार कर रहा है। रोमन पादरी वग न यहूदी धमशास्त्रियो तथा फरीसियो की भाति मनुष्यो के कधो पर भारी बोझ डाल दिया ह जिसको वे स्वय अपनी अगुली से भी नहीं छूते। वे लोभी तथा लालची थे तथा मुफ्त रूप म न्याय प्रदान करने के बजाय उसे बेचते थे। पोप स्व- असहनीय रूप से भारपूर्ण हो गया था—जबकि चच और वेदियाँ खण्डर हो रहे थे वह अपने लिए प्रासादो का निर्माण करवा रहा था तथा राजसी और स्वणमय वस्त्र धारण कर रहा था। ईश्वरीय न्याय -च के शासको को दण्डित किए बिना नही रह सकता।

जब हैन्ड्रियन ने उसम पूछा कि वह स्वय बताए कि वह क्या सोचता है तो उसने उत्तर दिया कि वह चाटुकारी तथा अभिनेहात्मक स्वे-छाचारिकता के मध्य द्विविध स्थिति म अपने को पाता है किन्तु उसने कार्नी ल ग्रिदो -स के एक वक्तव्य की शरण ली जो कि पोप यूजनियस की उपस्थिति मे दिया गया था कि रोमन चच में लालच सवव्याप्त है जो कि सभी बुराइयों की जड है। जान ने यह कहने की सावधानी रखी कि रोमन पादरियो म उच्चतम सत्यनिष्ठा के व्यक्ति भी हैं तथापि उसने अपना मत बलपूवक स्पष्ट कर दिया कि मनुष्यो की शिकायत भी अनुचित नहीं है। उसने पोप से रोमन चच के पदों पर ऐसे व्यक्तियों को नियुक्त करने की प्राथना की जो कि नम्रता और मिथ्या गरिमा तथा धन स घृणा करत थ। उसने यह जानना चाहा कि पोप स्वय उन व्यक्तियों से उपहार एव धन की माग क्या करता है जो उसके पुत्र थे उसने सुझाव दिया कि वह ऐसा रोमन जनता की निष्ठा अर्जित करन के लिए करता होगा किन्तु उसने इस पर बल दिया कि इसका कोई औचित्य नहीं क्योंकि न्याय ऐसी वस्तु नहीं जिसे धन के लिए बेचा जाए।[15]

पोप हैड्रियन हसा तथा उसके निस्सकोच कथन की प्रशसा की और उससे सदव जो वह शिकायतें सुने सूचित करने का अनुरोध किया तथा उसके कथनो का उत्तर मेनेनियम एग्रिप्पा (M nenius Agrippa s) की पेट तथा शरीर के दूसर अगों की कहानी द्वारा दिया और जान ने अपने आपको सतुष्ट प्रदर्शित किया।[16] यह उल्लेखनीय है कि वह अन्तिम विषय पर एक बार की पुस्तक म पुन विचार करता है तथा रोमन चच की कठिनाइयो का कारण रोमन जनता के लालच को सतुष्ट करने का आवश्यकता को बनाता है।[17]

दूसरे स्थानो पर वह अत्यन्त उग्रता से बिशपो तथा आचडीकन्स और दूसरे पदाधिकारियो की न्याय विरुद्ध मांगो की निन्दा करता है तथा पोप के दूतो को भी क्षमा नही करता जिनके आचरण से ऐसा सोचने को बाध्य करता ह कि शतान ही ईश्वर का रूप बनाकर चच के उत्पीडन के लिए चला आया ह।[18] यह और भी अधिक महत्वपूर्ण ह कि

एक अन्य स्थल पर वह पुरोहितों से क्रोध न करने का अनुरोध करता है यद्यपि वह उनमें भी अनेक क्रूर तथा निरंकुश बतलाता है। यह प्रतीत होता है कि उसका यह कथन व्यंग्यात्मक है कि वह रोमन चर्च के प्रतिनिधियों का उल्लेख नहीं कर रहा है क्योंकि उनका न्याय मनुष्यों द्वारा नहीं हो सकता तथा यह अचिन्तनीय है कि वे प्रतिनिधि वह कार्य करेंगे जो प्रान्ता के गवर्न ों तथा प्रोकोन्सुला के लिए रोमन कानून द्वारा निषिद्ध है। *कौन विश्वास करेगा कि चर्च के धर्माचार्य जो दुनिया के न्यायाधीश तथा प्रकाश स्तम्भ हैं* उपहारों से प्रेम करते हैं नवकि वे निधनता का उपदेश देते हैं तथा इस प्रकार का आचरण करते हैं जिससे वे सभी के लिए आतंक उत्पन्न करते थे तथा कोई भी उनसे प्रेम नहीं करता था।[19] यदि लौकिक उत्पीड़क शासक का दवी तथा मानवीय विधि के अधीन उच्छेद न्यायोचित है तो कौन यह सोच सकता है कि पुरोहित वर्ग के अन्तर्गत उत्पीड़क को प्रेम तथा आदर प्राप्त होगा। [20]

सदर्भ

1 Cf John f Sali bury Policrat cu vi. 24 a d vi 23
2. Id d 20.
3. Id d 5
4 Cf ol pp 136–145
5 Cf ol Part I., c. 8
6. Id d., 6.
7 Id d 2.
8 Id d 3
9 St. Bern d De n deratione 3
10 भाग 3 अध्याय 3।
11 देखें भाग 1 अध्याय 4।
12 देखें खण्ड 3।
13 वही 4-3।
14 H gh f St V ctor De Sacramenti i Part 2 c. 4
15 J h of Sal bury P l craticus vi. 24
16. Id d d
17 Id id. vi 23
18 Id d 16
19 Id d 17
0 Id d d

तृतीय अध्याय

राइखर्सबर्ग का गेर्होह

सबस महत्त्वपूण लेखक जिसकी रचना लौकिक एव धार्मिक सत्ता के मध्य पुननवीकृत सघष द्वारा उठाए गए प्रश्नों क समकालीन मूल्यांकन का निदशन करती है राइखसबग का गेरहोह ह।

वह 1093 ई० अथवा 1094 ई० म उत्पन्न हुआ तथा 1132 ई० म राइखसबग के कॉलेजिएट चच का अध्यक्ष बना। वह जमन पादरियों के सुधारवादी दल का सबसे प्रसिद्ध साहित्यिक प्रतिनिधि था तथा सम्पूण जीवन पयन्त उसकी विशेष रुचि यह रही कि कथीड्रल एव कॉलेजियट चच क सदस्य अपने नियम का पूणत पालन करें। वह प्रतिष्ठापन विवाद की अन्तिम अवस्था म पोप क पक्ष का दृढसकल्प समथक रहा तथा 1169 ई० में अपने देहावसान क समय तक चच क कार्यों म उसका सक्रिय योगदान रहा।

उसके साहित्यिक ग्रन्थ जिनका सम्बन्ध यहाँ हमस ह दो वर्गों म विभक्त हैं। प्राचीन अर्थात् फ्रेडरिक बारबरोसा तथा एलेक्जण्डर तृतीय के मध्य क छिडने से पूव लिखे गए ग्रन्थ मुख्यतया उसक जसे जमन पादरियों के वाम्स क समझौते के प्रति दृष्टिकोण उसका जमन बिशपों की स्थिति पर पडने वाला प्रभाव तथा 'पदचिह्नों' को धारण करने वाले बिशपों के सामन्ती दायित्वों तथा सामन्ती अधिकारक्षेत्र के कारण उनक लौकिकीकरण क प्रभाव के प्रति उसकी गम्भीर रुचि का प्रदर्शित करने की दृष्टि से महत्त्व हैं। दूसरे वग के ग्रन्थ सघष के प्रारम्भ के बाद लिखे गए तथा मुख्यतया उसम उत्पन्न प्रश्नों म सम्बन्धित है।

ये रचनाए विचित्र रूप से एक ऐसे व्यक्ति क निणय को प्रदर्शित करने क कारण महत्त्वपूण हैं, जो यद्यपि एक दृढ तथा कठोर सुधारक था केवल मात्र किसी एक पक्ष का अनुयायी नहीं था किन्तु इसके विपरीत लौकिक एव धार्मिक सत्ताओं क विरोधी दावों के बीच एक ऐसा पक्ष धारण करने को प्रयत्नशील था जिसे वह दोनों के बीच एक उचित एव न्यायसगत सन्तुलन समझता था। एक ऐसा व्यक्ति जो यद्यपि चच की स्वतन्त्रता का निश्चयी समथक था किन्तु साथ ही चच द्वारा उसके अर्थ के रूप में की मा

जिसे वह साम्रा य की स्वतन्त्रता अथवा अधिकार मानता था निर्बाध निन्दा करता था। वास्तव मे यह उल्लेखनीय है कि अपने अन्तिम ग्रन्थ डे क्वार्टा विजीलिया नाक्टिस (*De Quarta Vigilia No tis*) म भी जिसे उसने पोप एलेक्जेण्डर तृतीय के पक्ष के प्रति निष्ठा के कारण रा प्रसबग म पलायन करने के बाद लिखा था वह गम्भीरता पूर्वक तथा दृढतापूर्वक इस सिद्धान्त पर बल देता है कि प्रत्येक सत्ता को दूसरी सत्ता के अधिकारो को मान्यता देना एव उनका समादर करना चाहिए।[1]

गरहोह के सिद्धान्तो के प्रथम पक्ष के सम्बन्ध म हम अत्यन्त सुविधापूर्वक ब्रशिया के आर्नोल्ड के मत का अध्ययन कर सकते हैं। उसके सिद्धान्तों एव कार्यों के सम्पूर्ण महत्त्व का विवेचन इस ग्रन्थ की परिधि में नहीं आता क्योकि उनका सम्बन्ध मध्यकालीन समाज के कई पक्षो से है। तदनुसार नियमानुसार हम चच द्वारा लौकिक सम्पत्ति एव सत्ता के स्वामित्व सम्बन्धी जो उसके विचार रहे प्रतीत होते हैं उनके परीक्षण से ही हम सन्तुष्ट रहना चाहिए। उनके सम्बन्ध म भी हम बहुत सावधान रहना चाहिए क्योकि उसके लेखो से यदि वास्तव म कोई थे कुछ भी सुरक्षित नही है तथा उसके विचारो की सूचना ऐसे स्रोतो से मिलती है जो मुख्यत उसके विरोधी हैं तथा एक दूसरे से सदा सगत भी नहीं हैं।[2]

उस काल के लेखक सक्षेप मे उसके मत का विवरण प्रस्तुत करते हैं। फ्राइजिंग का ओटो कहता है कि वह बिशपो का कटु आलोचक मठवासियों का शत्रु तथा केवल जनसाधारण की चापलूसी करने वाला था तथा उसकी मान्यता थी कि पादरी द्वारा सम्पत्ति धारण बिशपो द्वारा राजचिह्नो का धारण तथा मठवासियों के सम्पदा धारण का समर्थन नही किया जा सकता। इन सब पर राजा का स्वामित्व है तथा उसके द्वारा केवल जनसाधारण को ही ये प्रदान की जानी चाहिए।[3] हिस्टोरिया पोण्टीफिकेलिस (Historia Pontificalis) निश्चयपूर्ण सूचना नहीं देता किन्तु उसको यह शिक्षा देता हुआ दिखाता है कि कार्डीनलो का चर्च ईश्वर का चर्च नहीं है तथा वह पोप का इसलिए खण्डन करता था क्योकि पोप एव कार्डीनल घमण्डी पतित एव हिंसक व्यक्ति थे।[4]

गेस्टा डी फेडरिको (Gesta di Federico) का लेखक कहता है कि आर्नोल्ड लगभग अपने समय के सभी व्यक्तियो पर धर्म विक्रय के दोषी होने का आरोप लगाता था तथा उपदेश देता था कि जनता को न तो उनके सम्मुख पाप स्वीकृति करनी चाहिए न उनसे सस्कार कराने चाहिए और वह पोप पद की निन्दा उसकी ईर्ष्या तथा उसके न्यायालयों में भ्रष्टाचार के कारण करता था। लिगूरीनस (Ligurinus) नामक कविता का लेखक सूचना देता है कि आर्नोल्ड का मत था कि पादरियो का प्रथम फल जनता की स्वतन्त्रता के उपहार तथा दशमांश मिलना चाहिए किन्तु वह मठवासियो द्वारा सम्पत्ति के स्वामित्व तथा पोप द्वारा राजकीय सम्पदा के धारण की निन्दा करता था तथा शिक्षा देता था कि सभी वर्तमान सम्पत्ति राजा के अधीन है तथा जनसाधारण को प्रदान की जानी चाहिए।[5]

इन सबसे हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि आर्नोल्ड ने लौकिक सम्पत्ति के स्वामित्व के माध्यम से पादरियो के लौकिकीकरण का विरोध किया तथा इच्छा की कि

लौकिक सत्ताधारी उसे वापस ले लें। उसकी स्थिति अभी तक वसी ही प्रतीत होती है जसी पस्कल द्वितीय अथवा गेरहोह की है। तथापि वह उनसे भी आगे बढ गया था तथा प्रतीयमानत यह मानने लगा कि जहाँ तक चच इस प्रकार लौकिकीकृत था वह चच भी नहीं था तथा निष्ठावानो को उसकी सहभागिता से अलग हो जाना चाहिए उसकी स्थिति ग्यारहवीं शताब्दी के कुछ उग्र सुधारवादियो से भिन्न नहीं थी किन्तु वह चच की सत्ता तक ही सीमित नहीं थी।

इसीलिए गेरहोह ने उसकी निन्दा की है तथा गेरहोह उसके सिद्धान्तों की निन्दा से सहमत है तथापि उसने इस पर गम्भीर चिन्ता व्यक्त की कि चच ने अपने को उसकी मृत्यु के लिए उत्तरदायी बना लिया है स्पष्टतया उसका इस उत्तरदायित्व से बचने के इसके प्रयत्नो के प्रति पूर्ण सदेह है।[7]

नागरिक एव स्थानीय स्वतन्त्रता के विकास के प्रसग मे रोम नगर की जनता द्वारा पोप से स्वतन्त्र शासन की स्थापना के प्रयत्न से आर्नोल्ड के सम्बधो पर हम अगली पुस्तक मे विचार करेंगे जबकि रोमवासियो के सम्राट के निर्वाचन को नियन्त्रित करने के दावे का मध्यकालीन राजनीतिक सिद्धान्तों के इतिहास म कुछ महत्त्व नहीं है। तथापि यह उल्लेख योग्य ह कि वेजल (Wezel) नामक व्यक्ति के फ्रडरिक बारबरोसा को लिखे गए पत्र म जिसमे ये दावे प्रस्तुत किए गए हैं कान्सटेन्टाइन के दान को उसी प्रकार प्रवचनापूवक एक धोखा बताया ह[8] जसे कि 1001 ई० मे आटो तृतीय ने उसके बारे में कहा था।[9]

गेरहोह के प्रारम्भिक ग्रथ जसा हम अभी कह आए हैं सवप्रथम वाम्स के समझौते तथा चच पर उसक प्रभाव के प्रति उसके दृष्टिकोण को प्रदर्शित करने के कारण तो महत्त्वपूण हैं ही किन्तु यदि सम्राट प्रतिष्ठापन के अधिकार को त्याग द तो बिशपों द्वारा राजचिह्नों (Regalia) को समर्पित करने के पस्कल द्वितीय के प्रस्ताव द्वारा उठाए गए प्रश्नो के सम्बध के कारण भी वे रोचक हैं। प्रथम ग्रथ मे जिससे हमारा सम्बध है तथा जो 1126 ई से लेकर 1132 ई के बीच लिखा गया था वह उन परिस्थितियो के प्रति जिनके अन्तगत राजचिह्न प्रदान एव धारण किए जाते थे गहरी चिन्ता व्यक्त करता है। उसे इस पर गम्भीर विक्षोभ होता है कि बिशप मठ के अध्यक्ष तथा अध्यक्षाए निर्वाचन के पश्चात् राजचिह्नो को प्राप्त करने के लिए राजसभा में उपस्थित होते हैं तथा उसके लिए श्रद्धाजलि तथा स्वामिभक्ति प्रदान करते हैं।[10] वह इसी शिकायत को दूसरे ग्रथ मे दोहराता है जो कि 1142–43 ई म लिखा गया है। वास्तव में वह स्वीकार करता है कि पोप की एक आज्ञा के अनुसार बिशपो को राजा के प्रति 'न्याय' (Iustitia) प्रदान करना चाहिए किन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं था कि उनको श्रद्धाजलि भेंट करनी चाहिए अथवा निष्ठा की शपथ लेनी चाहिए।[11] प्रश्न का महत्त्व केवल सम्मान प्रदान करने तक ही सीमित नहीं है यह स्पष्ट है कि गेरहोह को जो बात सबसे अधिक चिन्तित करती है वह बिशपो द्वारा राजचिह्नों के स्वामित्व से जुडे हुए उनके कत्तव्यो का स्वरूप था विशेषतया सामन्ती सनिक सेवा प्रदान करना तथा वह पहले उद्धृत ग्रथ मे क्रोधपूवक प्रतिपादन करता है कि बिशपो द्वारा चच के धन का सनिकों को

बनाए रखने के लिए प्रयोग पूर्णतया अवधानिक था।[12] इसके कारण वह चर्च की सम्पत्ति के स्वरूप तथा उसके वांछित उपयोग के बारे मे विवेचन करने को प्रवृत्त होता है उसका एक अंश पादरियो के योगक्षेम के लिए दूसरा चर्च के निर्माण एवं मरम्मत के लिए तीसरा विधवाओं तथा आवश्यकता वाले व्यक्तियों की मदद के लिए चौथा स्वयं पादरी एवं उसके कुटुम्ब के भरण पोषण के लिए *तथा अतिथियों एवं पथिकों के लिए जिनके लिए उसके द्वार हमेशा खुले रहने चाहिए।*[13] वह चर्च की सम्पदा के तीन भाग करता है—दशमांश रियासतें तथा राज एवं सार्वजनिक कार्यों के लिए (Regales aut publicas functions)। उसका स्पष्ट मत है कि देवद्रोह तथा अन्याय के बिना पहली दो प्रकार की सम्पत्तियां *को चर्च से अधिग्रहण नहीं किया जा सकता किन्तु तीसरी के बारे मे* वह कहता है कि चर्च इस सम्पत्ति को बनाए रखने को अधिक उत्सुक नहीं है अतः चर्च के लौकिक कार्यों मे फसने की अपेक्षा श्रेष्ठतर हो कि चर्च इस सम्पत्ति से मुक्त हो जाए।[14]

यह एक महत्वपूर्ण धारणा है जो सम्भवतः उन उद्देश्यों पर कुछ प्रकाश डाल सके जो कि पस्कल द्वितीय के राजचिह्नों को समर्पित करने के प्रस्ताव की पृष्ठभूमि में थे। गेरहोह स्पष्टतः सम्पत्ति के उन दो स्वरूपों म स्पष्ट विभेद करता है जो न्यायपूर्वक चर्च की अविभाज्य सम्पत्ति है तथा वे जिनका अधिकाधिक केवल क्षणिक लाभ चर्च को हो *सकता है तथा जो उसे उसके उचित कर्तव्यों के बाहर फसाये तथा जिन्हें वह त्याग* सकता है। वास्तव मे वह हठधर्मितापूर्वक यह नहीं कहता कि उनको छोड़ देना चाहिए तथापि उसकी स्थिति इसके बहुत निकट है। ये ड्यूकी की रियासतें काउंटों की जागीर इत्यादि ऐहिक वस्तुएं हैं जबकि दशमांश तथा स्वतन्त्र इच्छा से प्रदत्त उपहारो पर ईश्वर का *अधिकार है तथा यद्यपि वह उन व्यक्तियों को नाराज नहीं करना चाहता जिनका* यह मत है कि एक बार चर्च को दे देने के बाद उनको वापस लेना धर्मद्रोह है वह इसकी पुष्टि करता है कि बिशप द्वारा राजकीय एवं सनिक कर्तव्यो का पालन अपने ढग से किसी सीमा तक धर्मच्युति बिना नहीं हो सकता।[15]

इस लेख मे प्रदर्शित दृष्टिकोण रोचक एवं महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे यह प्रदर्शित होता है कि कुछ लोगो की यह भावना थी कि यदि पस्कल द्वितीय के प्रस्ताव स्वीकार कर लिए जाते तो अच्छा होता। गेरहोह कई वर्षों तक इस विषय म गम्भीरतया *चिन्तित रहा यद्यपि यह दृष्टिगोचर होगा कि उसका निर्णय इस विषय मे समय-समय पर* बदलता रहा।

1142–43 ई म लिखा गया ग्रन्थ जिसको हम पहले ही उद्धत कर चुके हैं बहुत अधिक मात्रा मे इसी विषय का विवेचन करता है। वह इस कथन से प्रारम्भ करता है कि राजाओ और बिशपो दोनो के शत्रुओं के रूप मे उसका विरोध किया गया है क्योंकि उसने यह माना है कि जो ईश्वर का है मनुष्यो को उसे ईश्वर को दे देना चाहिए तथा जो सीजर का है वह सीजर को क्योंकि दोनों मे से कोई भी अपनी सीमा मे रहने से सन्तुष्ट नही है *किन्तु राजा बिशपों के अधिकारो को हड़प गए हैं तथा बिशपो ने* राजाओं के राजचिह्नो को हड़प लिया है।[16] वह स्पष्ट भाषा में उन बिशपों की निन्दा करता है जो आक्रमणों को सचालित करते हैं तथा चर्च के धन को सनिक कार्यवाही में

खच करते हैं तथा उसका यह निश्चित मत है कि जब बिशप राजा को श्रद्धांजलि देते हैं तथा निष्ठा की शपथ लेते हैं तो चच सासारिक कर्मों म रत हो ही जाएगा ।[17] तथापि यह प्रतीत होगा कि वह उस समय यह मानने को तयार नही था कि राजचिह्नों को समर्पित कर देना चाहिए किन्तु यह मानता था कि उनका प्रशासन बिशपो द्वारा बुद्धिमत्तापूवक किया जाना चाहिए ।[18] वह पस्कल द्वितीय तथा हेनरी पचम के बीच सधि वार्ता का विवरण देता है तथा सूचना देता है कि पस्कल राजचिह्नों को सौंपने का प्रस्ताव करने को राजी कर लिया गया था किन्तु इसके लिए वह अपनी सम्मति व्यक्त नही करता तथा उसकी भी सूचना देता ह जिसे वह इस प्रस्ताव का प्रत्याक्षर समझता ह ।[19]

वह वाम्स के समझौते के उपबन्धो तथा अपने युग की परिस्थितियो के बारे म भी एक महत्वपूर्ण वक्तव्य अपने ग्रथ मे देता है। *वह कहता है कि समझौते के इन उपबन्धो की* सूचना कि जमनी क बिशपों का चुनाव सम्राट की उपस्थिति मे हो तथा वे दण्ड एव मुद्रा द्वारा राजचिह्नों को प्राप्त करें लेटरन की परिषद् म क्षोभ एव सदेहपूवक ग्रहण की गई *थी तथा* वह इस बात पर प्रसन्नता व्यक्त करता है कि पहली शत का प्रयोग नहीं हो रहा है और आशा व्यक्त करता है कि श्रद्धाजलि तथा निष्ठा की प्रथा भी समाप्त हो जाएगी ।[20] निष्कष रूप में यह ग्रथ वाम्स के समझौते की उस व्याख्या का खण्डन करता है कि वह बिशपो पर *श्रद्धाजलि तथा निष्ठा की शपथ का दायित्व डालता है* जिसको हम पहले ही उद्धत कर चुके हैं ।[21]

दूसरे ग्रन्थ म जिसका शीषक डे नावीटेटीबस ह्यूडस टेम्पोरिस (De Novitatibus hu Temporis) है तथा जो 1155–56 ई म लिखा गया था वह अपने मूल विचार से और आगे बढ गया प्रतीत होता ह। वह कहता ह कि इस पर विवाद ह कि क्या चच से राजचिह्नों को ले लेना चाहिए तथा वह यह प्रतिपादित करता प्रतीत होता ह कि यह नही करना चाहिए। वह स्वीकार करता ह कि इस धारिता मे कुछ कतव्य भी निहित हैं जिनका पालन बिशप को करना चाहिए अत यह वधानिक था कि बिशप राजा के प्रति निष्ठा की शपथ लें *Salvo Sui or dinis of ficio* तथा यदि बिशप इस शपथ को भग करे तो वह अपने आध्यात्मिक न्यायाधीश द्वारा तथा उस सत्ता द्वारा जिससे वह राजचिह्नों स मूलित होता है धार्मिक तथा लौकिक दोनो गरिमाओ से वचित किया जा सकता ह। *उसी ग्रन्थ के दूसरे लेखाश से यह स्पष्ट है कि वह उस समय इन कत यों मे सामन्तो की* सनिक सेवा भी सम्मिलित मानता था जिनको कि बिशपो द्वारा वह भूमि जो उन्हें राजचिह्नों के रूप म प्राप्त हुई थी जागीर म दी गई थी। वह केवल यह चाहता ह कि उनको नई अधीनताए नहीं बनानी चाहिए तथा दशमाशो एव स्वतन्त्र इच्छा उपहारों का ऐसा उपयोग नहीं करना चाहिए।

गेरहोह के दृष्टिकोण मे यह परिवतन जो इन दो प्रबन्धो से विदित होता है स्पष्ट ह किन्तु उसके आगामी महत्वपूर्ण ग्रन्थ की परीक्षा से यह स्पष्ट हो जाएगा कि उसका चित्त अभी भी इस सारे मामले से बहुत क्षुब्ध था। डी इन्वेस्टीगेशन एन्टी क्रिस्टी (De Investi atione Antichristi) *नामक ग्रन्थ म जो कि 1161–62 ई म लिखा गया* था, वह यदि सम्राट प्रतिष्ठापन का अधिकार त्याग दे तो राज सम्पत्ति के समपण के

बारे में हेनरी पचम तथा पस्कल द्वितीय के मध्य समझौता वार्ता का दूसरा विस्तृत वर्णन प्रस्तुत करता है।[23] वह इस प्रस्ताव को हेनरी पचम की ओर से परन्तु असद्भाव से प्रस्तुत किया गया प्रदर्शित करता है क्योंकि वह जानता था कि जर्मन एव गैलीकन बिशप उससे सहमत नहीं होंगे।[24] पस्कल ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया किन्तु बिशपों ने इसका तुरन्त क्रोधपूर्वक खण्डन कर दिया। यह बहुत उल्लेख योग्य है कि गेरहोह बाद की घटनाओं का विवरण देने मे हेनरी का उद्देश्य पस्कल को पकड़ने में या तो प्रतिष्ठापन के राजकीय अधिकार को स्वीकार करने या राजचिह्नो का त्याग करने के लिए उसे विवश करना बताता है तथा वह पस्कल द्वारा दूसरी बात को स्वीकार करना प्रदर्शित करता है।[25] वह पस्कल द्वितीय की मृत्यु के बाद भी हेनरी की वही स्थिति बनाए रखते हुए—अर्थात् यह मानते हुए कि या तो चर्च राजचिह्नों को त्याग दे या सम्राट को बिशपों की नियुक्ति का अधिकार बना रहे प्रदर्शित करता है।[26]

गेरहोह दोनों पक्षों की ओर से प्रस्तुत किए गए या प्रस्तुत किए जा सकने वाले तर्कों का एक रोचक साराश प्रस्तुत करता है। चर्चवादी दल का यह तर्क था कि यह उचित एव न्यायसगत था कि चर्च राजचिह्नों द्वारा प्रदान किए जाने वाले धन एव गरिमा का उपभोग करें राजकीय पक्ष मानता था कि दशमांश एव स्वतन्त्र इच्छा आहुति पर चर्च का न्यायोचित अधिकार था तथा उनमे सम्राट की सेवा का कोई दायित्व निहित नहीं था किन्तु उनकी मान्यता थी कि राजचिह्नो का प्रश्न इससे भिन्न था। यदि चर्च इनको रखना चाहता है तो बिशपों को सम्राट की सेवा तथा नजराना प्रदान करना होगा तथा यदि पादरी के लिए लौकिक और सनिक मामलो में योगदान करना वधानिक नहीं तो उन्हें उन राजचिह्नों को छोड़ देना चाहिए जिनके साथ ये दायित्व जुड़े हुए हैं। यदि बिशप यह कहें कि वे सम्राट की ये सेवाएँ करने तथा धार्मिक कर्तव्यों का भी पालन करने मे भी समर्थ हैं तो राजकीय पक्षधरों का कहना था कि फिर यह उचित था कि सम्राट को उनकी नियुक्ति का प्रथम अधिकार प्राप्त हो क्योंकि यह न्यायोचित नहीं था कि किसी को भी दूसरे सामन्तों की राय से सम्राट के अतिरिक्त अन्य किसी के द्वारा राजपद प्रदान किया जाए।[27] सम्राट चर्च को स्वतत्र निर्वाचन का अधिकार न देने को भी कृत निश्चय थे तथा बिशप भी राजचिह्नों को न सौंपने के लिए उतने ही कृतनिश्चय थे किन्तु सम्राट के प्रति परम्परागत सेवा भी करने को तयार थे।[28]

गेरहोह कहता है कि उसके अधिकार में न तो बिशपों के कार्यों का निर्णय करना और न यह निर्धारित करना था कि राजा के प्रति निष्ठा की शपथ एव नजराने ने बिशपों का दायित्व उन लौकिक मामलो में कहाँ तक बढ़ा दिया था जिसकी कि सत पाल ने निन्दा की है वह कहता है कि वास्तव में इस प्रकार प्रतिबन्धित होने पर भी वे प्रार्थना एव अध्ययन के लिए कुछ समय निकाल सकते हैं और इस प्रकार अपने दायित्वों के बावजूद लगभग स्वतत्र रह सकते हैं। ईश्वर ही यह निर्णय करेगा कि राजचिह्नों का स्वामित्व चर्च का कहाँ तक साधक अथवा बाधक है। अतत ईश्वर ही अपने चर्च को वह स्वतन्त्रता प्रदान करे जो उसके योग्य है।[29]

कुछ आगे बढ़कर गेरहोह उसी ग्रन्थ में इसी विषय का पुन निरूपण किसी सीमा तक

भिन्न शब्दो म करता है। उसने स्पष्टत अनुभव किया कि राजचिह्नो के स्वामित्व मे लौकिक एव धार्मिक सत्ताओ के कर्तव्यो के मध्य भ्रान्ति की बहुत अधिक सभावना थी तथा वह बलपूर्वक उन दोनो म अन्तर का प्रतिपादन दो तलवारो की शब्दावली द्वारा करता है। स्वय ईसा ने धर्म ग्रन्थ म इन दो सत्ताओ म विभेद किया है जब उसके शिष्यो के इस कथन के उत्तर मे कि देखो ये दो तलवारें हैं उसने कहा कि यही पर्याप्त है। किन्तु गेरहोह कहता है कि अब एक ऐसी तीसरी शक्ति हमारे बीच है जो दोनो का सम्मिश्रण है वह इस तथ्य का एक प्रभावशाली उदाहरण इसम पाता है कि कभी कभी बिशप के सम्मुख केवल क्रास ही धारण नहीं किया जाता जो चच के पद एव ईसाई विनम्रता का प्रतीक था किन्तु ड्यूक का राजचिह्न भी जो उस राजा द्वारा अपराधियो को दण्ड देने के लिए अधिकार के प्रतीक रूप मे उसे प्रदान किया गया है। गेरहोह को यह विकृत एव अविवेक पूर्ण प्रतीत होता है वास्तव म यहूदी पुरोहितो को लौकिक तलवार प्रयोग करने की अनुमति थी ईसाई पुरोहितो को नहीं।[30] वह कहता है कि यदि यह प्रतिपादित किया जाए कि राजाओ ने अपनी धार्मिक उदारता के कारण बिशपो को ड्यूक के तथा अन्य पदो के अधिकार-क्षेत्र की आय प्रदान की है तथा उनम निहित न्याय की व्यवस्था का अधिकार भी प्रदान किया है अत यह उचित ही है कि इस अधिकार के प्रतीक बिशप क आगे ले जाए जाए तो वह उत्तर देगा कि यद्यपि वह इस उदारता के लिए राजाओ की प्रशसा करता है तथापि उसक मत म यह अधिक अच्छा होता यदि वे न्याय प्रदान करने की सत्ता अपने पास ही रखे रहते तथा आय को बिशपो को प्रदान कर देते।[31] रोम म उसके अनुसार जो बुद्धिमत्तापूर्ण व्यवस्था थी उसका वपरीत्य वह फ्रास की निन्दनीय परम्परा से प्रदर्शित करता है। वह कहता है कि रोम म नगर का प्रधान पोप से दीवानी मामलों के निर्णय का अधिकार प्राप्त करता था किन्तु फौजदारी अधिकार क्षेत्र की प्राप्ति सम्राट से होती थी जबकि इन साम्राज्यो मे बिशप अपने प्रतिनिधि (Vicarias potestates) नियुक्त करते थे जो दीवानी व फौजदारी दोनो प्रकार के मामलो का न्याय करते थे और इस प्रकार अपने को रक्तपात के लिए उत्तरदायी बनाते थे जो पादरियो के लिए वर्जित था।[3] कुछ ऐसे व्यक्ति थे जो यह तर्क देते थे कि अन्ततोगत्वा यह भी वैसी ही बात थी जैसी कि पुरोहितो द्वारा राजाओ की नियुक्ति किन्तु वह इस मान्यता का खण्डन बलपूर्वक उन शब्दो मे करता है जो बहुत महत्वपूर्ण हैं। वह कहता है कि बिशप न तो सम्राटो का निर्माण करते हैं न उनकी नियुक्ति किन्तु वे उनको केवल आशीर्वाद देते हैं तथा ऐसे व्यक्तियो के सिर पर राजमुकुट रखते हैं जो या तो सामन्तो एव जनता के निर्वाचन से अथवा वश परम्परा के उत्तराधिकार से उसके पात्र बन हैं। राजा पुरोहितो के आशीर्वाद से नहीं बनत किन्तु दिव्य नियमो क अनुसार मानवीय निर्वाचन एव सहमति से बनते हैं।[33]

गेरहोह उस सिद्धान्त का खण्डन करता है जिसे वह ब्रशिया के आर्नोल्ड का सिद्धान्त बताता है कि चच जिसने लौकिक मामलो म अपने को लिप्त कर लिया है अब ईश्वर का चच नहीं रहा है। तथापि वह रोमन चच द्वारा आर्नोल्ड के वध मे योगदान पर गहरी चिन्ता व्यक्त करता है तथा उसकी कठोर निन्दा करता है। वह विषय के विवाद का उप सहार यह कहकर करता है कि वह चच के अधिकारियो द्वारा राजचिह्नों के धारण का

विरोधी नहीं है यदि वे विनम्रता से एवं वैधानिक रूप से उनका प्रयोग करें किन्तु जब पादरी या बिशप अपने कर्तव्यों को त्याग दें तथा अपने को लौकिक मामलों में व्यस्त बना लें जब वे लौकिक तलवार का प्रयोग उनके विरुद्ध करें जिनको कि वे अपना शत्रु समझते हैं, श्रद्धालुओं द्वारा प्रदत्त दशमांश तथा आहुतियों के धन का प्रयोग अपना और रक्षा से अपने को सुसज्जित करने के लिए करें तो ऐसा प्रतीत होता है कि धार्मिक स्थानों में विध्वंस के घृणित कार्यों को प्रतिष्ठित कर रहे हैं क्योंकि ऐसे कार्य ईसा के अनुरूप न होकर ईसा विरोधियों के अनुरूप हैं।[34]

हम बिशपों द्वारा राजचिह्नों के स्वामित्व के विषय में गेरहोह के दृष्टिकोण पर विस्तारपूर्वक विचार कर चुके हैं क्योंकि यह प्रश्न स्पष्ट द्वारा उनके त्यागने के महत्व पर पर्याप्त प्रकाश डालता है। यह स्पष्ट है कि सुधारवादी दल के प्रसिद्ध सदस्यों में कम से कम कुछ तो ऐसे थे जो यह अनुभव करते थे कि इनकी धृति चर्च को बड़ी कठिनाई में डाल देती है तथा उसको लौकिकीकरण की ओर प्रवृत्त करती है तथा बिशपों एवं पादरियों को उचित कर्तव्यों से विमुख करती है। स्पष्टतः गेरहोह इससे अधिक विक्षुब्ध एवं व्याकुल था। अपने प्रारम्भिक दिनों में वह यह स्पष्टतः मानने को प्रस्तुत प्रतीत होता है कि राजचिह्नों का त्याग लाभपूर्वक किया जा सकता है किन्तु बाद की रचनाओं में उसका यह समग्र रूप से विचार प्रतीत होता है कि उनको बनाए रखना चाहिए किन्तु वह उनसे आने वाले खतरों, चर्च के लौकिकीकरण के खतरे तथा जैसा हम देख चुके हैं क्रमशः लौकिक एवं धार्मिक सत्ताओं के उचित कर्तव्यों में अव्यवस्था के खतरे का प्रबल अनुभव करता था। वह प्रतिष्ठापन विवाद में पोप की मान्यता का तथा धार्मिक सत्ता की स्वतन्त्रता का निश्चयी तथा उत्साही समर्थक था किन्तु वह दोनों सत्ताओं के मूलभूत अन्तर से अभिन्न था हम देख चुके हैं कि वह दोनों तलवारों में कितना स्पष्ट विभेद करता है।

इस प्रकार हम उस बिन्दु पर आ जाते हैं जहाँ गेरहोह की मान्यता के दूसरे महत्वपूर्ण पक्ष को स्वाभाविक सम्बन्ध उपलब्ध होता है जिसका सम्बन्ध लौकिक तथा धार्मिक सत्ता के पारस्परिक सम्बन्धों से है। इस विषय में उसकी धारणाएं मुख्यतः पोप एलेक्जेण्डर तृतीय के निर्वाचन से प्रारम्भ होने वाले फ्रेडरिक बारबरोसा तथा पोप के बीच हिंसक संघर्ष के संदर्भ में विकसित हुई थीं। किन्तु उनका वर्णन करने से पूर्व गेरहोह के एक प्रारम्भिक ग्रन्थ में वर्णित कुछ मान्यताओं का संक्षिप्त उल्लेख करेंगे। चौंसठवें साम (*Psalm Lxiv*) पर अपनी टीका में जिसका काल 1151 ई. माना जाता है वह इसकी पुष्टि करता है कि पोपों ने कई राजाओं और सामन्तों को उनकी अयोग्यता एवं क्रूरता के कारण पदच्युत एवं धर्म-बहिष्कृत भी किया है तथा उनके स्थानों पर दूसरों को प्रतिष्ठित किया है ताकि वे तलवार से उन पर आक्रमण कर सकें जो चर्च एवं साम्राज्य के शत्रु हैं किन्तु वह चर्च के अधिकारियों को चेतावनी देता है कि वे सावधान रहें ताकि वे अपने शत्रुओं की मृत्यु के लिए अपने को उत्तरदायी न बना लें।[35] वह उन बिशपों की निन्दा करता है जो अपने व्यक्तित्व, चर्च के पद तथा काउण्ट के पद की गरिमा में विभेद नहीं करते थे तथा युद्ध करके निर्दोष व्यक्तियों की भी हत्या कराते थे तथा वह अपनी यह उत्कट अभिलाषा व्यक्त करता है कि धार्मिक कार्य धार्मिक व्यक्तियों द्वारा किए जाएं तथा

लौकिक काय लौकिक व्यक्तियों द्वारा तथा दोनो सत्ताओं की उचित सीमा बनाए रखी जाए।[36] गेरहोह् स्पष्टत चच के शत्रु राजाओं तथा सामन्तो के धम बहिष्कार एव पदच्युति की निन्दा नहीं करना चाहता ह कुछ आगे जाकर वह स्पष्टतया कहता ह कि उसके मत म यह औचित्यपूण एव यायोचित था।[37] वह एक अय सिद्धात का सुभाव देता ह जिसका इन्नोसेन्ट तृतीय के दावो म महत्त्वपूण विकास हुआ कि विभिन्न देशो के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो मे हस्तक्षेप किया जाए जिस पर हम अगले खण्ड म विचार करेगे। वह सुझाव देता है कि यह उचित है कि किसी देश के आन्तरिक झगडों मे एव देशो के पारस्परिक विग्रह की दशा मे चच यह घोषित करे कि कौनसा पक्ष न्यायपूण है तथा उस पक्ष के समथको की अपने प्रतिनिधियो द्वारा सहायता करे तथा वह इस तथ्य का अनुमोदन करते हुए वणन करता है कि जबकि कुछ समय पूव हगरी के राजा ने यूनानियो से युद्ध करने का विचार किया तो उसने पहले बिशपो की एक परिषद् बुलाई तथा जब उन्होने घोषणा की कि हगरी के द्वारा ही शाति सधि का तोडा गया है तो वह अपनी परियोजना से विरत हो गया। वह प्रतिपादन करता है कि यदि चच के बिशप विवादपूण मामलो क जिनसे युद्ध की सम्भावना हो न्यायपूण या अन्यायपूण होने का निणय दें तथा विशेषतया यदि उनके निणय की पुष्टि पोप कर दे तो कोई भी राजा उनका प्रतिरोध नहीं कर सकेगा क्योकि पोप राज्यो के ऊपर स्थापित किया गया है तथा उसे उनको बनाने का व मिटाने का अधिकार है।[38]

यह स्पष्ट ही प्रतीत होता है कि उस समय गरहोह् उन सामान्य सिद्धान्तो को मानता था जो कि हम अधार्मिक शासको को पदच्युत एव धम बहिष्कृत करने के पोप के अधिकार के विषय मे हिल्डेब्राण्ड का मन कर सकते हैं। यद्यपि वह प्रत्यक्षतया हिल्डेब्राण्ड या हेनरी पचम का नाम नहीं लेता किन्तु उनकी ओर सकेत बहुत स्पष्ट प्रतीत होता है और निश्चित ही ऐसे मामल म काय करने के पोप के अधिकार के सिद्धात की पुष्टि स्पष्ट है। तथापि हम यह ध्यान देने की सावधानी रखनी चाहिए कि गेरहोह् इसे दोनों सत्ताओ के कतव्यो मे अन्तर के अपने सिद्धात का खण्डन नहीं मानता। कुछ आगे चलकर उसी ग्रन्थ मे वह इस बात पर बल देता है कि पादरियो को अपने को दण्ड न्याय म पृथक रखकर अपना काय लौकिक अधिकारियो को यह शिक्षा देना मात्र मानना चाहिए कि क्या ठीक है तथा न्यायोचित है तथा वह अपने मत का सार पोप निकोलस प्रथम के सम्राट माइकेल को लिखे पत्र मे स पोप जिलेसियस के इन शब्दो के उद्धरण स प्रस्तुत करता है जिनम कहा गया है कि ईसा द्वारा दोनो सत्ताओ को अलग करके उन्हें अलग-अलग काय प्रदान किए गए।[39] तथापि गरहोह् के मत को पूणतया समझने के लिए हम नए सघष छिड़ने के बाद लिखे गए प्रबन्धो पर अपना ध्यान केन्द्रित करगे।

उसका डी इनवेस्टीगेशन एन्टी क्रिस्टी (De Investigatione Antichristi) नामक ग्रन्थ जिससे हम बहुत स उद्धरण पहले ही दे चुके हैं जसा हमने बताया था 1161-62 ई० म पोप के विवादास्पद निर्वाचन के लगभग दो वष बाद लिखा गया था तथा गेरहोह् सुझाव देता है कि यह विपत्ति चच पर ईश्वर के दण्ड का एक भाग थी। दूसरे धमद्रोहो की दशा म यह निणय करना सुगम था कि कथोलिक चच कौनसा है, किन्तु

इस मामले म बुद्धिमान एव सरय क स च प्रमियो के प्रतिरिक्त किसा दूसरे के लिए किसी निश्चय पर पहुँचना सुगम नहीं ह ।[40] व० वास्तविक निर्वाचन का विस्तृत विवरण देता है तथा निष्कष निकालता है कि यह प्रबतक स्पष्ट है कि एलेक्जण्डर का पक्ष प्रधिक ठीक था[41] किन्तु वह वणन करता है कि किस प्रकार एलेक्जण्डर क विरोधियो ने उस पर प्रारोप लगाए जिनका हम पहल ही उल्लेख कर चुके है—प्रर्थात् एलेक्जण्डर तथा उसके पक्ष के कार्डीनलो न हेड्रियन चतुथ के जीवित रहते ही सम्राट के विरुद्ध सिसली तथा मिलेनीज के राजा से मिलकर षडयन्त्र किया था तथा शपथपूवक प्रतिज्ञा की थी कि व किसी भी ऐसे व्यक्ति को पोप नही चुनेंगे जो षडयन्त्र का रा स्य नही था तथा सिसली व मिलन के लोगो द्वारा इसका प्रतिज्ञा करने के लिए उनको रिश्वत दी गई थी कि व फ्रे डरिक को धम बहिष्कृत कर देंगे तथा उनकी राय के बिना उस दोष मुक्त नहीं करेंगे ।[42] वह वणन करता है कि उसम विक्टर तथा एलेक्जण्डर के प्राचरण म प्रन्तर भी बताया गया है जबकि विक्टर न पाविया म उपस्थित होकर प्रपना दावा परिषद के सम्मुख प्रस्तुत किया था एलेक्जण्डर ने गवपूवक वसा करने स प्रस्वीकार कर दिया था ।[43]

ऐसा प्रतीत होता है कि गेर होह इन कारणो स बहुत विचलित हो गया तथा उस यह प्राभास हुआ कि चच का निर्णय इस विषय में इतना विभाजित है कि किसी भी निर्णय पर पहुँचना उस कठिन प्रतीत हुआ । एलेक्जण्डर के समथक यह प्रतिपादन करते थे कि एटाओक (Antioch) तथा यरूशलम के धम पीठ उसे स्वीकार करत हैं । किन्तु विक्टर के कथनो के प्रनुसार दूसरे चर्चों के निर्णय का विचार करना भी प्रावश्यक था क्योंकि विशेषत *पूर्वीय चर्चों की जानकारी बहुत कम थी ।*[44] *गेरहोह एलेक्जण्डर द्वारा पाविया की परिषद्* के सम्मुख प्रपनी स्थिति की निर्दोषिता सिद्ध न करने के काय से परेशान हो गया था । वह प्रतिपादन करता है कि ईसा ने शिष्यो द्वारा प्रपने पुनर्जीवित होने पर सदेह करने पर स्वय स्वग से उतर कर दशन दिए थे तथा सत पीटर न सत पाल की भिडकी के सामने प्रात्मसमपण कर दिया था ।[45] वह विक्टर के पक्ष मे निर्णय करने ही वाला था कि उसे तूलूज (Toulouse) म एक परिषद् के होने का समाचार मिला जिसम एक सौ बिशप फ्रास इग्लण्ड तथा स्पेन के राजा विक्टर के दूत एलेक्जेण्डर तथा सम्राट उपस्थित थे तथा परिषद् ने एलेक्जण्डर के पक्ष म निर्णय किया तथा विक्टर को धम-बहिष्कृत कर दिया ।[46] तथापि वह इससे विश्वस्त न ही हुआ क्योंकि परिषद् न षडयन्त्र के प्रारोप पर विचार नही किया था तथा वह प्रनुभव करता था कि यह सर्वाधिक गम्भीर प्रश्न है तथा प्रारोप की सत्यता या प्रस त्यता का निर्धारण केवल सामान्य परिषद् मे ही हो सकता है ।[47]

गेरहोह के मन मे मुख्यत दो प्रश्न थे क्या षडयन्त्र का प्रारोप सत्य है तथा क्या सामान्य परिषद् के सम्मुख उस पर लगाए गए प्रारोपो को प्रस्तुत करने मे प्रस्वीकार करना एलेक्जण्डर तृतीय के लिए उचित था । वह सम्राट के विरुद्ध यदि यह प्रारोप सत्य हो[48] षडयन्त्र की निन्दा करने म सकोचरहित है तथा सामान्य परिषद् के निर्णय के प्रतिरिक्त उस इस कठिनाई से उबरने का कोई भी माग नही दिखाई देता ।[49] व० विस्तार पूवक इस प्रश्न की परीक्षा करता है कि किस प्रकार एव किन शर्तो म पोप प्रपने ऊपर लगाए गए प्रारोपों से प्रपने को मुक्त कर सकता है । वह कहता है कि सत पाल ने यरूशलम

म प्ररितों से विचार विनिमय किया था ताकि उनके सिद्धान्तो से किसी भी प्रकार से भिन्न होने के कारण वह लोक निन्दा को जन्म न दे तथा वह वर्णन करता है कि किस प्रकार पोप मार्सेलस (*Marcellus*) ने जिसने मूर्तियो के प्रति चढावा अर्पित किया था धर्माचार्यों के यह स्वीकार करने पर कि उसका निर्णय कोई भी नहीं कर सकता तथा क्योंकि वह अपने को चर्च के सम्मुख दोषमुक्त नही कर सका था उसने स्वय अपने को धर्म बहिष्कार तथा पदच्युति का दण्ड दिया था तथा किस प्रकार पोप लियो तृतीय ने सार्वजनिक रूप से शार्लमान तथा जनता की उपस्थिति मे अपने ऊपर लगाए गए आरोपो से अपने को मुक्त किया था।[50] वास्तव मे गरहोह इस सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है कि कोई भी पोप का न्याय नही कर सकता[51] तथापि वह इसे स्वीकार नहीं करता कि यह सिद्धान्त विवादास्पद निर्वाचन की दशा मे प्रयोग किया जा सकता है। उस मामले मे उसका विचार है कि दावेदारो को अपने को अपने भाग्यो (निर्वाचक बिशपो) के सामने प्रस्तुत करना चाहिए तथा अपना दावा प्रस्तुत करना चाहिए ताकि ईश्वर का चर्च दोषो का प्रतिरोध एव अच्छाइयो को स्वीकार कर सके।[5] वह विक्टर तथा उसके समर्थक को कार्डिनलो के साक्ष्य के आधार पर जो स्वय उसमे भागीदार थे उस षड्यन्त्र के प्रति अपनी आशका की पुनः पुष्टि करता है जो सम्राट के विरुद्ध किया गया था तथा माग करता है कि जिन पर यह आरोप लगाया गया है वे अपने को उससे दोषमुक्त करें तथा साम्राज्य के शत्रुओ से सम्बन्ध तोड लें विशेषत इसलिए कि सम्राट उनके द्वारा सभा शिकायत किए गए मामलो मे न्याय करने को तयार है।[53] गरहोह ने जिस प्रकार प्रारम्भ किया था उसी प्रकार वह यह कहकर अध्याय का उपसहार करता है कि इन कठिनाइयो का एक मात्र हल सामान्य परिषद् को बुलाने मे है जो दो दावेदारो के बीच निर्णय कर सके तथा धार्मिक एव राजकीय सत्ता के बीच शांति स्थापित कर सके।

यह बहुत उल्लेखनीय है कि गरहोह सारी परिस्थिति से इतना विक्षुब्ध था कि उसने पोप की राजसभा (Romani) की सम्पूर्ण नीति का कठोर निन्दा अपनी पुस्तक मे चालू रखी। उसने उन पर सबसे बढकर अभिमान तथा लालच का आरोप लगाया तथा अवज्ञा पूर्वक सुझाव दिया है कि वे प्रायः सभी बिशप पदो को समाप्त करके चर्च के सभी अगो को प्रत्यक्षत रोम के शासन के अधीन ले आए व शासको एव प्रजाओं के राजनीतिक सम्बन्धो मे हस्तक्षेप करेंगे जो उनकी आज्ञापालन न करेंगे उनको धर्म-बहिष्कृत करेंगे और य सब कार्य वे धन के लिए करेंगे।[54] वह वर्तमान सघर्ष एव धर्म विद्रोह का कारण रोमनो के लालच को बताता है जो कि सिसेलियन राजाओ तथा मिलन वासियो के स्वर्ण द्वारा भ्रष्ट बना दिए गए हैं तथा वह मिलन द्वारा राजकीय सत्ता के प्रतिरोध का कारण रोमवासियो के समर्थन को बताता है।[55] उसे वास्तव मे इसका खयाल है कि उत्साह के अतिरेक के कारण उसकी निन्दा हो सकती है किन्तु उसकी मान्यता थी कि वह ये तक व्यक्तिगत रूप से किसी के विरुद्ध नही दे रहा है किन्तु केवल उन भयकर परिणामो की ओर सकेत कर रहा था जो इन दोषो के कारण होंगे क्योंकि इसका वास्तविक भय था कि यदि इन लोकापवादो की उपेक्षा की गई तो रोमन चर्च के प्रति आज्ञापालन में उसी प्रकार व्यतिक्रम होगा जसा यूनानियो ने किया था।[56]

एक बार फिर वह एलेक्जण्डर के निर्वाचन की वैधता के पक्ष एव विपक्ष म तर्क देता है तथा कहता है कि वास्तव म चर्च तीन भागों म विभाजित था एक भाग एलेक्जण्डर को स्वीकार करता था दूसरा विक्टर को जबकि तीसरा दोनों म से किसी को भी न स्वीकार करता था न अस्वीकार किन्तु परिस्थितियो के अधिक परिपूर्ण तथा उचित विचार की आशा करता था जो केवल राजाओ की सहमति से बुलाई गई सामान्य परिषद् म ही सम्भव था। उसने स्वय को किसी निर्णय पर पहुँचने म असमर्थ पाया किन्तु वह तीसरे पक्ष से सहमत प्रतीत होता है।[57]

यह ग्रन्थ पोप के दल म पायी जाने वाली इस प्रवृत्ति की जो सम्राट के ऊपर राजनीतिक सत्ता की माँग करती है अत्यन्त कठोर निन्दा से भरा हुआ होता है। जब वे चित्रों तथा पत्रों म प्रदर्शित करते हैं कि सम्राट पोप को नजराना देता है—जो किस हद तक हेड्रियन चतुर्थ तथा फ्रेडरिक बारबरोसा के मध्य क्षोभपूर्ण पत्र व्यवहार का उल्लेख है जिसका हम पहले ही वर्णन कर चुके हैं[58]—जब वे सम्राट तथा उसके विरुद्ध विद्रोह करने वालो के बीच मध्यस्थ बने तब उन्होंने पोप को सम्राटो के ऊपर अधीश्वर बनाया तथा सम्राट को एक सामन्त की स्थिति म ला पटका। वास्तव म यह उस सत्ता को नष्ट करता है जिसे ईश्वर ने बनाया है ईश्वर के आदेशो की अवहेलना तथा दोनों तलवारो की प्रकृति के मध्य भ्रान्ति उत्पन्न करता है। प्रत्येक सत्ता को अपने स्थान एव कार्यों से सन्तुष्ट रहना चाहिए[59] राजा या सम्राट को उस वस्तु को अपनी नहीं समझना चाहिए जो कि पुरोहितो की हो तथा बिशप को सीजर की वस्तु सीजर का सौंप देनी चाहिए तथा यदि वे राजचिह्नो को धारण करना चाहे तो उनको राजा का उपयुक्त एव यथोचित सम्मान करना चाहिए। वह पुन इसका प्रतिपादन करता है कि यह उचित नहीं कि बिशप नजराना दे राजा को इसी से सन्तुष्ट हो जाना चाहिए कि बिशप निष्ठा की शपथ ले तथा यह कि वह अपने पद का सुरक्षित रखते हुए राजमुकुट की रक्षा करेगा।[60]

यह ग्रन्थ पोप पद के निर्वाचन के विषय म तात्कालिक विवाद तथा दोनो सत्ताओ के पारस्परिक सम्बन्धो के बारे म धार्मिक व्यक्तियो के मन की दशा के विषय मे विद्यमान जमनी की विचारधारा पर पर्याप्त रूप स प्रकाश डालता है। क्योंकि यह उल्लेखनीय है कि यह उसकी धार्मिक भावनाओ की गहनता है जो कि गरहो को इस बारे म सावधान बनाती है कि कहीं चर्च लौकिक मामलो मे लिप्त न हो जाए। वह चर्च की स्वतन्त्रता की आवश्यकता की परम्परा का प्रतिनिधित्व करता है उसे अपमानजनक प्रतिष्ठापन के विरुद्ध सघर्ष की आवश्यकता एव न्याय के विषय मे कोई सन्देह नहीं है किन्तु जैसा उसने अनुभव किया कि उस युग की यह इतनी समस्या नहीं थी कि चर्च को किस प्रकार लौकिक सत्ता के आक्रमण से रोका जाए जितनी यह थी कि वह लौकिक मामलो म फसने से अपने को किस प्रकार बचाए जिनमे अपनी सफलताओ के कारण वह फस गया था।

यह सभी बातें उसकी कुछ बाद की रचनाओ म बहुत स्पष्टता स वर्णित हैं। 1166–67 ई म उसने रोमन चर्च के कार्डीनलो को एक लेख मे सम्बोधित किया। वास्तव मे उसने जब डी इन्वेस्टीगशन एन्टीक्रिस्टी लिखा था तब से परिस्थिति बहुत बदल गई थी। विरोधी पोप विक्टर की मृत्यु हो चुकी थी तथा पस्कल उसका

उत्तराधिकारी बन चुका था । उसका निर्वाचन जमन राजाओ के मई 1165 ई के विश्व पत्र मे रोमन चच के बिशपो एव कार्डीनलो द्वारा लम्बार्डी तथा टस्कनी के बिशपो एव रोम के नगराध्यक्ष तथा अन्य नागरिको की उपस्थिति मे हुआ तथा साम्राज्य के चर्चों एव राजकुमारो ने उसे मान्यता दी थी ।[61] तथापि गेरहोह उसके अस्वीकरण के विषय मे स्पष्ट रूप से था तथा उसने यह आरोप लगाया कि किसी भी कार्डीनल बिशप ने उसके अभिषेक मे भाग नही लिया था तथा अब वह निश्चित रूप से एलेक्जण्डर तृतीय को वधानिक पोप मानता था ।[62] तथापि वह उस बडी कठिनाइ को भी बताता था जो कि उसके समथको को इस कारण होती थी क्योकि सिसली के राजा तथा मिलन वासिया के साथ उसके षडयत्र के आरोप का खण्डन नही किया गया था तथा एलेक्जण्डर के कुछ समथको की यह मान्यता भी थी कि हैड्रियन चतुथ के काय की निन्दा नही की जा सकती ।[63] उसने तक दिया कि एलेक्जण्डर तथा उसके समथको को यह समझ लेना चाहिए कि यद्यपि यह सत्य था कि पोप एव उसके काय किसी मानवीय न्याय के अधिकार क्षेत्र मे नही आते किन्तु यह केवल उसके धार्मिक पद एव कार्यों के विषय म था न कि लौकिक मामलो से उसके सम्बन्धो के विषय मे इनके विषय मे उसके काय सशोधन योग्य थे[64] तथा उसने अनेक दृष्टान्तो से यह दिखलाया कि स्वय पोपो ने इसे स्वीकार किया है तथा इन मामलो से सम्बन्धित आरोपो से अपने को मुक्त किया है उसने लियो चतुथ के शुद्धिकरण को भी इसम सम्मिलित किया था ।[6] अत यदि शिकायत की जाए कि पोप तथा कार्डीनलो ने कोई ऐसा काय किया है जिससे साम्राज्य को खतरा उत्पन्न हुआ है तथा चच का विभाजन हुआ है तो न्यायोचित यही होगा कि या तो इस सिद्ध किया जाए या इसका खण्डन किया जाए ।[66] यदि यह सिद्ध हो जाए कि पोप ने गलती की है तो इसे बदला एव सुधारा जा सकता है वसा करने के अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं यह अनेक दृष्टान्त प्रस्तुत करता है जिसम सत पीटर बोनीफस द्वितीय पस्कल द्वितीय एव केलीक्टस द्वितीय सम्मिलित हैं ।[67] वह सुझाव देता है कि सिसली के राजा के साथ आरोपित समझौता जिसके बारे म इतना सघष हुआ था पोप हैड्रियन द्वारा दबाव मे आकर किया गया था तथा वह कार्डीनलो से प्राथना करता है कि सावजनिक रूप से यह सिद्ध कर द कि यह कभी किया ही नही गया था या इसका औचित्य सिद्ध कर या इसका सशोधन करें ।[68]

गेरहोह न पोप तथा कार्डीनलो को चेतावनी दी कि उनका निरन्तर विद्यमान मौन भ्रम भगने को इतनी सीमा तक बढा देगा कि राजसत्ता एव धार्मिक सत्ता एक दूसरे को नष्ट कर देंगी तथा वह उनको जिलेशियस के शब्दो का स्मरण दिलाता है जिसको वह पोप निकोलस प्रथम के सम्राट माइकल को लिखे गए पत्र से उद्धत करता है जिसम यह बताया गया है कि यह स्वय ईसा ही थे जिसने लौकिक एव धार्मिक सत्ताओ को उनके विशिष्ट काय सौपे । वह कहता है कि यदि ये सिद्धान्त स्मरण रखे जाते तो दोना सत्ताओ मे वतमान सघष ही नही होता य दोनो सत्ताए तब तक चलती रहनी चाहिए जबतक कि ईसा स्वय अपनी अतिम विजय के लिए उपस्थित नही होते ।[69] अत उसने कार्डीनलों से अनुरोध किया कि यदि वे चच के विभाजित सदस्यो को वास्तव म मिलाना

चाहते हैं तो वे इसे स्पष्ट कर दें कि उनके प्रति आरोप के विरुद्ध वे साम्राज्य को नष्ट नहीं करना चाहते।[70]

एक अन्य लेख में उसने अनुग्रह किया है कि लौकिक शासक यदि वे अन्यायपूर्ण शासन की इच्छा करें तो उनको अनुशासित करना चाहिए न कि उन्हें नष्ट करना चाहिए तथा यह सूचना देता है कि अनेक वार्ताओं में सम्राट ने उससे यह स्पष्ट कर दिया है वह अपने न्यायोचित अधिकारों की सीमा का उल्लंघन नहीं करना चाहता व० पोप का समर्थन करने को प्रस्तुत है यदि वह इनको स्वीकार कर ले किन्तु वह अपनी सम्पूर्ण शक्ति से किसी भी ऐसे व्यक्ति का प्रतिरोध करने को कृतनिश्चय है जो उसके कार्यों में हस्तक्षेप करता है तथा उसे विश्वास है कि कोई भी सत पीटर का सच्चा उत्तराधिकारी नहीं हो सकता यदि वह पोप-पद के नाम पर यह प्रयत्न करे कि व० न केवल पादरियों ही का वरन् साम्राज्य का भी शासक है।[71] गेरहो० ने जैसा व० कहता है यह आशा की थी कि ये कठिनाइयाँ या तो सामान्य परिषद् द्वारा या व्यक्तिगत वार्ताओं से सुलझ सकती हैं तथा सम्राट को उसके सलाहकारों ने इससे सहमत होने की राय भी दी थी किन्तु पोप के सलाहकारों ने इन प्रस्तावों के विपरीत राय दी। अतः व० सुझाव देता है कि अन्तिम मार्ग यही होगा कि चर्च तथा साम्राज्य के प्रमुख व्यक्तियों को सम्बोधित पत्र में अपने विरुद्ध लगाए गए आरोपों की पोप स्वयं परीक्षा करे।[72]

गर हू का अंतिम ग्रन्थ डी क्वार्टा विजीलिया नॉक्टिस (De Quarta Vicilia Noctis) उसकी मृत्यु के दो वर्ष पूर्व 1167 ई० में लिखा गया था। अपनी एलेक्जेण्डर तृतीय के प्रति निष्ठा के कारण वह राइखसबर्ग से निष्कासित कर दिया गया था तथा यह ग्रन्थ एक ऐसे व्यक्ति के स्वभाव की रोचक एवं हृदयस्पर्शी अभिव्यक्ति है जो सम्राट द्वारा चर्च के मामलों में हस्तक्षेप के अन्याय एवं अनौचित्य के बारे में अपने विश्वासों के प्रति दृढ़ था और साथ ही चर्च के दोषों के प्रति तथा पोप के समर्थकों की जो उस सतत्ताक प्रवृत्तियाँ प्रतीत होती थीं सच्चा और निष्कपट आलोचक था वह एक ऐसा व्यक्ति था जो रोम के मानापालन के लिए निष्ठावान था साथ ही साम्राज्य का एक निष्ठावान नागरिक भी था। उसकी वृद्धावस्था में जैसा व० कहता है उसने अपने आपको अपने आश्रय से निष्कासित एवं शत्रुओं के सम्मुख अनावृत पाया जो उसके विनाश के प्यासे थे तथा जिन्होंने उसके आश्रय को नष्ट कर दिया क्योंकि व० पोप के प्रति निष्ठावान था तथा नकली पोप विक्टर और पस्कल को मान्यता नहीं देता था।[73] तथापि व० अपने निष्कपट एवं निष्पक्ष मत पर सुदृढ़ रहा जो उसके सम्पूर्ण ग्रन्थ में अभिव्यक्त होता है तथा उसकी दृढ़ धारणा है कि चर्च के कष्ट तथा लौकिक सत्ता के आक्रमण राज्य के चतुर्थ एवं अंतिम प्रहर के दुखद लक्षण नहीं थे जितना कि चर्च में बढ़ता हुआ लालच।[74]

वह वास्तव में इस गंभीर दोष के लिए चर्च की निन्दा सीधे एवं निस्संकोच ढंग से करता है। वह दृढ़ता से पोप एवं कार्डीनलों की वैधानिक स्थिति का संरक्षण करता है किन्तु चर्च पर लूट खसोट एवं भ्रष्टाचार के आरोप लगाता है। चर्च के निर्णयों के न्यायोचित होने पर भी उनका मूल्य माँगा जाता था तथा कभी वे अन्यायपूर्ण भी होते थे तथा रिश्वत द्वारा प्राप्त किए जाते थे।[75] वह इस पर खेद प्रकट करता है कि ग्रेगोरी

सप्तम और हेनरी चतुथ के बीच सघप छिडने के बाद से पोप विशाल धनराशि देकर रोमन जनता का समथन प्राप्त करने के लिए विवश हो गए थे तथा रोमनों के लालच को सतुष्ट करने के लिए उस धन को प्रत्येक स्थान से उगाहने को बाध्य हो गए थे।[76] वह प्रत्यन्त गभीरतापूवक कुछ कार्डीनलो की धृष्टता एव लालच की भी निन्दा करता है।[77]

पोप द्वारा धमवि-द्रोहकारियो के प्रति क्योंकि से युद्ध करने के आग्रह के औचित्य का प्रतिपादन करने मे उसे कोई सकोच नही है[78] तथा वह वणन करता है कि किस प्रकार ईश्वरीय न्याय ने सम्राट तथा उसकी सेना पर प्रहार किया जबकि वे विरोधी पोप पस्कल सहित रोम आए तथा उनमें से बहुत से प्लेग के शिकार हो गए तथा मारे गए।[79] दूसरी ओर वह पोप को लौकिक सत्ता का दावा करने के विरुद्ध गम्भीर चेतावनी देता है क्योंकि उसे कोई अधिकार नही है। वह पोप से सावधान रहने का आग्रह करता है ताकि वह लौकिक सम्मान प्रदान करने के अधिकार का दावा न करे जसे कि वे उसकी जागीर हो यद्यपि वह स्वीकार करता है कि कान्सटेन्टाइन के दान ने उसे रोम नगर के लौकिक मामलो के प्रशासन का अधिकार प्रदान किया है तथापि वह अनुरोध करता है कि सम्राटों ने रोम और ससार पर भी शासन किया है।[80]

सम्राट द्वारा पोप को इस प्रकार के सम्मान के प्रतीक प्रदान करने की वह अत्यन्त कठोरता से आलोचना करता है जो कि स्वय उसके लिए असम्मानजनक हों। वह स्वीकार करता है कि अपनी विनम्रता के कारण एक बार कान्सटेन्टाइन ने पोप सिल्वेस्टर के सनिक (Strator) के रूप म काय किया था तथापि सिल्वेस्टर ने उसे कभी भी अपना सेनापति (Marshal) नहीं कहा और न कभी चित्रो म वसा प्रदर्शित किया तथा तब से लेकर अबतक किसी भी सम्राट को उस रूप में प्रदर्शित नहीं किया गया है। दूसरी ओर रोमन पोपों तथा सम्राटो ने सदव एक दूसरे का आदर एव सहायता की है तथा वह इस पर आश्चय प्रकट करता है कि अब रोमन वसा चित्र प्रस्तुत करने का प्रयास करें वह उनसे सन्त पीटर के शब्दो पर ध्यान दने का अनुरोध करता है जिसने कहा है ईश्वर से डरो राजा का सम्मान करो।[81]

गेरहोह स्पष्टतया उस लोकापवाद को नहीं भूला था जो हैड्रियन चतुथ के फ्रडरिक को लिख गए पत्र के शब्दों एव परिस्थितियों से उत्पन्न हुआ था।[82] तथा वह यह स्पष्ट करने को कृतनिश्चय था कि वह तथा रोमन धमपीठ क जमनी में विद्यमान निष्ठावान नागरिक पोप द्वारा किसी ऐसी लौकिक सत्ता के दावे को स्वीकार करने को राजी नहीं हैं जो वस्तुत उसके अधिकार मे नही हो। दूसरी ओर वह सम्राट को भी चेतावनी देता है कि वह उस अधिकार का दावा न करे जो कि उसका नहीं है तथा बिशपों को नियुक्त एव पदच्युत करने के अधिकार का भी दावा न करे जो सम्पूर्णतया उसके क्षेत्र से परे है।[83]

वह लौकिक एव धार्मिक सत्ता के अधिकारों के तात्कालिक स्रोत के सिद्धान्तों को एक सक्षिप्त किन्तु सारगर्भित लेखाश मे सहृत करता है। वह कहता है कि जसे ईश्वर ने आदम को पृथ्वी की धूल से बनाया था तथा ईश्वर ने फिर उसमे प्राण फूंक दिए और इस प्रकार सभी जीवित प्राणियों से ऊपर उसे बनाया इसी प्रकार सम्राट या राजा भी जनता या सेना द्वारा बनता है तथा जब सामन्त या उनमे सवश्रेष्ठ व्यक्ति उसके शासन को

मान्यता दे देते हैं तो वह पुरोहितों के आशीर्वादों से उसे जीवन की अन्तरात्मा के रूप में प्राप्त करता है। इसी प्रकार पोप या बिशप जो पहले पादरियों के निर्वाचन एवं अभिषेक द्वारा (in spiritu promovendus) होता है तथा बाद में (tamquam formandus in corpore) प्रमुख लोगों की सहमति से सम्राट या राजा द्वारा सम्मानित होता है तथा उसकी सहायता से (connivcntia) राजचिह्नों को धारण करता है।[84]

इस वाक्यसमूह में ऐसे शब्द हैं जो अस्पष्ट हैं किन्तु उनकी सामान्य प्रवृत्ति यह स्पष्ट कर देती है कि यद्यपि गरहोह लौकिक शासक को आशीर्वाद देने में पोप या पादरी के महत्वपूर्ण स्थान का तथा बिशप द्वारा राजचिह्नों के स्वामित्व के विषय में लौकिक सत्ता के महत्त्व को स्वीकार करता था तथापि वह दृढ़तापूर्वक प्रतिपादित करता था कि न तो सम्राट न राजा ही बिशप या पोप को नियुक्त कर सकते थे न बिशप और पोप ही राजा या सम्राट को नियुक्त करते थे किन्तु प्रत्येक दशा में उनके अधिकार के स्रोत वही थे जिन्हें उनको चुनने का अधिकार था।

यदि केवल प्रत्येक अपनी सत्ता से संतुष्ट रहे तथा जो दूसरे के अधिकार में है उस पर दावा छोड़ दे तो रात्रि के चतुर्थ प्रहर में भी सच्ची शांति हो सकती है तथा गरहोह एक कविता की कुछ पंक्तियाँ उद्धृत करता है जो कुछ व्यक्तियों के विचार में 1091 ई० में लिखी गई थी।

querit apostol cus regem depellere regno Rex frurite contra papatum tollere papae Si foret in medio qui litem rumpere posset Sie ut rex regnum papatum papa teneat Inter utrumque malam fierit discretio magna

किन्तु वह भाव भरे शब्दों में कहता है कि इस संघर्ष को कौन समाप्त कर सकता है जबतक कि प्रभु ईसा स्वयं पीटर के जलपोत में आकर लोभ के तूफान को शांत न करें वह लोभ जो कि चरम ईसा विरोधी है।[8]

वह इस प्रार्थना से समाप्त करता है कि ईसा उसके चर्च में आएँगे जो इस चौथे प्रहर में सबसे अधिक खतरे में है उन झूठे पुरोहितों का दमन करेंगे जो उसके घर में व्यापार और लूट-खसोट कर रहे हैं तथा उन राजाओं का दमन करेंगे जो धर्म के बहाने अत्याचार को प्रोत्साहन दे रहे हैं—प्रभु ईसा आकर चर्च तथा संसार को बचाएँगे तथा राजसत्ता और धार्मिक सत्ता के बीच शांति स्थापित करेंगे।[88]

संदर्भ

1 इ आगे देख इसी अध्याय में।
2 आर्नल्ड के सम्बन्ध में विशेष द्रष्टव्य R Breyer Arnold von Brescin in Raumer Historisches Taschenbuch, Sachate Folge Achter Jahrgang मुझे इससे अन्य सन्दर्भ मिली है।
3 Otto of F g Gest Frid rici 20
4 H t ia P t f cal 31
5 Gesta di F d co I (d Monaci)

6 Gerhoh of Reichersberg De Inves t gat one A tich ist 40
7 Monumenta Corbe e sia 404
8 M G H L g Sect IV Co st v I 26
9 Gerhoh of Re chersbe g— De edı f e o Deı 12
10 Id D O d ne do orum S ctı Sp tus (p 283)
11 Id De ed f c o D 13
12 Id d 17
13 Id ıd 25
14 Id ıd 22
15 Id De O d e don rum Sa ctı *Sp tus (p 74)*
16 Id ıd (pp 276 277)
17 Id d (pp 278 279
18 Id ıd (p 279
19 Id ıd (p 280)
20 See p 347
21 Id De Novıt l bus h Tempo s 12
22. Id d 19
23 Id De I vest gat e A t chrı t 24
24 Id ıd ıd
25 Id d 25
26 Id ıd 27
7 *Id ıd ıd*
28 Id ıd d
29 Id ıd 35
30 Id ıd 36
31 Id d 36
32 Id ıd 37
33 Id id 38
34 Id ıd 40
35 Id Comm o ps Lx v (p 454)
36 Id ıd (p 454)
37 Id id (p 462)
38 Id ıd (p 467)
39 Id d (p 462)
40 Id d p 465
41 Id ıd p 53
42 ıd d ıd
43 Id d ıd
44 Id ıd 55
45 Id ıd d
4˂ Id d 56
47 Id ı1 d
48 Id d d
49 Id d 57
50 Id d d
51 Id d d
52 Id ıd d
53 Id d d
54 Id d 58
55 Id d d
56 Id d d
57 Id d 68
8 *Cf* p 313
59 Id d 72
60 Id d d
61 M G H Leg Sect IV C st ol ı 223
62 Ge h h Opusculum ad Card ales (p 401)
63 Id d (p 401)
64 Id d (p 401)
65 Id d (pp 401 40 410)
66 Id ıd (p 402)
67 Id d (p 405)
68 Id d (p 405)
69 Id d (p 402)
70 Id ıd (p 403)
71 Id ıd (p 408)
7 Id d (p 404)
73 Id D Qua ta V gıl a Noctı 2
74 Id ıd 10
75 Id ıd 7
76 Id ıd 8
77 Id ıd 11
78 Id d 12
79 Id ıd 15
80 Id d 17
81 Id ıd 12
82 Cf p 313
83 Id d 17
84 Id d 17
85 Id d 17
86 Id d 21

चतुर्थ अध्याय

उपसंहार

हमने इस ग्रन्थ में दसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से लेकर बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक लौकिक एवं धार्मिक सत्ताओं के सम्बन्धों के सिद्धान्तों का विकास प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। हमने इन्नोसेन्ट तृतीय के पदारोहण से पूर्व ही इस ग्रन्थ को समाप्त कर दिया है क्योंकि हमारे विचार में उसके कार्यों और सिद्धान्तों का विवेचन तेरहवीं शताब्दी के सिद्धान्तों एवं परिस्थितियों के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध की दृष्टि से करना श्रेष्ठ होगा जिसका विवेचन हम अगली पुस्तक में करेंगे। हमने कार्यों तथा सिद्धान्तों दोनों का ही विवेचन यथा सम्भव तटस्थ रूप से करने का प्रयास किया है ताकि जहाँ तक सम्भव हो वे अपने आप अपने को प्रकट कर सकें और अब यदि हम कुछ सामान्य निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न करें तो हमें आशा है कि इनको हमारे द्वारा पूर्व कथित तथ्यों से पूर्णतया पृथक रखा जाएगा।

हम प्रारम्भ में यह कहना चाहते हैं कि यदि किसी विश्वसनीय निष्कर्ष को प्राप्त करना है तो हमें इन शताब्दियों के इतिहास का पश्चिम में कान्सटेन्टाइन के धर्म परिवर्तन के युग से लेकर धार्मिक एवं लौकिक सत्ताओं के सम्बन्धों के सम्पूर्ण इतिहास के सन्दर्भ में अध्ययन करना होगा। ग्यारहवीं तथा बारहवीं शताब्दी के महान् संघर्षों को पृथक करने के प्रयत्न से विभ्रम के अतिरिक्त और कुछ उत्पन्न नहीं होगा और वास्तव में बहुत विभ्रम उत्पन्न हो भी चुका है। यदि हम उत्तरकालीन संघर्ष को समझना चाहें तो विशेषतः दोनों सत्ताओं के नवीं शताब्दी के सम्बन्धों के जटिल स्वरूप का सावधानी से अध्ययन आवश्यक है।

वास्तविकता यह है कि मध्ययुग के परम्परागत राजनीतिक सिद्धान्त का सर्वाधिक विशिष्ट तत्व मानव समाज की रचना की विवेचना के सिद्धान्त में है जो जीवन के आध्यात्मिक एवं लौकिक पक्ष की द्वयता सन्त पीटर के यहूदी अधिकारियों को सम्बोधित शब्दों में स्पष्टतया वर्णित है इसे मनुष्यों के स्थान पर ईश्वर का आज्ञापालन करना चाहिए (Acts v 29)। निस्सन्देह यह सम्भव है कि जब साम्राज्य ने ईसाई धर्म स्वीकार किया तो एक क्षण को सकोच हुआ हो किन्तु पश्चिम में यदि कोई सकोच था तो वह केवल क्षणिक था, तथा सामान्य सिद्धान्तों का वर्णन एवं चिन्तन विशेषतया सत एम्ब्रोस

द्वारा चौथी शताब्दी में एवं जिलेसियस प्रथम द्वारा पाँचवीं शताब्दी में किया गया अर्थात् इस सिद्धान्त का कि मानव समाज का शासन दो सत्ताओं द्वारा होता है, न कि एक के द्वारा जो क्रमश लौकिक एवं धार्मिक हैं वे सत्ताएं दो अधिकारियों म निहित हैं धार्मिक एवं लौकिक दोनों सत्ताओं में से प्रत्यक अपनी आपत्ति म दबी ह तथा प्रत्येक अपने क्षेत्र म दूसरी से स्वतन्त्र है। इस सिद्धान्त का स्पष्ट एवं बलपूर्वक वणन पुन नवीं शताब्दी में किया गया तथा ग्यारहवीं एवं बारहवीं शताब्दी म भी यह मनुष्यों के मस्तिष्क म वतमान था।

पश्चिमी जगत में तात्विक रूप से यह एक नया सिद्धान्त था इसमें सन्देह नहीं। हम केवल यही बताने का प्रयास करेंगे कि हेलेनिक एवं रोमन दोनों सभ्यताओं के देशों में तथा ईसा के तुरन्त पूव की शताब्दियों में यहूदियों के देशों में विचारों एवं भावों के आन्दोलनों का उससे अधिक स्पष्ट एवं गहन विवेचन होना चाहिए जितना अभी तक किया गया है। नयी धारणा के महत्त्व की व्याख्या की शायद ही कोई आवश्यकता हो अर्थात् इस धारणा के महत्त्व की कि धार्मिक क्षेत्र का जीवन लौकिक सत्ता के अधीन नहीं है किन्तु उससे स्वतन्त्र है। यह व्यक्ति के व्यक्तित्व के महत्त्व के नवीन विकास का एक पक्ष है और सर्वाधिक अनुपेक्षणीय नहीं यह स्वतन्त्रता की एक नई धारणा है।

यदि यह सकल्पना महत्त्वपूर्ण एवं इसके परिणाम दूरगामी थे तो मानव समाज के व्यावहारिक सगठन मे इसके प्रयोग का प्रयास अत्यन्त कठिन था और आज भी वैसा ही है। यह देखना या यह सोचना कि हम लौकिक तथा आध्यात्मिक के मध्य अन्तर देख रहे हैं सरल है जब हम उनके विषय म सामान्य रूप से या जीवन की वास्तविक यथार्थताओं से पृथक का विचार करते हैं किन्तु जब हम इस विभेद का इन पर प्रयोग करने का प्रयास करते हैं तो यह बहुत भिन्न हो जाता है। हमने प्रथम पुस्तक में नवीं शताब्दी की परिस्थितियों से इसके कुछ पक्षों के उदाहरण देने का प्रयास किया है तथा दसवीं और ग्यारहवीं में बिशपों तथा मठाधीशों के पदों के सामन्तीकरण तथा उनके बढ़ते हुए राजनीतिक महत्त्व से *व्यावहारिक कठिनाइयाँ बहुत बढ़ गयी थीं* परन्तु इसके अतिरिक्त दोनों शक्तियों के आपेक्षिक सत्ता के प्रश्न ने भी पर्याप्त कठिनाइयाँ उत्पन्न कर दी थीं तथा मध्ययुग में उनका कोई अतिम हल नहीं निकला और न इस मामले में हमें अभी तक ही सफलता मिली है।

वह विषय जिस पर हम इस ग्रन्थ म विचार कर रहे हैं वह प्रश्न है कि ग्यारहवीं तथा बारहवीं शताब्दियों म द्वैध सत्ता की कल्पना को कहाँ तक सत्ता की एकता के सिद्धान्त द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया था जिसमें एक सत्ता का दूसरी पर प्रभुत्व था। यदि हम किसी निष्कर्ष पर पहुँचना चाहें तो हमें प्रश्न के तीन पक्षों म स्पष्ट विभेद करना होगा प्रथम वास्तव म एक सत्ता कहाँ तक दूसरी के कार्यों म हस्तक्षेप करती थी अथवा दूसरी पर सत्ता का प्रयोग करती थी द्वितीय कहाँ तक इसका कोई सिद्धान्त या तत्त्व विकसित हुआ और तृतीय कहाँ तक सभावित घटनाओं या मनुष्यों द्वारा निर्मित सिद्धान्तों का वास्तविक महत्त्व मध्यकालीन राजनीतिक जीवन एवं विचारों के यथार्थ स्वरूप पर पड़ा।

हमारे मत में प्रथम प्रश्न अत्यधिक महत्त्व का है क्योंकि यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि

जिस समय का हम विचार कर रहे हैं उसमें चाहे जिन सद्धान्तिक निर्णयों पर बल दिया जाता हो वे अधिकांशत वचारिक कल्पना के परिणाम या क्रमबद्ध विचारों की अभिव्यक्ति नहीं थे किन्तु वे किन्हीं व्यावहारिक कठिनाइयों अथवा आवश्यकताओं के कारण उठे थे। उनमे प्रथम वस्तु जिसका ध्यान रखना चाहिए यह है कि हमारे द्वारा वर्णित सभी सिद्धान्त एव कार्यों की पृष्ठभूमि म दसवीं शताब्दी क उत्तरार्द्ध म उदित हुए धार्मिक सुधार का महान् आन्दोलन चच एव पोप पद की भ्रष्ट परिस्थितियों क विरुद्ध विद्रोह था जिसकी एक अभिव्यक्ति क्लूनिक सुधार थे तथा क्लूनी कुछ समय के लिए जिसका केन्द्र था। यह स्पष्ट है कि आटो प्रथम स लेकर हेनरी तृतीय पयन्त पोप-पद एव चच सम्बन्धी सगठनों पर सम्राट व्यापक अधिकार रखते थे उसका पहला कारण तो यह था कि चच की सम्पूर्ण व्यवस्था भ्रष्ट एव असगठित थी और दूसरा कारण महान् धार्मिक पदाधिकारियों का राजनीतिक महत्व था। निस्सन्देह आटो प्रथम के पोप-पद सम्बन्धी कार्यों के निर्धारण म राजनीतिक महत्वाकांक्षा एव धार्मिक सिद्धान्तों के प्रभाव म स्पष्ट भेद कर सकना अत्यन्त कठिन है किन्तु यह कहना सत्य होगा कि उसके द्वारा तथा उसके तात्कालिक उत्तराधिकारियों द्वारा प्रयुक्त अधिकारों का औचित्य उनके परिणामों स पुष्ट होता है। और यह हेनरी तृतीय के कार्यों के बारे म अधिक स्पष्टतया सत्य है।

यह स्पष्ट है कि जहाँ तक साम्राज्यिक काय सुधारवादी भावनाओं का प्रतिनिधित्व करता था अथवा उनसे मेल खाता था तबतक अधिकांश प्रसिद्ध एव उत्साही चच के सदस्यों ने इसका कोई विरोध नहीं किया। हमारे मत म यह पीटर डेमियन तथा कार्डीनल हम्बर्ट जसे व्यक्तियों के दृष्टिकोण से स्पष्ट प्रतीत होता है यद्यपि उस समय भी कुछ ऐसे व्यक्ति थ जो साम्राज्यिक कार्यों के औचित्य को अस्वीकार करते थे अथवा उसमें सन्देह करते थे जिनमें मसबग का थीटमार लीज का वजो तथा डी आरडीनेन्दो पोन्टीफिस (De Ordinando Pontifice) नामक निबन्ध (tract) का रचयिता रहे मनुष्य थे—किन्तु व अपवाद प्रतीत होते हैं। दसवीं तथा ग्यारहवीं शताब्दी म लौकिक सत्ता के कार्यों का औचित्य सिद्धान्ता पर उतना आधारित नहीं है जितना कि व्यावहारिक दशाओं पर है तथा यह ध्यान देने योग्य है कि अ लरिक दारवरोसा का एलेक्जेण्डर तृतीय के विवादास्पद निर्वाचन के बारे म काय उसी प्रकार क कारणों स औपचारिक रूप से उचित सिद्ध हुआ है—अर्थात् इस मान्यता के आधार पर कि यदि चच प्रशासन की व्यवस्था को उसके स्वय के अधिकारियों से कोई खतरा हो तो लौकिक सत्ता का कतव्य है कि वह अपनी सत्ता स धार्मिक मामलों के निर्धारण के लिए नहीं अपितु उचित चच सम्बन्धी व्यवस्था को गति देने के लिए हस्तक्षेप करे।

बिशपों एव मठाधीशों की नियुक्ति म राजाओं एव सम्राटों द्वारा जिस अधिकार का दावा किया जाता था उसका भी आंशिक रूप से औचित्य समान परिस्थितियों क कारण हो सकता था परन्तु वास्तव म दसवीं शताब्दी म विकसित सामन्ती व्यवस्था की दशाओं के अन्तर्गत बडे पादरियों की राजनीतिक स्थिति का परिणाम था तथा जसा बाद को सिद्ध हुआ उसे पूर्णतया दूर कर देना असम्भव था। हेनरी तृतीय की मृत्यु तक सुधारवादी दल निर्वाचकों के अधिकारों पर बल देते हुए भी सामान्य रूप म नियुक्ति के विषय म समाज

के राजनीतिक प्रध्यक्ष के महत्त्वपूएा स्थान के प्रौचित्य को अस्वीकार नहीं करता था।

इसलिए यदि यह सत्य है कि लौकिक सत्ता द्वारा धार्मिक मामलों में अधिकारों के प्रयोग का अपना तर्कसम्मत प्रौचित्य इन शताब्दियों की वास्तविक परिस्थितियों के कारए था तो यह भी सत्य है इसके विरुद्ध विद्रोह नई परिस्थितियों के कारए ही उठा तथा नई परिस्थितियों के कारए ही उसका प्रौचित्य है तथा ये नई परिस्थितियाँ सब मिलाकर स्पष्ट हैं। हेनरी तृतीय की मृत्यु के साथ साम्राज्य ने सुधार के आन्दोलनों का प्रतिनिधित्व करना समाप्त कर दिया और वास्तव में शीघ्र ही वह भ्रष्टाचार का केन्द्र प्रतीत होने लगा तथा इसी कारण अयाजक प्रतिष्ठापन अर्थात् लौकिक सत्ता द्वारा नियुक्ति का विरोध होने लगा। इस प्रकार सुधारवादी दल के लिए यह संघर्ष चर्च की स्वाधीनता का संघर्ष बन गया। निस्सन्देह यह सत्य है कि उसमें अन्य कारण तथा महत्त्वाकांक्षाएँ भी सम्मिलित हो गयी थीं किन्तु यह सुझाव हमें विवेकहीन प्रतीत होता है कि स्वतन्त्रता की माँग अवास्तविक थी सुधारवादी चर्च के नेताओं के लिए स्वतन्त्रता सुधार की आवश्यक शर्त हो गयी थी। हल ढूँढ निकालने के पहले गंभीर प्रयत्न अर्थात् पस्कल द्वारा राजचिह्नों के समर्पण के जिसका तात्पर्य बड़े पादरियों की राजनीतिक स्थिति एवं अधिकारों के समर्पण से था क्रान्तिकारी प्रस्ताव को इसी कारण वास्तविक महत्त्व प्राप्त है। जब चर्च के नेताओं को *इस क्रान्तिकारी प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए सहमत करना असम्भव सिद्ध हो गया* तो यह स्पष्ट हो गया कि एक मात्र संभव हल समझौता था तथा 1122 ई में वार्म्स के समझौते का यथार्थ स्वरूप यही था।

यदि हम स्वयं इस प्रश्न के दूसरे पक्ष को देखें और यह पता लगाएं कि किस प्रकार एवं किस सीमा तक धार्मिक सत्ता लौकिक सत्ता पर अधिकारों का दावा तथा उनका प्रयोग करने लगी तो यह प्रतीत होगा कि हम पुनः वस्तुनिष्ठ तथ्यों एवं उनके परिणामों का विवेचन कर रहे हैं। साम्राज्यिक सत्ता में सुधारवादी भावना के अभाव का परिणाम *स्वाधीनता की माँग हुआ तथा ग्रेगोरी सप्तम के मत में साम्राज्य में तथा फ्रान्स में भी* लौकिक सत्ता न केवल सुधारों की विरोधी अपितु भ्रष्टाचार का वास्तविक केन्द्र थी विशेषतः धर्म विक्रय की जिसके कारण केवल अपराधी धार्मिक अधिकारियों पर ही आक्रमण करने के स्थान पर वह लौकिक अधिकारियों पर भी आक्रमण करने को प्रेरित हुआ। निस्सन्देह यह एक नई नीति थी क्योंकि सम्पूर्ण इतिहास की भाँति व्यक्तिगत व्यक्तित्व की मौलिक अथवा निर्माणकारी शक्ति ने यहाँ भी महत्त्वपूर्ण या निर्धारक योगदान दिया किन्तु यह नीति स्वयं में स्पष्ट तथा वास्तविक परिस्थितियों से संगत थी। निस्सन्देह यह *यदि एक पूर्णतया नवीन वस्तु नहीं तो कम से कम उस युग का एक क्रान्तिकारी कदम तो* था ही कि राजा या सम्राट को धर्म-बहिष्कृत कर दिया जाए किन्तु यह कार्य धार्मिक सत्ता के मूलभूत सिद्धान्त एवं उस युग की वास्तविक परिस्थितियों दोनों का प्रतिनिधित्व करता था। यह कार्य विवेकहीन था किन्तु उसमें निहित परिणाम उससे अधिक दूरगामी थे क्योंकि ग्रेगोरी के मत में धर्म बहिष्कृत करने के अधिकार में पदच्युत करने का अधिकार भी निहित था।

यह विचार करने का कोई कारण नहीं कि ईसाई चर्च के सदस्य बने रहने का अधिकार

छीने जाने पर राजा को च्युत करने के अधिकार का दावा करते समय ग्रेगोरी लौकिक मामलों में लौकिक सत्ता पर किसी सद्धान्तिक अधिकार का दावा करना चाहता था किन्तु वास्तव मे ग्रेगोरी क काय म और उस काय के द्वारा धार्मिक सत्ता लौकिक सत्ता पर व्यापक एव असीमित अधिकार का दावा कर रही थी तथा यद्यपि ग्रेगो ी स नम से लकर इन्नोसेन्ट तृतीय तक के पोपो ने किसी सीमा तक हेनरी चतुथ की मृत्यु के बा भी इस पर बल देने का कोई गभीर प्रयास नही किया तथापि यह सत्य है कि स अधिकार का दावा किया था तथा इस दावे का परित्याग नहीं किया गया।

अ हम ऐसी स्थिति में पहुँच चुके हैं कि जहाँ हम दूसरे प्रश्न पर स्पष्टतया सोचना चाहिए वह प्रश्न यह है कि इस काल में कहाँ तक एक सत्ता का दूसरी पर प्रभुत्व का सिद्धान्त विकसित हुआ। यदि हमे भ्रम में पडने से बचना है तो हमें यहाँ पहले से ही कुछ भेद करने की सावधानी रखनी होगी। इसको प्रतिपादित किया जा सकता है कि एक सत्ता अपने महत्त्व एव मूल गौरव मे दूसरी से श्रेष्ठ थी या इसका अभिप्राय यह हो सकता है कि एक सत्ता का स्वरूप दूसरी से इतना उत्कृष्ट था कि यदि उन दोनों के बीच कोई विवाद उठता तो उत्कृष्टतर सत्ता का मत माना जाता अथवा इसका अभिप्राय यह हो सकता है कि दोनो सत्ताओ म से एक दूसरी के अधिकारों का स्रोत थी तथा उसके अपने क्षेत्र में भी उस पर सद्धान्तिक रूप से सत्ता धारण करती रही थी।

इन मान्यताओं में से प्रथम सामान्यत स्वीकृत थी। मध्यकालीन विचारक सामान्यत यह मानते थे कि वे मामले जिनमे धार्मिक सत्ता का सम्बन्ध था लौकिक सत्ता के अधिकार के मामले से अधिक महत्त्वपूर्ण थे तथा धार्मिक पद का गौरव लौकिक पद से कहीं अधिक था। यह मत पत्यूरी के द्वा का है तथा केंटीनो के ग्रेगोरी जसे कुछ लेखकों तथा यॉर्क ट्रक्टेट के लेखक द्वारा प्रयुक्त वाक्यों के बावजूद इसका खण्डन अत्यन्त कठिन है।

दूसरी मान्यता एक और अधिक कठिन प्रश्न को उठाती है क्योंकि मध्ययुग की सामान्य मान्यता यह थी कि प्रत्येक सत्ता का अपना भिन्न क्षेत्र है और सिद्धान्तत इस पर सदेह का प्रश्न नहीं उठता। किन्तु वास्तव म यह सत्य है कि सभी लौकिक एव धार्मिक सत्ता ईश्वरीय नियमो तथा प्रकृति के नियमो के अधीन समझी जाती थी तथा धार्मिक या लौकिक सभी कानून जो इनके विरुद्ध थे अवधानिक समझे जाते थे। किन्तु ईश्वर एव प्रकृति के कानूनो को चच के कानूनो या धार्मिक कानूनो से अभिन्न नही समझना चाहिए हमने इस मामले पर इस ग्रन्थ की दूसरी पुस्तक म विस्तार से विचार किया है[1] तथा वहाँ हमने यह प्रदर्शित किया है कि इसका बहुत कम प्रमाण है कि यह माना जाता था कि इन मामलों में चर्च की दशा में धार्मिक सत्ता का निर्णय अन्तिम था।

निस्सदेह यह सत्य है कि हमारे लिए मध्ययुगीन मन स्थिति की व्याख्या करना अत्यन्त कठिन है हम अब भी बडी सीमा तक राज सत्ता की उस सकल्पना से प्रभावित हैं जो चर्च या राजा म किसी निरकुश एव किसी सीमा तक स्वेच्छाचारी सत्ता का प्रतिनिधित्व करती है परन्तु जो मध्ययुग में पूर्णतया अज्ञात थी। एकमात्र राजसत्ता जिसे वे स्वीकार करते थे कानून की थी तथा वह भी ईश्वर एव प्रकृति के अधीन थी। उनकी दृष्टि मे दोनो कानूनी व्यवस्थाओ के मध्य के सघष का प्रश्न उसमे कहीं भिन्न था जसा कि आज हमारे

लिए है। यथाथ रूप म उनमे स"य तभी सभव था जबकि एक सत्ता दूसरो के क्षेत्र मे हस्तक्षेप करता।

तो हम तीसरो मा"यता क बारे मे क्या कहना है ? वास्तव म हमारे द्वारा परीक्षित साहित्य से यह स्पष्ट है कि यदि धार्मिक सत्ता के लौकिक सत्ता पर उसके क्षेत्र म प्रभुत्व के बारे म कोई सिद्धान्त ग्यारहवा तथा बारहवी शता"दी म था तो वह केवल ग्रेगोरी सप्तम क कुछ पत्रो म या मानसबग के होनोरियस या सलिसबरी के जान मे और सम्भवत कनोनिस्ट रयूफीनस मे ही उपल"ध होना है क्योकि हमारे "ारा परीक्षित किसी भी अन्य लेखक म वह स्पष्टतया उपल"ध नहा होता। अत सवप्रथम प्रश्न करना चाहिए कि क्या इस प्रकार का सिद्धान्त ग्रेगोरी सप्तम की रचनाओ म अन्तर्निहित है ? सामा"य रूप से हम सोचते हैं कि ऐसा नही है।

यह दावे वस्तुत व्यावहारिक रूप म क्रान्तिकारी थे किन्तु यदि हम उ"हें समझना चाह तो हम प्रश्न करना चाहिए कि सद्धान्तिक रूप म ये क्या थे तथा हम सोचते हैं कि सिद्धान्त पर्याप्त रूप म स्पष्ट हैं। ग्रेगोरी ने सम्राटो तथा राजाओं पर उसी धार्मिक अधिकार क्षेत्र का दावा किया जसा किसी भी अन्य लौकिक व्यक्ति पर क्योकि उचित कारण होने पर उसे उनको धम-बहिष्कृत करने अर्थात् निष्ठावाना के समाज से पृथक करने का अधिकार था। उसने इससे यह निष्कप निकाला कि उचित धार्मिक कारण होने पर तथा एक मात्र इसी कारण स उसे उनको धम-बहिष्कृत करने के साथ-साथ प"च्युत घोषित करन का भी अधिकार है तथा उनके प्रति ली गई निष्ठा की शपथ को अवधानिक घोषित करने का भी अधिकार ह। यह सत्य है कि वह वास्तव मे कही भा इसके समथन म प्रमाणो का विवेचन नहीं करता तथा कुछ सदिग्ध दृष्टान्तो को उद्धत करने स अधिक कुछ नहीं करता कि"तु यह विचार करना तकयुक्त होगा कि उसके मत म ईसाई समाज म धम-बहिष्कृत शासक का स्थान होना असमव था।

यह वसा ही सिद्धान्त नही है जसा कि यह दावा कि आध्यात्मिक सत्ता को जिसका प्रतिनिधित्व पोप द्वारा किया जाता है—लौकिक मामलो म सर्वो"च अधिकार प्राप्त हैं। वास्तव म हम यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि 1076 ई से 1080 ई तक उसका आचरण इसका स्पष्ट प्रमाण है कि व" इस प्रकार का दावा नहा करता था तथा उसका कोई ऐसा सिद्धान्त नही था। उसके लिए हेनरी तथा रूडोल्फ की स्थिति कैनोसा म हेनरी के दोषमुक्त कर दिए जाने क बा" से जमन जनता द्वारा निश्चित किया जाने वाला मामला था। यदि उसने यह प्रस्ताव किया कि वह स्वयं उसका निर्णय करे [illegible] तो उसका कारण यह था कि उसे वसा करने का निम"त्रण था। हमारा यह कहने का अभिप्राय नहीं है कि ग्रेगोरी सप्तम का उन परिस्थितिया के बारे म वसा ही स्पष्ट दृष्टिकोण था जसा कि हमने इन श"दो म व्यक्त किया है किन्तु हमारा विचार है कि उसके आचरण म कुछ इस प्रकार की बात निहित है। ग्रेगोरी के कार्यों और श"दो मे निस्स"देह एक सिद्धान्त निहित है किन्तु वह सिद्धान्त यह है कि धार्मिक सत्ता धार्मिक मामलो म उन लोगा पर भी जो लौकिक सत्ताधारी थे उतनी ही पूर्ण था जसे कि अन्य सभी मनुष्या पर तथा धम बहिष्कार उनको सत्ताधारण के अयोग्य बना देता था यह वह सिद्धान्त नहा था कि लौकिक

सत्ता धार्मिक से उद्भूत है अतएव लौकिक मामलों में भी उसके अधीन है।

आसवा के होनोरियस तक हम ऐसे किसी विचार को नहीं पाते। यहाँ हम इस प्रकार की कुछ मान्यता उपलब्ध होती है। अतएव यहाँ हम वह सिद्धान्त उपलब्ध होता प्रतीत होता है जो परम्परागत रूप से जिलेशियन सिद्धान्त से इस से असंगत है। क्योंकि यह इस पर बल देता प्रतीत होता है कि धार्मिक सत्ता ही ईश्वर की एक मात्र एवं सच्चा प्रतिनिधि है तथा लौकिक सत्ता उससे उत्पन्न हुई है। यह सत्य है कि यह मान्यता उसके द्वारा *कान्सटेंटाइन के दान के प्रसंग के कारण किसी सीमा तक भ्रमपूर्ण प्रतीत होती है।* होनोरियस तथा जोहानीज का प्लेसीडस पहले लेखक हैं जिनके बारे में हम आश्वस्त होकर कह सकते हैं कि वे दान का अर्थ यह लगाते थे कि कान्सटेंटाइन ने पोप को पश्चिम में सारी साम्राज्यिक सत्ता सौंप दी। बाद में इसी शताब्दी में कैनोनिस्ट पैन्कापालिया (Pancapalea) ने ऐसी ही व्याख्या प्रस्तुत की * तथा होनोरियस इसका अभिप्राय यहीं तक समझता है कि कान्सटेंटाइन ने साम्राज्य के सभी भागों पर न अपना सम्पूर्ण अधिकार त्याग दिया। तथापि यह धारणा होनोरियस की अधिक क्रान्तिकारी धारणा से संगत नहीं थी कि मूल रूप में सभी राजनीतिक एवं धार्मिक सत्ता के य तथा लौकिक शासक की शक्ति भी उससे ही उद्भूत है।

जान आफ सलिसबरी भी इसी मत का प्रतिपादक प्रतीत होता है क्योंकि वह यह प्रतिपादित करता है कि दोनों तलवारों पर आध्यात्मिक सत्ता का स्वामित्व है तथा उससे ही राजा अपनी तलवार प्राप्त करता है राजा धार्मिक सत्ता का मंत्री अथवा सेवक है तथा धार्मिक पद के उस भाग का प्रशासन करता है जो पुरोहित द्वारा करने के योग्य नहीं है। तथापि जॉन का यह वक्तव्य उसके ग्रन्थ में अकेला है तथा वह *किसी सीमा तक संदिग्ध है कि उसमें निहित सभी बातों पर बल देना उसे अभीष्ट था।*

बनार्ड द्वारा प्रकार के वाक्यांश जो जान आफ सलिसबरी के मन में वर्तमान हो सकते हैं इतने आकस्मिक एवं आनुषंगिक हैं कि हम उनकी इस प्रकार व्याख्या नहीं कर सकते कि उसका यह मत था तथा सेन्ट विक्टर के ह्यू के वाक्य इतने स्पष्ट हैं कि हम कोई निर्णय नहीं ले सकते। जहाँ तक हम जानते हैं कि बारहवीं शताब्दी में केवल एक लेखक है जिसका दो सत्ताओं का विवेचन इस दिशा में प्रवृत्त प्रतीत होता है तथा वह है ग्रेशियन के डेक्रेटम (D retum) पर लिखने वाला कैनोनिस्ट रयूफीनस। हम इसके वाक्यांशों का द्वितीय खंड में विस्तार से विवेचन कर चुके हैं तथा पुनः हम केवल यही कह सकते हैं कि वह ग्रेशियन के डेक्रेटम के इस वाक्यांश की व्याख्या करता प्रतीत होता है clavigero (i e petro) terreni simul et celestis imperii iura commisit *जिसका अर्थ वह यह लगाता है कि किसी सीमा तक पोप को धार्मिक एवं लौकिक* दोनों विषयों में ही अधिकार हैं उसके शब्द यह भी सुझाते प्रतीत होते हैं कि वह इसका अर्थ इससे अधिक कुछ नहीं समझता कि सम्राट के निर्वाचन की पुष्टि करना तथा यदि अपनी सत्ता का वे दुरुपयोग करें तो उसे और अन्य लौकिक शासकों को ठीक मार्ग पर लाना पोप के अधिकार में था।

होनोरियस सलिसबरी के जॉन तथा रयूफीनस के वाक्यांश महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि

व एक नए सिद्धान्त के प्रथम दशन को सूचित करती हैं एक सिद्धान्त जो कि चच के परम्परागत मत के विपरीत चच म सत्ता की एकता की धारणा को स्थापित कर दता। अगली पुस्तक म हमे तेरहवी शताब्दी म इस धारणा के इतिहास एव महत्त्व का विवेचन करना होगा। इसका कोई प्रमाण नही है कि दसवी तथा ग्यारहवी शताब्दी के किसी लेखक न इस धारणा को प्रस्तुत किया था बारहवी शताब्दी म यह होनोरियस तथा सभवत सलिस्बरी के जान एव रयूफीनस म उपलब्ध होती है किन्तु यह ध्यान रखने की बात है यह केवल उनम ही मिलती है।

सभवत यह सुझाया जा सके कि हम इसके साथ हैड्रियन चतुर्थ के फ्रेडरिक बारबरोसा को सम्बोधित पत्र की विचित्र घटना को जोडना चाहिए जिसमे उसका यह अभिप्राय निहित होने की शका की गई थी कि साम्राज्य पोप के अधीन एक जागीर है तथा सम्राट पोप के अधीन सामन्त है। यदि हम यह सोचें कि हैड्रियन चतुर्थ इस पर बल देना चाहता था तो निस्सदेह इसका महत्व पोप पक्ष की नीति के विषय मे होगा किन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि हैड्रियन ने ऐसे दावे को स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर दिया था अथवा इन शब्दों से इस प्रकार का अर्थ निकालने का स्पष्ट खण्डन किया था। किसी भी अर्थ मे सामन्ती प्रभुता का दावा धार्मिक सत्ता के लौकिक सत्ता की तुलना मे मौलिक श्रेष्ठता के दावे से पूर्णतया भिन्न वस्तु होता।

इस प्रकार लौकिक सत्ता के अधिकारो के धार्मिक सत्ता स उद्भूत एव उनके अधीन होन का सिद्धान्त जहाँ तक उसका बारहवी शताब्दी म अस्तित्व था केवल मात्र एक व्यक्तिगत सम्मति थी जिसे एक अथवा सभवत तीन महत्वपूर्ण लेखको ने व्यक्त किया था उसको चच म कोई अधिकृत रूप से स्वीकृत या सामान्य रूप से या व्यापक रूप स माने जाते हुए प्रदर्शित नही करना चाहिए। इसे किसी भी परिषद् या किसी भी पोप की सहमति नही मिली।

हमे अतत प्रश्न करना चाहिए कि जिन सिद्धान्तो का हम विवेचन कर रहे हैं ग्यारहवी तथा बारहवीं शताब्दी के वास्तविक सावजनिक जीवन मे उनका यथाथ रूप स कितना महत्त्वपूर्ण स्थान था। इस प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न करते समय हम ग्रेगोरी सप्तम के कार्यों एव सिद्धान्तो तथा बारहवी शताब्दी के उन लेखको के सिद्धान्तो म जिनका हम अभी विवेचन कर रहे थे सूक्ष्म विभेद रखना चाहिए।

ग्रेगोरी सप्तम के कार्यों न एक तूफान का जन्म देने मे योग दिया जो कि कम स कम हनरी चतुर्थ की मृत्यु तक चलता रहा तथा पोपो द्वारा इस सिद्धान्त को कई शताब्दियो तक प्रतिपादित किया जाता रहा कि धार्मिक अपराध के कारण लौकिक शासक को न केवल धर्म बहिष्कृत करने अपितु पद च्युत करने का भी अधिकार पोपो को है। तथापि इसका यह अभिप्राय नही है कि पदच्युत करने का भी अधिकार स्वीकार कर लिया गया था सभवत पदच्युत करने के अधिकार को गभीरतापूवक चुनौती नही दी गई थी किन्तु पदच्युत करने का अधिकार एक भिन्न वस्तु थी तथा कई व्यक्ति जैसे हेनरी चतुर्थ के काल म भी अस्वीकार करते थे। सत्य यह है कि किसी राजा या सम्राट के विरुद्ध अन्य कारणो से जब कभी असन्तोष या विद्रोह होता था उस दशा को छोडकर उसका सामान्यत कोई

महत्त्व नहीं था। हम इस मामले का अगला पुस्तक में जब हम तेरहवीं शताब्दी का वर्णन करेंगे अधिक पूर्णता से विवेचन करेंगे। जहाँ तक बारहवीं शताब्दी का प्रश्न है इस मामले का बहुत थोड़ा महत्त्व था।

होनोरियस सलिस्बरी के जान तथा रयूफीनस के सिद्धान्त जहाँ तक बारहवीं शताब्दी का प्रश्न है केवल कुछ व्यक्तियों के सिद्धान्त थे जीवन की वास्तविक दशाओं एवं तथ्यों से उनका कोई सम्बन्ध नहीं था उनके द्वारा स्वयं उनसे कोई व्यावहारिक निष्कर्ष नहीं निकाले गए तथा यह सोचने का भी कोई आधार नहीं है कि उस युग के विचारों में भी उनका कोई महत्त्वपूर्ण स्थान था। वास्तव में ठीक उसी समय इंग्लैंड तथा फ्रांस के महान् प्रशासकों के हाथों में राज्य की सत्ता एवं अधिकार सुगठित एवं विस्तृत हो रहे थे तथा यह विचार करना तर्कहीन है कि महान् राजा एवं मंत्री यह स्वीकार करते थे कि उनको प्राप्त अधिकार पोप द्वारा प्रदत्त हैं। सत्य यह है कि दोनों सत्ताओं के अधिकारों की ठीक सीमारेखा में स्पष्ट विभेद कर पाना अत्यन्त कठिन था किन्तु यह विभेद सामान्यतया किया जाता था तथा दैवी व्यवस्था का एक अंग समझा जाता था।

हमारे द्वारा वर्णित युग में दोनों सत्ताओं के सम्बन्धों के सामान्यतः स्वीकृत सिद्धान्तों की सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति टूरनाई के कैनोनिस्ट स्टीफेन (Canonist Stephen of Tournai) के शब्दों में मिलती है जो कि बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में लिख रहा था। एक राष्ट्र मंडल एवं एक राजा के अधीन दो जनताएँ दो जीवनचर्याएं, दो सत्ताएं तथा द्विविध कार्य क्षेत्र है। वह राष्ट्रमंडल चर्च है दो जनताएं चर्च की दो व्यवस्थाएं हैं अर्थात् पादरी एवं अयाजक वर्ग दो जीवनचर्याएं धार्मिक धार्मिक एवं लौकिक हैं। सत्ता पुरोहित वर्ग तथा राजा हैं द्विविध कार्यक्षेत्र दैवी एवं मानवीय कानून हैं। प्रत्येक को उसका देय दो तथा सभी वस्तुओं में सामञ्जस्य हो जाएगा।[4]

संदर्भ

1 कृ देख खण्ड 2।
2 Cf l
3 Cf ol
4 St ph n f To rn S mm De re
tı Int od ct

Texts of Authors Referred to in Volume IV

Abbe of Fleury Collectio Canonum — Migne Patrologia Latina vol 139
Adalbero Carm n —Migne Patrologia Latina vol 41
St Adalbert Vita —Mign Patrologia Latina vol 137
Alexander II Epistles—Migne Patrologia Latina vol 146
Annales Hildesheim nses —Monumenta Germaniae Histori a Scriptor s vol 3
Annales Paderboraenses—Monumenta Germanie Histori a Scripptores vol 3
Annales Romani—Monumenta Germaniae Historica Scriptores vol 5
Anonimus Haserensis — Monumenta G rmaniae Historica Scriptores vol 7
Anselm Continuator Si berti G mblacensis Monumenta Germaniae Historica vol 7
Anselm Historia D dicationis Ecclesiae S Remigii —Migne Patrologia Latina vol 12
Anselm of Lucca Liber contra Wibertum — Monumenta Germaniae Historica Libelli De Lite vol 1
Arnulf Gesta Archiepiscoporum M diolanensium —Monumenta Germaniae Historica, Scriptores, vol 8
Atto of Vercelli De Pressuris Ecclesiasticis —Migne Patrologia Latina vol 137
St Bernard Vita —Migne Patrologia Latina vol 185
De Consideratione —Migne Patrologia Latina vol 182
Epistles—Migne Patrologia Latina vol 182
Bernard of Constance Epistola in Bernald Libellus II — Monumenta Germaniae Historica Libelli De Lite vol 2
Bernard of Constance Liber Canonum contra Heinricum Quartum Monumenta Germaniae Historica Libelli D Lite vol 1
B rnald Libelli — Monumenta Germaniae Historica Libelli De Lite vol 2
B rthhold, Annales — Monumenta Germaniae Historica Scriptores vol 5
Bonizo Liber ad Amicum Monumenta Germaniae Histori a Libelli De Lite vol 1

Bruno De B llo Saxoni o — Monumenta Germaniae Historica Scri ptores vol 5
Bruno of Segni Ep stola Monumenta Germ niae Historica Libelli De Lite vol 2
Calixtus II Epi tl M gne Patrol gia L ti vol 163
Casuum Sancti Galli ontinuator —Monumenta Germaniae Historica S riptor s vol 2
Cl ment II Epistles—Migne Patrologia Latina vol 14
Codex Udali i in Monumenta Bam b rgensia ed P Jaff
Concordia B n v ntanum in J M Wat eri h Po tifi orum Romano rum Vitae vol 2
Con titutiones — Monum nta Ger maniae Histori a Legum sect iv vol 1
Continuator Reginonis — Monumenta Germaniae Historica Scriptores vol 1
Coun ils—M n i Concil a
De Ordinando Pontifice Monumenta Germaniae Historica Libelli De Lite vol 1
De Unitate Ecclesiae Conservan la —Monumenta Germaniae Historica Libelli De Lite ol 2
Deusdedit Collectior Canonum ed V W von Glanvell 1905
Libellus contra invasores et simnoniacos —Monumenta Germaniae Historica Libelli De Lite vol 2
Dicta cuiusdam de discordia Papae et Regis —Monumenta Germaniae Histori a *Libelli De Lite* vol 1
Disputatio vel D fensio Paschalis Monumenta Germaniae Historica L b lli De Lit vol 2
Eadm r Histori i Novorum Rolls Series
Ekkehard Chr ni o —Monumenta Germania Histori a S riptores vol 6
Fulb rt of Chartr s Epistle —Migne Patrologia Latina ol 141
Gebhardt of Salzb ur Epistola Monumenta Germaniae Historica Libelli D Lite vol 1
Gerbert Epistl s—ed J Ha et 1889
G rl oh of Rei hersb r —Mon menta German *Hist ri a Libelli D* Lite vol 3
G sta di Federi o I ed Monaci
Godfrey of Vendome Lib lli—Monumenta Germaniae Histori a Libelli De Lite vol 2
Gr gory V Epi tl s—Mign Patrolo ia Latina vol 137
Gregory VII Regi t um ed Jaff Bibliotheca Rerum Germanicarum vol 2

Gregory of Catino Orthodoxa Defensio Imperialis — Monumenta Germaniae Histori a Libelli De Lite vol ?
Gunther Ligurinus —ed Dumge
Hatto of Maintz Epistola - Mansi *Concilia* vol 18 A p 204
Historia Pontificalis - Monumenta Germani e Historica Scriptores vol _0
Honorius of Augusburg Summa Gloria Monumenta Germaniae Historica Libelli D Lite vol 3
Hugh of Fleurv Tractatus de Regia Potestate et Sacerdotali Dignitate Monumenta Germaniae Historica Libelli de Lit vol ?
Hu h of St Victor D Sa ramenti — *Migne Patrolo ia Latina* vol 176
Hugo Cantor Hi toria Rolls Series
Hugo M tellus Certam n Papae et Regis — Monum nta Germaniae Historica Libelli De Lite vol 3
Humbert of Silva Candida Adversus Simoniocos —Monumenta Germaniae Historica Libelli D Lite vol 1
Hunold Carmen de Anulo et Baculo — *Monumenta Germaniae Historica* Libelli De ite vol 3
Ivo of Chartr s Epistolae — Monumenta Germaniae Historica Libelli De Lite vol 2
John XIII Epistles — Migne Patrologia Latina vol 135
John of Salisbury Policraticus —ed C C I Webb 1909
Lambert of Herself Annales —Monumenta Germaniae Historica Scriptores vol 5
Lanfrance Vita —Migne Patrologia Latina vol 150
Leo IX Epistles—Migne Patrologia Latina vol 143
—— Vita —Migne Patrologia Latina vol 143
St Lietbert Vita —Mign Patrolo ia Latina vol 146
uitprand of Cremona D Pebus C stis Otoonis —Monum nta Germaniae Historica S riptores vol 3
Manegold Ad Gebehardum Monum nta G rmaniae *Historica* Libelli De Lit ol 1
Monum nta Bamb rgensi — ed I Jaff Bibliotheca Rerum Germani arum vol 5
Monum nta Corbeiensia —ed P Jaff Bibliotheca Rerum G rmanicarum vol 1
Narratio d election Lothari in R g m Romanorum — Monum nta G rmaniae H stori a S riptore vol 12
Nicholas II Epistles — Monum nta M gne Patrologia Lati a vol 143
Otto of Freising Gesta Friderici — Monumenta G rmaniae Historica

Scriptores vol 20
Paschal II Epistle — Monumenta Moguntina P Jaffe Bibliotheca Rerum Germanicaru vol 3
Peter Crassus Defensio H inrici Regis —Monumenta Germaniae Histo rica Libelli De Lite vol 1
Peter Damian Disceptatio Synodalis —Monumenta Germaniae Histori ca Libelli De Lite vol 1
— — Epistles and Sermons—Migne Patrologia Latina vol 144
— — Liber Gratissimus —Monumenda Germaniae Historica Libelli De Lite ol 1
— — Opuscula —Migne Patrologia Latina v l 145
Placidus of Nonantula Liber de Honore Ecclesiae —Monumenta Ger maniae Historica Libelli De Lite, vol 2
Rangerius Liber de Anulo et Baculo, Monumenta Germaniae Historica Libelli De Lite vol
Ratherius of Verona Praeloquiorum Migne, Patrologia Latina vol 136
Regesta Pontifi um —ed Jaff Wattenbach
Rodolphus Glaber Historiae - M gne Patro g a Latina vol 14
Rufinus Summa Decretorum ed H Singer
Siegfried of Maintz Epistles — Migne Patrologia Latina vol 146 and Monumenta Bambergensia Jaffe Bibliotheca Rerum Germani carum vol 5
Sigebert of Gembloux Chronicon —Monumenta Germaniae Historica Scriptores vol 6
— — Leodicensium Epistola adversus Paschalem Papam —Monumenta Germaniae Historica Libelli De Lite vol 2
Silvester II De Informatione Episcoporum Migne Patrologia Latina vol *139*
Stephen of Tournai Summa Decretorum —ed J F von Schulte
Suger Vita Ludovi i VI —Monumenta Germaniae Histori a Scripto res vol 26
Thietmar of M rseburg Chroni on —Monumenta Germaniae Historica *S riptores vol 3*
Tractatus Eboracenses —Monumenta Germaniae Historica L belli De ite ol 3
Tractatus de Investitura Episcopali Monumenta Germaniae Historica Libelli De Lite vol 2
St Udalcicus Vita —Migne Patrologia Latina vol 135
Urban II Epistles—Migne Patrologia Latina vol 151
Wenrich of Trier Epistola —Monumenta Germaniae Historica Libell De Lite vol 1

Wido of Ferrara De Seismate Hildebrandi —Monumenta Germaniae Historica Libelli De Lite vol 1

Wido of Osnaburg Liber de Controversia Hildebrandi et Heinricci Monumenta Germaniae Historica *Libelli* De Lite vol 1

William the Conqueror *Epistle—in Gregory VII* Epistolae Extra Vigantes Migne Patrologia Latina vol 148

William of Malmesbury Gesta Rolls Series

Wippo Vita Chuonradi —Migne Patrologia Latina vol 142

Index Of Names Referred To In Volume IV